अध्याय २०

श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा सनातन गोस्वामी को परम सत्य के विज्ञान की शिक्षा

भक्तिविनोद ठाकुर ने अपने *अमृत-प्रवाह-भाष्य* में इस अध्याय का सारांश इस प्रकार दिया है : जब श्रील सनातन गोस्वामी नवाब हुसेन शाह द्वारा बन्दी बना लिये गये थे, तब उन्हें रूप गोस्वामी से समाचार मिला कि श्री चैतन्य महाप्रभु मथुरा चले गये हैं। तत्पश्चात् सनातन गोस्वामी ने जेल-अधीक्षक को मीठी वाणी में अनुनय-विनय करके तथा घूस देकर प्रसन्न किया। जेलर को सात हजार स्वर्ण मुद्राएँ देकर सनातन गोस्वामी रिहा हो गये। इसके बाद उन्होंने गंगा नदी पार की और भाग गये। उनका एक सेवक, जिसका नाम ईशान था, उनके साथ रहा; उसके पास आठ स्वर्ण मुद्राएँ थीं। सनातन गोस्वामी तथा उनके सेवक ने बनारस जाते हुए मार्ग में एक छोटे से होटल में रात बिताई। होटल वाले को पता चल गया था कि उनके पास आठ स्वर्ण मुद्राएँ हैं; इसलिए उसने इन्हें मारकर यह धन ले लेना चाहा। इस प्रकार की योजनाएँ बनाकर उसने आदर के साथ मेहमानों जैसा स्वागत किया। सनातन गोस्वामी ने अपने सेवक से पूछा कि उसके पास कितना धन था और उससे सात स्वर्ण-मुद्राएं लेकर उन्होंने होटल वाले को दे दिया। फलतः उस होटल वाले ने उन्हें पर्वतीय प्रदेश को पार करके वाराणसी की ओर तक पहुँचने में सहायता की। रास्ते में सनातन गोस्वामी अपने बहनोई श्रीकान्त से हाजीपुर में मिले, जिसने उनके कष्टों की कहानी सुनकर उनकी सहायता की। इस तरह सनातन गोस्वामी अन्ततः वाराणसी पहुँच गये और चन्द्रशेखर के द्वार पर जा खड़े हुए। चैतन्य महाप्रभु

ने उन्हें भीतर बुलाया और वस्त्र बदलने के लिए कहा, जिससे वे भद्र व्यक्ति लग सकें। वे तपन मिश्र का पुराना वस्त्र पहनने लगे। बाद में उन्होंने अपना कीमती कम्बल देकर एक फटी रजाई ले ली। इस समय चैतन्य महाप्रभु उनसे अत्यन्त प्रसन्न हुए और सनातन गोस्वामी ने महाप्रभु से परम सत्य विषयक ज्ञान प्राप्त किया।

सर्वप्रथम उन्होंने जीवों की वैधानिक स्थिति पर विचार-विमर्श किया और श्री चैतन्य महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी को बतलाया कि किस तरह जीव भगवान् कृष्ण की शक्तियों में से एक है। इसके बाद महाप्रभु ने भक्ति की विधि बतलाई। परम सत्य श्रीकृष्ण के विषय में व्याख्या करते हुए महाप्रभु ने ब्रह्म, परमात्मा तथा भगवान् का विश्लेषण करने के साथ ही *स्वयंरूप, तदेकात्म* तथा *आवेश* नामक भगवान् के विस्तारों का विवेचन *वैभव* तथा *प्राभव* जैसी शाखाओं के अन्तर्गत किया। इस तरह महाप्रभु ने पूर्ण पुरुषोत्तम परमेश्वर के अनेक स्वरूपों का वर्णन किया। उन्होंने इस जगत् में भगवान् के अवतारों—*पुरुष अवतार, मन्वन्तर अवतार, गुणावतार* तथा *शक्त्यावेश अवतार* का भी वर्णन किया। महाप्रभु ने कृष्ण की विभिन्न अवस्थाओं—बाल्य, पौगण्ड आदि—तथा इन अवस्थाओं की विभिन्न लीलाओं का भी वर्णन किया। उन्होंने यह भी बतलाया कि किस तरह युवावस्था प्राप्त होने पर कृष्ण को स्थायी स्वरूप प्राप्त हुआ। इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी को सारी बातें विस्तार से बतलाईं।

वन्देऽनन्ताद्भुतैश्वर्यं श्री-चैतन्य-महाप्रभुम् ।
नीचोऽपि यत्प्रसादाज्याद्भक्ति-शास्त्र-प्रवर्तकः ॥ १ ॥

वन्देऽनन्ताद्भुतैश्वर्यं श्री-चैतन्य-महाप्रभुम् ।
नीचोऽपि यत्प्रसादात्स्याद्भक्ति-शास्त्र-प्रवर्तकः ॥ १ ॥

वन्दे—मैं सादर नमस्कार करता हूँ; **अनन्त**—अनन्त; **अद्भुत**—अद्भुत; **ऐश्वर्यम्**—ऐश्वर्य युक्त; **श्री-चैतन्य-महाप्रभुम्**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **नीचः अपि**—एक नीच व्यक्ति भी; **यत्-प्रसादात्**—जिनकी कृपा से; **स्यात्**—हो जाए; **भक्ति-शास्त्र**—भक्ति शास्त्र का; **प्रवर्तकः**—प्रचारक।

अनुवाद

मैं उन श्री चैतन्य महाप्रभु को सादर नमस्कार करता हूँ, जिनके पास अनन्त अद्भुत ऐश्वर्य है। उनकी कृपा से नीच से नीच व्यक्ति भी भक्ति के विज्ञान का प्रसार कर सकता है।

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥२॥

जय जय श्री-चैतन्य जय नित्यानन्द ।
जयाद्वैत-चन्द्र जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ २॥

जय जय—जय हो; **श्री-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय**—जय हो; **अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत आचार्य की; **जय**—जय हो; **गौर-भक्त-वृन्द**—श्री चैतन्य महाप्रभु के सभी भक्तों की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! श्री नित्यानन्द प्रभु की जय हो! अद्वैत आचार्य की जय हो तथा श्री चैतन्य महाप्रभु के सारे भक्तों की जय हो!

एथा गौड़े सनातन आछे बन्दि-शाले ।
श्री-रूप-गोसाञीर पत्री आइल हेन-काले ॥३॥

एथा गौड़े सनातन आछे बन्दि-शाले ।
श्री-रूप-गोसाञीर पत्री आइल हेन-काले ॥ ३॥

एथा—यहाँ; **गौड़े**—बंगाल में; **सनातन**—सनातन गोस्वामी; **आछे**—थे; **बन्दि-शाले**—जेल में; **श्री-रूप-गोसाञीर**—श्रील रूप गोस्वामी का; **पत्री**—पत्र; **आइल**—आया; **हेन-काले**—उस समय।

अनुवाद

जब सनातन गोस्वामी बंगाल में बन्दी थे, तब उन्हें श्रील रूप गोस्वामी का पत्र मिला।

तात्पर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर हमें बताते हैं कि सनातन गोस्वामी के नाम रूप गोस्वामी के इस पत्र का उल्लेख *उद्भट-चन्द्रिका* के भाष्यकार ने किया है।

श्रील रूप गोस्वामी ने बाकला से सनातन गोस्वामी को एक चिट्ठी लिखकर भेजी थी। इसमें यह संकेत था कि श्री चैतन्य महाप्रभु मथुरा आ रहे हैं। इसमें लिखा था :

यदुपतेः क्व गता मथुरापुरी
रघुपतेः क्व गतोत्तरकोशला
इति विचिन्त्य कुरुष्व मनः स्थिरं
न सदिदं जगदित्यवधारय॥

"यदुपति की मथुरा पुरी कहाँ गई? रघुपति की उत्तरी कोशला कहाँ गई? यह सोचकर कि यह ब्रह्माण्ड शाश्वत नहीं है,' तुम अपने मन को स्थिर करो।"

পত্রী পাঞা সনাতন আনন্দিত হৈলা ।
যবন-রক্ষক-পাশ কহিতে লাগিলা ॥৪॥

পত্রী পাঞা সনাতন আনন্দিত হৈলা ।
য়বন-রক্ষক-পাশ কহিতে লাগিলা ॥৪॥

पत्री पाञा—पत्र पाकर; **सनातन**—सनातन गोस्वामी; **आनन्दित हैला**—प्रसन्न हो गये; **य्रवन**—मांसाहारी; **रक्षक**—जेल अधीक्षक के; **पाश**—पास; **कहिते लागिला**—कहने लगे।

अनुवाद

जब सनातन गोस्वामी को रूप गोस्वामी की यह चिट्ठी मिली, तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। वे तुरन्त मांसाहारी (यवन) जेल-अधीक्षक के पास गये और उससे इस तरह बोले।

"तुमि एक जिन्दा-पीर महा-भाग्यवान् ।
केताब-कोराण-शास्त्रे आछे तोमार ज्ञान ॥५॥

"तुमि एक जिन्दा-पीर महा-भाग्यवान् ।
केताब-कोराण-शास्त्रे आछे तोमार ज्ञान ॥५॥

तुमि—आप; **एक जिन्दा-पीर**—एक सन्त पुरुष; **महा-भाग्यवान्**—अत्यन्त भाग्यशाली; **केताब**—शास्त्र; **कोराण**—कुरान; **शास्त्रे**—शास्त्र में; **आछे**—है; **तोमार**—तुम्हारा; **ज्ञान**—ज्ञान।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने मुस्लिम जेलर से कहा—"हे महोदय, आप सन्त पुरुष हैं और बड़े ही भाग्यशाली हैं। आप कुरान तथा अन्य शास्त्रों के ज्ञान से पूर्णतया अवगत हैं।

एक बन्दी छाड़े यदि निज-धर्म देखिया ।
संसार हइते तारे मुक्त करेन गोसाञि ॥ ६ ॥

एक बन्दी छाड़े यदि निज-धर्म देखिया ।
संसार हइते तारे मुक्त करेन गोसाञि ॥ ६ ॥

एक बन्दी—एक बन्दी; **छाड़े**—मुक्त करता है; **यदि**—यदि; **निज-धर्म**—अपने निजी धर्म को; **देखिया**—देखते हुए; **संसार हइते**—संसार के बन्धन से; **तारे**—उसको; **मुक्त करेन**—मुक्त करते हैं; **गोसाञि**—भगवान्।

अनुवाद

"यदि कोई व्यक्ति बद्धजीव या बन्दी व्यक्ति को धार्मिक नियमों के अनुसार मुक्त कर देता है, तो भगवान् उसे भी भवबन्धन से मुक्त कर देते हैं।"

तात्पर्य

इस कथन से प्रतीत होता है कि सनातन गोस्वामी, जो पहले नवाब के मन्त्री थे, उस मुसलमान अधीक्षक को धोखा देने का प्रयास कर रहे थे। वह जेल-अधीक्षक या तो सामान्य शिक्षा-प्राप्त था या बिल्कुल ही निरक्षर था। उसके पास निश्चित रूप से आध्यात्मिक ज्ञान में उन्नत होने की आशा नहीं की जाती थी। किन्तु उसे प्रसन्न करने के लिए ही सनातन गोस्वामी ने उसे शास्त्रों का पण्डित कहकर उसकी प्रशंसा की थी। वह जेल अधीक्षक इससे मना नहीं कर सका कि वह पण्डित था, क्योंकि जब किसी को उच्च पद प्रदान किया जाता है, तब वह अपने आपको उस पद के योग्य समझने लगता है। सनातन गोस्वामी आध्यात्मिक कर्म के प्रभावों की ठीक व्याख्या कर रहे थे और वह जेल-अधीक्षक उनके कथन को उनकी जेल-रिहाई से जोड़ रहा था।

ऐसे असंख्य बद्धजीव हैं, जो इन्द्रियतृप्ति के पाश में माया द्वारा बन्दी बनकर संसार में सड़ रहे हैं। जीव माया के पाश द्वारा इतना मोहित हो जाता

है कि सुअर भी बद्ध अवस्था में अपने आपको तुष्ट मानता है। माया द्वारा दो प्रकार की आच्छादक शक्तियाँ प्रदर्शित की जाती हैं। पहली है *प्रक्षेपात्मिका* तथा दूसरी है *आवरणात्मिका।* जो व्यक्ति भवबन्धन से छूटने के लिए दृढ़ संकल्प लेता है, तब उसे प्रक्षेपात्मिका शक्ति अर्थात् भटकाने वाली माया बद्ध जीवन में बने रहने के लिए और इन्द्रियतृप्ति द्वारा सन्तुष्ट रहने के लिए बाध्य करती है। दूसरी शक्ति, आवरणात्मिका द्वारा बद्धजीव सुअर के शरीर में या मल के कीड़े के रूप में सड़ते रहकर भी सन्तुष्ट रहता है। बद्धजीव को भवबन्धन से छुड़ा पाना बहुत कठिन होता है, क्योंकि माया का पाश बहुत प्रबल होता है। यहाँ तक कि जब स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् अवतरित होकर बद्धजीव को उनकी शरण में आने का आदेश देकर उसका उद्धार करना चाहते हैं, तब भी बद्धजीव इसके लिए तैयार नहीं होता। इसलिए श्रील सनातन गोस्वामी ने कहा है कि, "यदि कोई व्यक्ति अन्य व्यक्ति को माया के बन्धन से छुड़ाने में सहायक होता है, तो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तुरन्त ही उसे मान्यता प्रदान करते हैं।" *भगवद्गीता* (१८.६९) में भगवान् कृष्ण ने कहा है :

न च तस्मान् मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि॥

यदि भगवान् की कोई सबसे बड़ी सेवा की जा सकती है, तो वह है बद्धजीव के हृदय में भक्ति का संचार करना, जिससे वह बद्ध जीवन से छूट सके। श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने कहा है कि वैष्णव को उसके प्रचार कार्य द्वारा पहचाना जाता है। प्रचार कार्य का अर्थ है बद्धजीव को उसकी शाश्वत स्थिति के प्रति अवगत करना, जिसे यहाँ *निजधर्म* कहा गया है। जीव की शाश्वत स्थिति है भगवान् की सेवा करना। इसलिए भवबन्धन से छूटने के लिए सहायता करने का अर्थ है—जीव के इस सुप्त ज्ञान को जाग्रत करना है कि वह कृष्ण का सनातन सेवक है। *जीवेर 'स्वरूप' हय—कृष्णेर 'नित्यदास'।* महाप्रभु सनातन गोस्वामी को आगे इसकी और व्याख्या करेंगे।

পূর্বে আমি তোমার করিয়াছি উপকার ।
তুমি আমা ছাড়ি' কর প্রত্যুপকার ॥৭॥

पूर्वे आमि तोमार करियाछि उपकार ।
तुमि आमा छाड़ि' कर प्रत्युपकार ॥ ७॥

पूर्वे—पहले समय में; **आमि**—मैंने; **तोमार**—तुम्हारा; **करियाछि**—किया है; **उपकार**—उपकार; **तुमि**—तुम; **आमा**—मुझे; **छाड़ि'**—छोड़कर; **कर**—करो; **प्रति-उपकार**—प्रति उपकार।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने आगे कहा, "इसके पूर्व मैंने आपके लिए बहुत कुछ किया है। अब मैं संकट में हूँ। कृपया मुझे बन्धनमुक्त करके उस उपकार का बदला चुकायें।

पाँच सहस्र मुद्रा तुमि कर अङ्गीकार ।
पुण्य, अर्थ,—दुइ लाभ हइबे तोमार'' ॥ ८॥
पाँच सहस्र मुद्रा तुमि कर अङ्गीकार ।
पुण्य, अर्थ,—दुइ लाभ हइबे तोमार" ॥ ८॥

पाँच सहस्र—पाँच हजार; **मुद्रा**—मुद्राएँ; **तुमि**—तुम; **कर अङ्गीकार**—स्वीकार करो; **पुण्य**—पुण्यकर्म; **अर्थ**—भौतिक लाभ; **दुइ लाभ**—दो प्रकार के कर्म; **ह-इबे**—होंगें; **तोमार**—तुम्हारे।

अनुवाद

"ये रही पाँच हजार स्वर्ण मुद्राएँ। कृपया इन्हें स्वीकार करें। मुझे मुक्त करने से आपको पुण्य मिलेगा और भौतिक लाभ भी होगा। इस तरह आपको एक साथ दोहरा लाभ होगा।"

तबे सेइ यवन कहे,—''शुन, महाशय ।
तोमारे छाड़िब, किन्तु करि राज-भय'' ॥ ९॥
तबे सेइ यवन कहे,—"शुन, महाशय ।
तोमारे छाड़िब, किन्तु करि राज-भय" ॥ ९॥

तबे—इसके बाद; **सेइ**—वह; **यवन**—यवन; **कहे**—कहने लगा; **शुन**—सुनो; **महाशय**—हे महोदय; **तोमारे**—तुम्हें; **छाड़िब**—मैं छोड़ दूँ; **किन्तु**—किन्तु; **करि राज-भय**—मैं सरकार के भय से डरता हूँ।

अनुवाद

इस प्रकार सनातन गोस्वामी ने जेल-अधीक्षक को विश्वास दिलाया। उसने उत्तर दिया, "हे महोदय, कृपया मेरी बात सुनें। मैं आपको छोड़ने के लिए तैयार हूँ, किन्तु मुझे सरकार का डर लग रहा है।"

सनातन कहे,—"तुमि ना कर राज-भय ।
दक्षिण गियाछे यदि लेउटि' आओयय ॥ १०॥
ताँहारे कहिओ—सेइ बाह्य-कृत्ये गेल ।
गङ्गार निकट गङ्गा देखि' झाँप दिल ॥ ११॥

सनातन कहे,—"तुमि ना कर राज-भय ।
दक्षिण गियाछे यदि लेउटि' आओयय ॥ १०॥
ताँहारे कहिओ—सेइ बाह्य-कृत्ये गेल ।
गङ्गार निकट गङ्गा देखि' झाँप दिल ॥ ११॥

सनातन कहे—सनातन ने उत्तर दिया; **तुमि**—तुम; **ना**—न; **कर**—करो; **राज-भय**—सरकार का भय; **दक्षिण**—दक्षिण को; **गियाछे**—गया है; **यदि**—यदि; **लेउटि'**—लौटकर; **आओयय**—आता है; **ताँहारे**—उसको; **कहिओ**—आप कहना; **सेइ**—वह; **बाह्य-कृत्ये**—शौच करने; **गेल**—गया; **गङ्गार निकट**—गंगा तट के पास; **गङ्गा देखि'**—गंगा को देखकर; **झाँप दिल**—वह उसमें कूद गया।

अनुवाद

सनातन ने कहा, "कोई भय नहीं है। नवाब दक्षिण गया हुआ है। यदि वह लौटकर आता है, तो उससे कहना कि सनातन गंगा नदी के तट पर शौच के लिए गया और गंगा को देखते ही वह उसमें कूद पड़ा।

अनेक देखिल, तार लाग्गा पाइल ।
दाड़ुका-सहित डुबि काहाँ वहि' गेल ॥ १२॥

अनेक देखिल, तार लाग् ना पाइल ।
दाड़ुका-सहित डुबि काहाँ वहि' गेल ॥ १२॥

अनेक—लम्बे समय तक; **देखिल**—मैंने ढूंढा; **तार**—उसकी; **लाग्**—खबर; **ना पाइल**—नहीं मिली; **दाड़ुका-सहित**—बेड़ियों सहित; **डुबि**—डूबकर; **काहाँ**—कहीं; **वहि' गेल**—बह गया।

अनुवाद

"उससे कहना कि, 'मैं काफी देर तक उसे ढूँढता रहा, किन्तु उसका तनिक भी पता न चला। वह अपनी हथकड़ियों समेत कूद पड़ा, अतएव वह डूब गया और लहरों में बह गया।'

কিছু ভয় নাহি, আমি এ-দেশে না রব ।
দরবেশ হঞা আমি মক্কাকে যাইব'' ॥১৩॥

কিছু ভয় নাহি, আমি এ-দেশে না রব ।
দরবেশ হঞা আমি মক্কাকে য়াইব" ॥১৩॥

কিছু—कोई; **ভয়**—भय; **নাহি**—नहीं; **আমি**—मैं; **এ-দেশে**—इस देश में; **না রব**—नहीं रहूँगा; **দরবেশ হঞা**—साधु होकर; **আমি**—मैं; **মক্কাকে য়াইব**—मक्का चला जाऊँगा।

अनुवाद

"आपको डरने की कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि मैं इस देश में नहीं रहूँगा। मैं साधु बनकर पवित्र नगरी मक्का जाऊँगा।"

তথাপি যবন-মন প্রসন্ন না দেখিলা ।
সাত-হাজার মুদ্রা তার আগে রাশি কৈলা ॥১৪॥

তথাপি য়বন-মন প্রসন্ন না দেখিলা ।
সাত-হাজার মুদ্রা তার আগে রাশি কৈলা ॥১৪॥

তথাপি—फिर भी; **য়বন-মন**—यवन का मन; **প্রসন্ন**—सन्तुष्ट; **না**—नहीं; **দেখিলা**—देखकर; **সাত-হাজার**—सात हजार; **মুদ্রা**—स्वर्ण मुद्राएँ; **তার**—उसके; **আগে**—आगे; **রাশি কৈলা**—रख दी।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने देखा कि उस मांसभक्षक का मन अभी भी प्रसन्न नहीं था। तब उन्होंने उसके आगे सात हजार स्वर्ण मुद्राओं की राशि लगा दी।

লোভ হইল যবনের মুদ্রা দেখিয়া ।
রাত্রে গঙ্গা-পার কৈল দাড়ুকা কাটিয়া ॥১৫॥

लोभ हइल ग्रवनेर मुद्रा देखिया ।
रात्रे गङ्गा-पार कैल दाडुका काटिया ॥ १५ ॥

लोभ हइल—धन का लालच हुआ; **ग्रवनेर**—यवन को; **मुद्रा देखिया**—स्वर्ण मुद्राएँ देखकर; **रात्रे**—रात को; **गङ्गा-पार कैल**—वह उन्हें गंगा पार ले गया; **दाडुका**—बेड़ियाँ; **काटिया**—काटकर।

अनुवाद

जब मांसभक्षक ने मुद्राएँ देखीं, तो वह उनके प्रति आकृष्ट हो गया। वह सहमत हो गया और उस रात उसने सनातन की बेड़ियाँ काट दीं और उन्हें गंगा पार करने दिया।

गड़-द्वार-पथ छाड़िला, नारे ताहाँ ग्राइते ।
रात्रि-दिन चलि' आइला पातड़ा-पर्वते ॥ १६ ॥

गड़-द्वार-पथ छाड़िला, नारे ताहाँ ग्राइते ।
रात्रि-दिन चलि' आइला पातड़ा-पर्वते ॥ १६ ॥

गड़-द्वार-पथ—किले का मार्ग; **छाड़िला**—छोड़ दिया; **नारे**—न सके; **ताहाँ**—वहाँ; **ग्राइते**—जाने के लिए; **रात्रि-दिन**—रात दिन; **चलि'**—चलते रहकर; **आइला**—आ पहुँचे; **पातड़ा-पर्वते**—पातड़ा पहाड़ी इलाके में।

अनुवाद

इस तरह सनातन गोस्वामी छूट तो गये, किन्तु वे किले के रास्ते से होकर नहीं जा पाये। वे रात-दिन चलकर अन्त में पातड़ा पहाड़ी-क्षेत्र में पहुँचे।

तथा एक भौमिक हय, तार ठाञि गेला ।
'पर्वत पार कर आमा'—विनति करिला ॥ १७ ॥

तथा एक भौमिक हय, तार ठाञि गेला ।
'पर्वत पार कर आमा'—विनति करिला ॥ १७ ॥

तथा—वहाँ; **एक भौमिक**—एक जमींदार; **हय**—है; **तार ठाञि**—उसके पास; **गेला**—गये; **पर्वत**—पहाड़ी इलाका; **पार कर**—पार कराओ; **आमा**—मुझे; **विनति**—प्रार्थना; **करिला**—उन्होंने की।

अनुवाद

पातड़ा पहुँचकर वे एक जमींदार से मिले और उन्होंने उससे विनती की कि वह उन्हें इस पहाड़ी इलाके को पार करा दे।

সেই ভূঞার সঙ্গে হয় হাত-গণিতা ।
ভূঞার কাণে কহে সেই জানি' এই কথা ॥১৮॥

सेइ भूञार सङ्गे हय हात-गणिता ।
भूञार काणे कहे सेइ जानि' एइ कथा ॥१८॥

सेइ भूञार—उस जमींदार; **सङ्गे**—के साथ; **हय**—रहता था; **हात-गणिता**—हस्त रेखा का एक ज्योतिषी; **भूञार**—जमींदार के; **काणे**—कान में; **कहे**—कही; **सेइ**—उस व्यक्ति; **जानि'**—जानकर; **एइ कथा**—यह कथन।

अनुवाद

उस समय उस जमींदार के यहाँ एक ज्योतिषी टिका हुआ था। सनातन के बारे में जानकर जमींदार के कान में वह इस प्रकार फुसफुसाया।

'ইঁহার ঠাঞি সুবর্ণের অষ্ট মোহর হয়' ।
শুনি' আনন্দিত ভূঞা সনাতনে কয় ॥১৯॥

'इँहार ठाञि सुवर्णेर अष्ट मोहर हय' ।
शुनि' आनन्दित भूञा सनातने कय ॥१९॥

इँहार ठाञि—इस व्यक्ति के पास; **सुवर्णेर**—सोने की; **अष्ट**—आठ; **मोहर**—मुद्राएँ; **हय**—हैं; **शुनि'**—यह सुनकर; **आनन्दित**—प्रसन्न हो गया; **भूञा**—जमींदार; **सनातने**—सनातन को; **कय**—कहा।

अनुवाद

उस ज्योतिषी ने कहा, "इस व्यक्ति सनातन के पास आठ स्वर्ण मुद्राएँ (मोहरें) हैं।" यह सुनकर वह जमींदार बहुत प्रसन्न हुआ और सनातन से इस प्रकार बोला।

''রাত্র্যে পর্বত পার করিব নিজ-লোক দিয়া ।
ভোজন করহ তুমি রন্ধন করিয়া'' ॥২০॥

"रात्रे पर्वत पार करिब निज-लोक दिया ।
भोजन करह तुमि रन्धन करिया" ॥ २० ॥

रात्रे—रात को; **पर्वत**—पर्वत; **पार करिब**—मैं पार करूँगा; **निज-लोक दिया**—मेरे लोगों के साथ; **भोजन करह**—अपना भोजन करें; **तुमि**—आप; **रन्धन करिया**—पकाकर।

अनुवाद

जमींदार ने कहा, "मैं मेरे लोगों के साथ आपको रात में पर्वत के उस पार भिजवा दूँगा। अभी आप अपना भोजन पकायें और खायें।"

এত বলি' অন্ন দিল করিয়া সম্মান ।
সনাতন আসি' তবে কৈল নদী-স্নান ॥ ২১ ॥
এত বলি' অন্ন দিল করিয়া সম্মান ।
সনাতন আসি' তবে কৈল নদী-স্নান ॥ ২১ ॥

এত বলি'—यह कहकर; **অন্ন দিল**—अन्न दिया; **করিয়া সম্মান**—उनका सम्मान करके; **সনাতন**—सनातन गोस्वामी; **আসি'**—आकर; **তবে**—तब; **কৈল**—किया; **নদী-স্নান**—नदी में स्नान।

अनुवाद

यह कहकर जमींदार ने सनातन गोस्वामी को पकाने के लिए अन्न दिया। तब सनातन नदी के किनारे गये और उन्होंने वहाँ स्नान किया।

দুই উপবাসে কৈলা রন্ধন-ভোজনে ।
রাজ-মন্ত্রী সনাতন বিচারিলা মনে ॥ ২২ ॥
দুই উপবাসে কৈলা রন্ধন-ভোজনে ।
রাজ-মন্ত্রী সনাতন বিচারিলা মনে ॥ ২২ ॥

দুই উপবাসে—दो दिन उपवास करके; **কৈলা**—किया; **রন্ধন-ভোজনে**—भोजन पकाकर और खाकर; **রাজ-মন্ত্রী**—नवाब के पूर्व मंत्री; **সনাতন**—सनातन ने; **বিচারিলা**—विचार किया; **মনে**—मन में।

अनुवाद

चूँकि सनातन दो दिनों से उपवास कर रहे थे, अतः उन्होंने भोजन

पकाया और खाया। किन्तु नवाब का मन्त्री रह चुकने के कारण वे स्थिति पर विचार करने लगे।

'এই ভূঞা কেনে মোরে সম্মান করিল?' ।
এত চিন্তি' সনাতন ঈশানে পুছিল ॥২৩॥

'এइ भूञा केने मोरे सम्मान करिल?' ।
एत चिन्ति' सनातन ईशाने पुछिल ॥ २३ ॥

एइ भूञा—इस जमींदार ने; **केने**—क्यों; **मोरे**—मुझे; **सम्मान करिल**—इतना सम्मान दिया; **एत चिन्ति'**—यह सोचकर; **सनातन**—सनातन ने; **ईशाने**—अपने सेवक ईशान से; **पुछिल**—पूछा।

अनुवाद

नवाब का मन्त्री रहने के कारण सनातन सारी कूटनीति समझते थे। अतः उन्होंने सोचा, "यह जमींदार मेरा इतना सम्मान क्यों कर रहा है?" यह सोचकर उन्होंने अपने सेवक ईशान से पूछा।

'তোমার ঠাঞি জানি কিছু দ্রব্য আছয়' ।
ঈশান কহে,—'মোর ঠাঞি সাত মোহর হয়' ॥২৪॥

'तोमार ठाञि जानि किछु द्रव्य आछय' ।
ईशान कहे,—'मोर ठाञि सात मोहर हय' ॥ २४ ॥

तोमार ठाञि—तुम्हारे पास; **जानि**—मैं जानता हूँ; **किछु**—कुछ; **द्रव्य**—मूल्यवान वस्तु; **आछय**—है; **ईशान कहे**—ईशान ने उत्तर दिया; **मोर ठाञि**—मेरे पास; **सात मोहर**—सात सुवर्ण मुद्राएँ; **हय**—हैं।

अनुवाद

सनातन ने अपने सेवक से पूछा, "ईशान, मेरी समझ में तुम्हारे पास कुछ बहुमूल्य वस्तुएँ हैं।" ईशान ने कहा, "हाँ, मेरे पास सात स्वर्ण मुद्राएँ (मोहरें) हैं।"

শুনি' সনাতন তারে করিলা ভৎর্সন ।
'সঙ্গে কেনে আনিয়াছ এই কাল-যম?' ॥২৫॥

शुनि' सनातन तारे करिला भर्त्सन ।
'सङ्गे केने आनियाछ एइ काल-यम?' ॥ २५ ॥

शुनि'—यह सुनकर; **सनातन**—सनातन गोस्वामी ने; **तारे**—उसको; **करिला भर्त्सन**—डाँटा; **सङ्गे**—अपने साथ; **केने**—क्यों; **आनियाछ**—लाये हो; **एइ**—यह; **काल-यम**—मृत्यु की घण्टी।

अनुवाद

यह सुनकर सनातन गोस्वामी ने अपने सेवक की भर्त्सना यह कहते हुए की, "तुम यह मृत्यु की घण्टी क्यों अपने साथ लाये हो?"

তবে সেই সাত মোহর হস্তেতে করিয়া ।
ভূঞার কাছে যাঞা কহে মোহর ধরিয়া ॥ ২৬ ॥

तबे सेइ सात मोहर हस्तेते करिया ।
भूआर काछे ग्याञा कहे मोहर धरिया ॥ २६ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **सेइ सात मोहर**—वे सात सुवर्ण मुद्राएँ; **हस्तेते करिया**—हाथ में लेकर; **भूआर काछे**—जमींदार को; **ग्याञा**—जाकर; **कहे**—कहा; **मोहर धरिया**—मुद्राओं को पकड़कर।

अनुवाद

तत्पश्चात् सनातन गोस्वामी सातों स्वर्ण मुद्राएँ अपने हाथ में लेकर जमींदार के पास गये और उसके समक्ष मुद्राएँ रखकर इस प्रकार बोले।

"এই সাত সুবর্ণ মোহর আছিল আমার ।
ইহা লঞা ধর্ম দেখি' পর্বত কর পার ॥ ২৭ ॥

"एइ सात सुवर्ण मोहर आछिल आमार ।
इहा लञा धर्म देखि' पर्वत कर पार ॥ २७ ॥

एइ सात—ये सात; **सुवर्ण मोहर**—सोने की मुद्राएँ; **आछिल**—थी; **आमार**—मेरी; **इहा लञा**—उन्हें स्वीकार करके; **धर्म देखि'**—धर्म की दृष्टि से; **पर्वत**—पर्वत; **कर पार**—कृपया मुझे पार कराओ।

अनुवाद

"मेरे पास ये सात स्वर्ण मुद्राएँ हैं। कृपया इन्हें लीजिये और धर्म समझकर मुझे यह पर्वतीय प्रदेश पार करा दीजिये।

রাজ-বন্দী আমি, গড়-দ্বার যাইতে না পারি ।
পুণ্য হবে, পর্বত আমা দেহ' পার করি'' ॥২৮॥

राज-बन्दी आमि, गड़-द्वार याइते ना पारि ।
पुण्य हबे, पर्वत आमा देह' पार करि" ॥ २८ ॥

राज-बन्दी—सरकार का एक कैदी; **आमि**—मैं; **गड़-द्वार याइते**—चहरदारी से खुली सड़क पर; **ना पारि**—नहीं जा सकता; **पुण्य**—पुण्य कर्म; **हबे**—होगा; **पर्वत**—पर्वतीय क्षेत्र; **आमा**—मुझे; **देह'**—सहायता करोगे; **पार करि**—पार करने में।

अनुवाद

"मैं सरकारी बन्दी हूँ और मैं किले के परकोटे के रास्ते से नहीं जा सकता। यदि आप यह धन ले लें और मुझे यह पर्वतीय प्रदेश पार करा दें, तो आपको बड़ा पुण्य होगा।"

ভূঞা হাসি' কহে,—''আমি জানিয়াছি পহিলে ।
অষ্ট মোহর হয় তোমার সেবক-আঁচলে ॥২৯॥

भूञा हासि' कहे,—"आमि जानियाछि पहिले ।
अष्ट मोहर हय तोमार सेवक-आँचले ॥ २९ ॥

भूञा—जमींदार ने; **हासि'**—मुस्कुराकर; **कहे**—कहा; **आमि**—मैं; **जानियाछि**—जानता था; **पहिले**—पहले से; **अष्ट मोहर**—आठ स्वर्ण मुद्राएँ; **हय**—हैं; **तोमार**—तुम्हारे; **सेवक-आँचले**—सेवक की जेब में।

अनुवाद

जमींदार ने हँसते हुए कहा, "तुम्हारे देने के पूर्व ही मैं जानता था कि तुम्हारे सेवक के पास आठ स्वर्ण मुद्राएँ हैं।

তোমা মারি' মোহর লইতাম আজিকার রাত্র্যে ।
ভাল হৈল, কহিলা তুমি, ছুটিলাঙ পাপ হৈতে ॥৩০॥

तोमा मारि' मोहर लइताम आजिकार रात्र्ये ।
भाल हैल, कहिला तुमि, छुटिलाङ पाप हैते ॥ ३० ॥

तोमा मारि'—तुम्हें मारकर; **मोहर**—स्वर्ण मुद्राएँ; **लइताम**—मैं ले लेता; **आजिकार रात्र्ये**—इसी रात को; **भाल हैल**—यह बहुत अच्छा हुआ; **कहिला तुमि**—तुमने कहा है; **छुटिलाङ**—मुझे राहत मिली है; **पाप हैते**—ऐसे पाप से।

अनुवाद

"आज रात को ही मैं तुम्हें जान से मारकर तुम्हारी मुद्राएँ ले लेता। यह तो अच्छा हुआ कि तुमने स्वेच्छा से उन्हें लाकर मुझे सौंप दिया। अब मैं इस पापकर्म से बच गया।

সন্তুষ্ট হইলাঙ আমি, মোহর না লইব ।
পুণ্য লাগি' পর্বত তোমা' পার করি' দিব'' ॥ ৩১ ॥

सन्तुष्ट हइलाङ आमि, मोहर ना लइब ।
पुण्य लागि' पर्वत तोमा' पार करि' दिब" ॥ ३१ ॥

सन्तुष्ट—सन्तुष्ट; **हइलाङ**—हो गया हूँ; **आमि**—मैं; **मोहर**—स्वर्ण मुद्राएँ; **ना लइब**—मैं नहीं लूँगा; **पुण्य लागि'**—मात्र पुण्य कर्म के लिए; **पर्वत**—पर्वतीय क्षेत्र; **तोमा'**—तुम्हें; **पार करि' दिब**—मैं पार करा दूँगा।

अनुवाद

"मैं तुम्हारे आचरण से अत्यन्त सन्तुष्ट हूँ। मैं ये स्वर्ण मुद्राएँ नहीं लूँगा, परन्तु मैं केवल पुण्य-लाभ हेतु तुम्हें यह पर्वतीय प्रदेश पार करा दूँगा।"

গোসাঞি কহে,—''কেহ দ্রব্য লইবে আমা মারি' ।
আমার প্রাণ রক্ষা কর দ্রব্য অঙ্গীকরি''' ॥ ৩২ ॥

गोसाञि कहे,—"केह द्रव्य लइबे आमा मारि' ।
आमार प्राण रक्षा कर द्रव्य अङ्गीकरि'" ॥ ३२ ॥

गोसाञि कहे—सनातन गोस्वामी ने कहा; **केह**—कोई अन्य; **द्रव्य**—अमूल्य मुद्राएँ; **लइबे**—ले लेगा; **आमा मारि'**—मुझे मारकर; **आमार**—मेरे; **प्राण**—प्राण; **रक्षा कर**—की रक्षा करो; **द्रव्य अङ्गीकरि'**—इन मुद्राओं को लेकर।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने कहा, "यदि आप इन मुद्राओं को स्वीकार नहीं करेंगे, तो इनके लिए मुझे कोई दूसरा मार डालेगा। अतः अच्छा यही होगा कि आप इन मुद्राओं को स्वीकार करके मेरी प्राण-रक्षा करें।"

তবে ভূঞা গোসাঞির সঙ্গে চারি পাইক দিল ।
রাত্র্যে রাত্র্যে বন-পথে পর্বত পার কৈল ॥৩৩॥

तबे भूञा गोसाञिर सङ्गे चारि पाइक दिल ।
रात्र्ये रात्र्ये वन-पथे पर्वत पार कैल ॥ ३३ ॥

तबे—इस पर; **भूञा**—जमींदार ने; **गोसाञिर सङ्गे**—सनातन गोस्वामी के साथ; **चारि पाइक**—चार चौकीदार; **दिल**—दिये; **रात्र्ये रात्र्ये**—सारी रात; **वन-पथे**—वन के मार्ग से; **पर्वत**—पर्वतीय क्षेत्र; **पार कैल**—पार करवा दिया।

अनुवाद

इस समझौते के बाद जमींदार ने सनातन गोस्वामी को चार रक्षक दिये जो उनके साथ जा सकें। वे सभी रात-भर जंगल के रास्ते से होकर चलते रहे और उन्हें पर्वतीय क्षेत्र के पार ले गये।

তবে পার হঞা গোসাঞি পুছিলা ঈশানে ।
''জানি,—শেষ দ্রব্য কিছু আছে তোমা স্থানে'' ॥৩৪॥

तबे पार हञा गोसाञि पुछिला ईशाने ।
"जानि,—शेष द्रव्य किछु आछे तोमा स्थाने" ॥ ३४ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **पार हञा**—पार करने के बाद; **गोसाञि**—सनातन गोस्वामी ने; **पुछिला**—कहा; **ईशाने**—ईशान से; **जानि**—मैं जानता हूँ; **शेष द्रव्य**—कुछ मूल्यवान अभी भी है; **किछु**—कुछ; **आछे**—है; **तोमा स्थाने**—तुम्हारे पास।

अनुवाद

पर्वत पार करने के बाद सनातन गोस्वामी ने अपने सेवक से कहा, "ईशान, मेरी समझ में तुम्हारे पास अब भी कुछ स्वर्ण मुद्राएँ होंगी।"

ঈশান কহে,—"এক মোহর আছে অবশেষ" ।
গোসাঞি কহে,—"মোহর লঞা যাহ' তুমি দেশ" ॥৩৫॥

ईशान कहे,—"एक मोहर आछे अवशेष" ।
गोसाञि कहे,—"मोहर लञा याह' तुमि देश" ॥ ३५॥

ईशान कहे—ईशान ने उत्तर दिया; **एक**—एक; **मोहर**—स्वर्ण मुद्रा; **आछे**—है; **अवशेष**—बाकी; **गोसाञि**—सनातन गोस्वामी; **कहे**—ने कहा; **मोहर लञा**—यह मुद्रा लेकर; **याह**—लौट जाओ; **तुमि**—तुम; **देश**—अपने देश को।

अनुवाद

ईशान ने उत्तर दिया, "अब भी एक स्वर्ण मुद्रा मेरे पास है।" तब सनातन गोस्वामी ने कहा, "यह मुद्रा लेकर तुम अपने घर लौट जाओ।"

তারে বিদায় দিয়া গোসাঞি চলিলা একলা ।
হাতে করোঁয়া, ছিঁড়া কান্থা, নির্ভয় হইলা ॥৩৬॥

तारे विदाय दिया गोसाञि चलिला एकला ।
हाते करोंया, छिंड़ा कान्था, निर्भय हइला ॥ ३६॥

तारे विदाय दिया—उसे विदा करके; **गोसाञि**—सनातन गोस्वामी; **चलिला एकला**—अकेले चलने लगे; **हाते**—हाथ में; **करोंया**—भिखारी का पात्र लेकर; **छिंड़ा कान्था**—एक फटी रजाई; **निर्भय हइला**—वे चिन्ता मुक्त हो गये।

अनुवाद

ईशान को विदा करने के बाद सनातन गोस्वामी हाथ में जलपात्र लेकर अकेले ही चल पड़े। फटी-पुरानी रजाई ओढ़े वे अपनी सारी चिन्ताओं से मुक्त हो गये।

চলি' চলি' গোসাঞি তবে আইলা হাজিপুরে ।
সন্ধ্যা-কালে বসিলা এক উদ্যান-ভিতরে ॥৩৭॥

चलि' चलि' गोसाञि तबे आइला हाजिपुरे ।
सन्ध्या-काले वसिला एक उद्यान-भितरे ॥ ३७॥

चलि' चलि'—चलते चलते; **गोसाञि**—सनातन गोस्वामी; **तबे**—तब; **आइला**—आ

गये; **हाजिपुरे**—हाजीपुर में; **सन्ध्या-काले**—सायंकाल में; **वसिला**—बैठ गये; **एक**—एक; **उद्यान-भितरे**—बगीचे में।

अनुवाद

चलते चलते सनातन गोस्वामी अन्ततः हाजीपुर नामक स्थान पर पहुँचे। उन्होंने वह सन्ध्या एक बगीचे के भीतर बैठकर बिताई।

सेइ हाजिपुरे रहे—श्रीकान्त तार नाम ।
गोसाञिर भगिनी-पति, करे राज-काम ॥ ३८॥

सेइ हाजिपुरे रहे—श्रीकान्त तार नाम ।
गोसाञिर भगिनी-पति, करे राज-काम ॥ ३८॥

सेइ—वह; **हाजिपुरे**—हाजीपुर में; **रहे**—रहता था; **श्रीकान्त**—श्रीकान्त; **तार**—उसका; **नाम**—नाम; **गोसाञिर**—सनातन गोस्वामी की; **भगिनी-पति**—बहन का पति; **करे**—करता था; **राज-काम**—सरकारी नौकरी।

अनुवाद

हाजीपुर में श्रीकान्त नाम का एक व्यक्ति रहता था, जो सनातन गोस्वामी का बहनोई था। वह वहाँ सरकारी नौकरी करता था।

तिन लक्ष मुद्रा राजा दियाछे तार स्थाने ।
घोड़ा मूल्य लञा पाठाय पात्सार स्थाने ॥ ३९॥

तिन लक्ष मुद्रा राजा दियाछे तार स्थाने ।
घोड़ा मूल्य लञा पाठाय पात्सार स्थाने ॥ ३९॥

तिन लक्ष—तीन लाख; **मुद्रा**—स्वर्ण मुद्राएँ; **राजा**—नवाब या राजा; **दियाछे**—दी थीं; **तार स्थाने**—उसको; **घोड़ा**—घोड़े को; **मूल्य लञा**—कीमत लेकर; **पाठाय**—भेजता था; **पात्सार स्थाने**—बादशाह को।

अनुवाद

श्रीकान्त के पास तीन लाख स्वर्ण मुद्राएँ थीं, जो उसे राजा से घोड़े खरीदने के लिए मिली थीं। इस तरह श्रीकान्त घोड़े खरीद-खरीदकर राजा के पास भेजता रहता था।

টুঙ্গি উপর বসি' সেই গোসাঞিরে দেখিল ।
রাত্র্যে এক-জন-সঙ্গে গোসাঞি-পাশ আইল ॥ ৪০ ॥

টুঙ্গি উপর বসি' সেই গোসাঞিরে দেখিল ।
রাত্র্যে এক-জন-সঙ্গে গোসাঞি-পাশ আইল ॥ ৪০ ॥

টুঙ্গি উপর বসি'—एक उच्च स्थान पर बैठकर; **सेइ**—उस श्रीकान्त ने; **गोसाञिरे**—सनातन गोस्वामी को; **देखिल**—देखा; **रात्र्ये**—उस रात; **एक-जन-सङ्गे**—एक सेवक के साथ; **गोसाञि-पाश**—सनातन गोस्वामी के पास; **आइल**—वह आया।

अनुवाद

ऊँचे चबूतरे पर बैठे हुए श्रीकान्त ने सनातन गोस्वामी को देखा। अतः उस रात वे वहाँ अपने साथ एक सेवक को लेकर सनातन गोस्वामी से मिलने गया।

दुइ-जन मिलि' तथा इष्ट-गोष्ठी कैल ।
बन्धन-मोक्षण-कथा गोसाञि सकलि कहिल ॥ ४१ ॥

दुइ-जन मिलि' तथा इष्ट-गोष्ठी कैल ।
बन्धन-मोक्षण-कथा गोसाञि सकलि कहिल ॥ ४१ ॥

दुइ-जन मिलि'—दोनों व्यक्तियों ने मिलकर; **तथा**—वहाँ; **इष्ट-गोष्ठी**—कई प्रकार की चर्चाएँ; **कैल**—कीं; **बन्धन-मोक्षण**—अपनी कैद और रिहाई की; **कथा**—कहानी; **गोसाञि**—सनातन गोस्वामी ने; **सकलि**—सब; **कहिल**—सुनाई।

अनुवाद

जब वे दोनों मिले तो बहुत बातें हुईं। सनातन गोस्वामी ने विस्तार से अपने बन्दी होने और मुक्ति की बातें बताईं।

तेँहो कहे,—"दिन-दुई रह एই-স্থানে ।
ভদ্র হও, ছাড়' এই মলিন বসনে" ॥ ৪২ ॥

तेँहो कहे,—"दिन-दुइ रह एइ-स्थाने ।
भद्र हओ, छाड़' एइ मलिन वसने" ॥ ४२ ॥

तेँहो कहे—उसने कहा; **दिन-दुइ**—कम से कम दो दिन के लिए; **रह**—रहो; **एइ-**

स्थाने—इस स्थान पर; **भद्र हओ**—एक भद्र पुरुष की भाँति बनकर; **छाड़'**—त्याग दो; **एइ**—यह; **मलिन**—गन्दी; **वसने**—पोशाक।

अनुवाद

तब श्रीकान्त ने सनातन गोस्वामी से कहा, "यहाँ पर कम-से-कम दो दिन रुकिये और भद्र पुरुषों की तरह वस्त्र पहनिये। इन गन्दे वस्त्रों को त्याग दीजिये।"

গোসাঞি কহে,—'এক-ক্ষণ ইহা না রহিব ।
গঙ্গা পার করি' দেহ' এ-ক্ষণে চলিব'' ॥৪৩॥

গোসাঞি কহে,—'এক-ক্ষণ ইহা না রহিব ।
গঙ্গা পার করি' দেহ' এ-ক্ষণে চলিব" ॥ ৪৩ ॥

गोसाञि कहे—सनातन गोस्वामी ने कहा; **एक-क्षण**—एक क्षण के लिए भी; **इहा**—यहाँ; **ना रहिब**—मैं नहीं ठहरूँगा; **गङ्गा पार करि' देह'**—गंगा नदी पार करने में सहायता करो; **ए-क्षणे**—इसी क्षण; **चलिब**—मैं जाऊँगा।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने उत्तर दिया, "मैं यहाँ पर एक क्षण भी नहीं रुकूँगा। कृपया मुझे गंगा पार करा दें। मैं तुरन्त चला जाऊँगा।"

যত্ন করি' তেঁহো এক ভোট-কম্বল দিল ।
গঙ্গা পার করি' দিল—গোসাঞি চলিল ॥৪৪॥

यत्न करि' तेंहो एक भोट-कम्बल दिल ।
गङ्गा पार करि' दिल—गोसाञि चलिल ॥ ४४ ॥

यत्न करि'—बहुत सावधानी से; **तेंहो**—उसने (श्रीकान्त ने); **एक**—एक; **भोट-कम्बल**—ऊनी कम्बल; **दिल**—दिया; **गङ्गा पार करि' दिल**—उन्हें गंगा पार करवा दी; **गोसाञि चलिल**—सनातन गोस्वामी चल पड़े।

अनुवाद

श्रीकान्त ने बड़ी सावधानी से उन्हें एक ऊनी कम्बल दिया और गंगा पार जाने में उनकी सहायता की। इस तरह सनातन गोस्वामी फिर चल पड़े।

তবে বারাণসী গোসাঞি আইলা কত-দিনে ।
শুনি আনন্দিত হইলা প্রভুর আগমনে ॥ ৪৫॥

तबे वाराणसी गोसाञि आइला कत-दिने ।
शुनि आनन्दित हइला प्रभुर आगमने ॥ ४५ ॥

तबे—इस प्रकार; **वाराणसी**—वाराणसी; **गोसाञि**—सनातन गोस्वामी; **आइला**—आ गये; **कत-दिने**—कुछ दिनों के बाद; **शुनि**—सुनकर; **आनन्दित**—अत्यन्त प्रसन्न; **हइला**—वे हो गये; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **आगमने**—आगमन के बारे में।

अनुवाद

कुछ दिनों बाद सनातन गोस्वामी वाराणसी आ पहुँचे। वहाँ पर श्री चैतन्य महाप्रभु के आगमन के विषय में सुनकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए।

চন্দ্রশেখরের ঘরে আসি' দ্বারেতে বসিলা ।
মহাপ্রভু জানি' চন্দ্রশেখরে কহিলা ॥ ৪৬॥

चन्द्रशेखरेर घरे आसि' द्वारेते वसिला ।
महाप्रभु जानि' चन्द्रशेखरे कहिला ॥ ४६ ॥

चन्द्रशेखरेर घरे—चन्द्रशेखर के घर पर; **आसि'**—जाकर; **द्वारेते**—द्वार पर; **वसिला**—बैठ गये; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जानि'**—यह जानकर; **चन्द्रशेखरे**—चन्द्रशेखर को; **कहिला**—कहा।

अनुवाद

तब सनातन गोस्वामी चन्द्रशेखर के घर गये और उनके दरवाजे के पास बैठ गये। श्री चैतन्य महाप्रभु जान गये कि क्या हो रहा है, अतः वे चन्द्रशेखर से बोले।

'দ্বারে এক 'বৈষ্ণব' হয়, বোলাহ তাঁহারে' ।
চন্দ্রশেখর দেখে—'বৈষ্ণব' নাহিক দ্বারে ॥ ৪৭॥

'द्वारे एक 'वैष्णव' हय, बोलाह ताँहारे' ।
चन्द्रशेखर देखे—'वैष्णव' नाहिक द्वारे ॥ ४७ ॥

द्वारे—तुम्हारे द्वार पर; **एक वैष्णव**—एक वैष्णव भक्त; **हय**—है; **बोलाह ताँहाइ-ए**—

कृपया उसे बुलाओ; **चन्द्रशेखर**—चन्द्रशेखर ने; **देखे**—देखा; **वैष्णव**—कोई भक्त; **नाहिक**—वहाँ नहीं है; **द्वारे**—द्वार पर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "तुम्हारे दरवाजे पर एक भक्त है। कृपया उसे अन्दर बुला लाओ।" बाहर जाने पर चन्द्रशेखर को अपने दरवाजे पर कोई वैष्णव नहीं दिखा।

'द्वारेते वैष्णव नाहि'—प्रभुरे कहिल ।
'केह हय' करि' प्रभु ताहारे पूछिल ॥ ४८॥

'द्वारेते वैष्णव नाहि'—प्रभुरे कहिल ।
'केह हय' करि' प्रभु ताहारे पुछिल ॥ ४८॥

द्वारेते—मेरे द्वार पर; **वैष्णव नाहि**—कोई वैष्णव नहीं है; **प्रभुरे कहिल**—उसने श्री चैतन्य महाप्रभु को सूचित किया; **केह हय**—क्या वहाँ कोई भी है?; **करि'**—इस प्रकार; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **ताहारे पुछिल**—उससे पूछा।

अनुवाद

जब चन्द्रशेखर ने महाप्रभु को बतलाया कि उनके दरवाजे पर कोई वैष्णव नहीं है, तो महाप्रभु ने पूछा, "क्या तुम्हारे दरवाजे पर कोई भी है?"

तेँहो कहे,—एक 'दरवेश' आछे द्वारे ।
'তাঁরে আন' প্রভুর বাক্যে কহিল তাঁহারে ॥ ৪৯॥

তেঁহো কহে,—এক 'দরবেশ' আছে দ্বারে ।
'তাঁরে আন' প্রভুর বাক্যে কহিল তাঁহারে ॥ ৪৯॥

তেঁহো কহে—উসने उत्तर दिया; **এক দরবেশ**—एक मुस्लिम फकीर; **আছে**—वहाँ है; **দ্বারে**—द्वार पर; **তাঁরে আন**—उसे ले आओ; **প্রভুর**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **বাক্যে**—आदेश; **কহিল**—कहा; **তাঁহারে**—उनको।

अनुवाद

चन्द्रशेखर ने उत्तर दिया, "वहाँ एक मुसलमान फकीर है।" महाप्रभु ने तुरन्त कहा, "कृपया उसे यहाँ ले आओ।" तब चन्द्रशेखर ने अपने द्वार पर अभी तक बैठे हुए सनातन गोस्वामी से कहा।

'प्रभु तोमाय बोलाय, आइस, दरवेश!' ।
शुनि' आनन्दे सनातन करिला प्रवेश ॥५०॥

'प्रभु तोमाय बोलाय, आइस, दरवेश!' ।
शुनि' आनन्दे सनातन करिला प्रवेश ॥५०॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **तोमाय**—तुम्हें; **बोलाय**—बुलाया है; **आइस**—यहाँ आओ; **दरवेश**—हे मुस्लिम दरवेश (फकीर); **शुनि'**—सुनकर; **आनन्दे**—बड़ी प्रसन्नता में; **सनातन**—सनातन गोस्वामी ने; **करिला प्रवेश**—प्रवेश किया।

अनुवाद

"हे मुसलमान फकीर, कृपया अन्दर आइये। महाप्रभु आपको बुला रहे हैं।" यह आदेश सुनकर सनातन गोस्वामी अत्यन्त आनन्दित हुए और चन्द्रशेखर के घर में प्रविष्ट हुए।

তাঁহারে অঙ্গনে দেখি' প্রভু ধাঞা আইলা ।
তাঁরে আলিঙ্গন করি' প্রেমাবিষ্ট হৈলা ॥৫১॥

তাঁহারে অঙ্গনে দেখি' প্রভু ধাঞা আইলা ।
তাঁরে আলিঙ্গন করি' প্রেমাবিষ্ট হৈলা ॥৫১॥

তাঁহারে—उनको; **অঙ্গনে**—आंगन में; **দেখি'**—देखकर; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ধাঞা আইলা**—जल्दी से उनको मिलने आये; **তাঁরে**—उनका; **আলিঙ্গন করি'**—आलिंगन करके; **প্রেম-আবিষ্ট হৈলা**—अत्यन्त प्रेमावेश में आ गये।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु सनातन गोस्वामी को आँगन में आये हुए देखते ही तेजी से उनके पास गये और उनका आलिंगन किया और स्वयं प्रेमावेश से भावविभोर हो गये।

প্রভু-স্পর্শে প্রেমাবিষ্ট হইলা সনাতন ।
'মোরে না ছুঁইহ'——কহে গদগদ-বচন ॥৫২॥

প্রভু-স্পর্শে প্রেমাবিষ্ট হইলা সনাতন ।
'মোরে না ছুঁইহ'——কহে গদ্‌গদ-বচন ॥৫২॥

प्रभु-स्पर्शे—श्री चैतन्य महाप्रभु के स्पर्श से; **प्रेम-आविष्ट**—प्रेमावेश से अभिभूत; **हइला**—हो गये; **सनातन**—सनातन गोस्वामी ने; **मोरे**—मुझे; **ना**—ना; **छुडिह**—छुओ; **कहे**—कहा; **गद्गद-वचन**—रूद्ध वाणी में।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु का द्वारा स्पर्श पाते ही सनातन गोस्वामी भी प्रेमाविष्ट हो गये। उन्होंने रुद्ध वाणी में कहा, "हे प्रभु, आप मेरा स्पर्श न करें।"

দুই-জনে গলাগলি রোদন অপার ।
দেখি' চন্দ্রশেখরের হইল চমত্কার ॥৫৩॥

दुइ-जने गलागलि रोदन अपार ।
देखि' चन्द्रशेखरेर हइल चमत्कार ॥५३॥

दुइ-जने—दोनों व्यक्ति; **गलागलि**—गले लगकर; **रोदन**—रोने लगे; **अपार**—असीम; **देखि'**—देखकर; **चन्द्रशेखरेर**—चन्द्रशेखर को; **हइल**—हो गया; **चमत्कार**—आश्चर्य।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु तथा सनातन गोस्वामी गले लगकर अत्यधिक रोने लगे। यह देखकर चन्द्रशेखर अत्यधिक चकित हुए।

তবে প্রভু তাঁর হাত ধরি' লঞা গেলা ।
পিণ্ডার উপরে আপন-পাশে বসাইলা ॥৫৪॥

तबे प्रभु ताँर हात धरि' लञा गेला ।
पिण्डार उपरे आपन-पाशे वसाइला ॥५४॥

तबे—तत्पश्चात्; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ताँर**—सनातन गोस्वामी का; **हात धरि'**—हाथ पकड़कर; **लञा गेला**—अन्दर ले गये; **पिण्डार उपरे**—एक ऊँचे स्थान पर; **आपन-पाशे**—अपने पास; **वसाइला**—बैठा लिया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु चन्द्रशेखर का हाथ पकड़कर भीतर ले गये और उन्हें अपनी बगल में एक ऊँचे आसन पर बिठाया।

শ্রী-হস্তে করেন তাঁর অঙ্গ সম্মার্জন ।
তেঁহো কহে,—'মোরে, প্রভু, না কর স্পর্শন' ॥৫৫॥

শ্রী-হস্তে করেন তাঁর অঙ্গ সম্মার্জন ।
তেঁহো কহে,—'মোরে, প্রভু, না কর স্পর্শন' ॥৫৫॥

শ্রী-হস্তে—दिव्य हाथ से; **করেন**—किया; **তাঁর অঙ্গ**—उनका शरीर; **সম্মার্জন**—साफ; **তেঁহো কহে**—उन्होंने कहा; **মোরে**—मुझे; **প্রভু**—मेरे प्रभु; **না কর স্পর্শন**—न करें स्पर्श।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु अपने दिव्य हाथों से सनातन गोस्वामी का शरीर साफ करने लगे, तो सनातन गोस्वामी ने कहा, "हे प्रभु, कृपया मेरा स्पर्श न करें।"

প্রভু কহে,—"তোমা স্পর্শি আত্ম পবিত্রিতে ।
ভক্তি-বলে পার তুমি ব্রহ্মাণ্ড শোধিতে ॥৫৬॥

প্রভু কহে,—"তোমা স্পর্শি আত্ম পবিত্রিতে ।
ভক্তি-বলে পার তুমি ব্রহ্মাণ্ড শোধিতে ॥৫৬॥

প্রভু কহে—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **তোমা স্পর্শি**—मैं तुम्हारा स्पर्श करता हूँ; **আত্ম পবিত্রিতে**—स्वयं को पवित्र करने हेतु; **ভক্তি-বলে**—तुम्हारी भक्ति के बल पर; **পার**—सकते हो; **তুমি**—तुम; **ব্রহ্মাণ্ড**—सारा ब्रह्माण्ड; **শোধিতে**—पवित्र।

अनुवाद

महाप्रभु ने उत्तर दिया, "मैं अपने आपको पवित्र बनाने के लिए ही तुम्हारा स्पर्श कर रहा हूँ, क्योंकि तुम अपनी भक्ति के बल से सारे ब्रह्माण्ड को शुद्ध कर सकते हो।

ভবদ্বিধা ভাগবতাস্তীর্থ-ভূতাঃ স্বয়ং প্রভো ।
তীর্থী-কুর্বন্তি তীর্থানি স্বান্তঃ-স্থেন গদা-ভৃতা ॥৫৭॥

ভবদ্বিধা ভাগবতাস্তীর্থ-ভূতাঃ স্বয়ং প্রভো ।
তীর্থী-কুর্বন্তি তীর্থানি স্বান্তঃ-স্থেন গদা-ভৃতা ॥৫৭॥

ভবত্-বিধাঃ—आप जैसे; **ভাগবতাঃ**—उन्नत भक्त; **তীর্থ-ভূতাঃ**—मूर्तिमान तीर्थस्थान;

स्वयम्—स्वयं; **प्रभो**—मेरे प्रभु; **तीर्थी-कुर्वन्ति**—उन्हें पावन तीर्थ बना देते हैं; **तीर्थानि**—सभी तीर्थ स्थान; **स्व-अन्तः-स्थेन**—उनके हृदयों में स्थित; **गदा-भृता**—भगवान् विष्णु द्वारा (जो गदाधारी हैं)।

अनुवाद

"'आप जैसे सन्त स्वयं तीर्थस्थान होते हैं। अपनी पवित्रता के कारण वे भगवान् के नित्य पार्षद होते हैं; अतः वे तीर्थस्थलों को भी पवित्र कर सकते हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१.१३.१०) का है, जिसे महाराज युधिष्ठिर ने विदुर से कहा था। विदुर तीर्थस्थानों की यात्रा करके घर लौट रहे थे और महाराज युधिष्ठिर अपने इस सन्त चाचा की अगवानी कर रहे थे। महाराज युधिष्ठिर के कहने का भाव था, "हे चाचा विदुर, आप स्वयं तीर्थस्थल हैं, क्योंकि आप उन्नत भक्त हैं। आप जैसे भक्त भगवान् विष्णु को सदा अपने हृदयों में धारण करते हैं। आप उन समस्त तीर्थस्थलों को पवित्र बना सकते हैं, जो पापियों द्वारा तीर्थयात्रा करने से प्रदूषित हो चुके होते हैं।"

पापी व्यक्ति शुद्ध बनने के लिए तीर्थस्थान जाता है। पवित्र स्थान में अनेक सन्त पुरुष तथा विष्णु मन्दिर होते हैं, फिर भी अनेक यात्रियों के पापों से पवित्र स्थान दूषित हो जाता है। किन्तु जब कोई बड़ा भक्त किसी तीर्थस्थान में जाता है, तो वह यात्रियों के सारे पापों को नष्ट कर देता है। इसीलिए महाराज युधिष्ठिर ने विदुर से इस तरह कहा।

चूँकि एक महान् भक्त अपने हृदय में भगवान् विष्णु को धारण करता है, अतः वह चलता-फिरता मन्दिर तथा चलते-फिरते विष्णु समान होता है। उन्नत भक्त को किसी पवित्र स्थान में जाने की आवश्यकता नहीं रह जाती, क्योंकि वह जहाँ भी रुकता है, वह पवित्र स्थान बन जाता है। इस सम्बन्ध में नरोत्तम दास ठाकुर कहते हैं, *तीर्थयात्रा परिश्रम, केवल मनेर भ्रम*—तीर्थयात्रा करना एक दूसरे प्रकार का मोह ही है। चूँकि उच्च भक्त को किसी पवित्र स्थान में जाने की आवश्यकता नहीं रहती, तो फिर वह वहाँ क्यों जाये? इसका उत्तर यही है कि वह उस स्थान को पवित्र करने मात्र के लिए जाता है।

न मेऽभक्तश्चतुर्वेदी मद्भक्तः श्व-पचः प्रियः ।
तस्मै देयं ततो ग्राह्यं स च पूज्यो यथा ह्यहम् ॥५८॥

न मेऽभक्तश्चतुर्वेदी मद्भक्तः श्व-पचः प्रियः ।
तस्मै देयं ततो ग्राह्यं स च पूज्यो यथा ह्यहम् ॥५८॥

न—नहीं; **मे**—मेरे; **अभक्तः**—शुद्ध भक्ति से रहित; **चतुः-वेदी**—चारों वेदों का ज्ञाता; **मत्-भक्तः**—मेरे भक्त; **श्व-पचः**—चण्डाल कुल से भी हो; **प्रियः**—अत्यन्त प्रिय; **तस्मै**—उसको (शुद्ध भक्त, चाहे वह निम्न कुल में ही क्यों न जन्मा हो); **देयम्**—देना चाहिए; **ततः**—उससे; **ग्राह्यम्**—ग्रहण कर लेना चाहिए (उच्छिष्ट); **सः**—वह व्यक्ति; **च**—भी; **पूज्यः**—पूज्य; **यथा**—उतना ही; **हि**—जितना; **अहम्**—मैं।

अनुवाद

"[भगवान् कृष्ण ने कहा :] 'भले ही कोई व्यक्ति संस्कृत वैदिक साहित्य का कितना ही प्रकाण्ड पण्डित क्यों न हो, जब तक वह भक्ति में शुद्ध न हो, वह तब तक मेरा भक्त नहीं माना जाता। किन्तु भले ही कोई व्यक्ति चण्डाल परिवार में जन्मा हो, वह भी मुझे अत्यन्त प्रिय है, यदि वह शुद्ध भक्त है और सकाम कर्म या मानसिक तर्क को भोगने की इच्छा से रहित है। निस्सन्देह, उसका सभी तरह से आदर होना चाहिए और वह जो भी भेंट करे उसे स्वीकार करना चाहिए। ऐसे भक्त मेरे समान ही पूज्य हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक सनातन गोस्वामी द्वारा संकलित *हरिभक्ति-विलास* (१०.१२७) में आया है।

विप्राद्द्वि-षड्-गुण-युतादरविन्द-नाभ-
पादारविन्द-विमुखाच्छ्व-पचं वरिष्ठम् ।
मन्ये तदर्पित-मनो-वचनेहितार्थ-
प्राणं पुनाति स कुलं न तु भूरि-मानः ॥५९॥

विप्राद्द्वि-षड्-गुण-युतादरविन्द-नाभ-
पादारविन्द-विमुखात्-श्वपचं वरिष्ठम् ।
मन्ये तदर्पित-मनो-वचनेहितार्थ-
प्राणं पुनाति स कुलं न तु भूरि-मानः ॥५९॥

विप्रात्—ब्राह्मण की अपेक्षा; **द्वि-षट्-गुण-ग्रुतात्**—जो ब्राह्मणों के बारह गुणों से युक्त है; **अरविन्द-नाभ**—भगवान् विष्णु का, जो कमल जैसी नाभि वाले हैं; **पाद-अरविन्द**—चरणकमलों को; **विमुखात्**—भक्ति से विमुख व्यक्ति की अपेक्षा; **श्व-पचम्**—चण्डाल; **वरिष्ठम्**—श्रेष्ठ; **मन्ये**—मैं मानता हूँ; **तत्-अर्पित**—उनको अर्पित; **मनः**—मन; **वचन**—वचन; **ईहित**—कर्म; **अर्थ**—धन; **प्राणम्**—प्राण; **पुनाति**—पवित्र कर देता है; **सः**—वह; **कुलम्**—अपने कुल को; **न तु**—किन्तु नहीं; **भूरि-मानः**—ऐसे गुण से युक्त अहंकारी ब्राह्मण।

अनुवाद

"'भले ही ब्राह्मण परिवार में जन्म लेकर कोई बारहों ब्राह्मण-गुणों से युक्त क्यों न हो, किन्तु यदि वह कमल समान नाभि वाले भगवान् कृष्ण के चरणकमलों में भक्ति नहीं रखता, तो वह उस चण्डाल के भी तुल्य नहीं है, जिसने भगवान् की सेवा में अपना मन, वचन, कर्म, सम्पत्ति तथा जीवन समर्पित कर दिया है। केवल ब्राह्मण परिवार में जन्म लेना या ब्राह्मण गुणों से सम्पन्न होना पर्याप्त नहीं है। उसे भगवान् का शुद्ध भक्त होना चाहिए। यदि श्वपच या चण्डाल भक्त होता है, तो वह न केवल अपना, अपितु अपने पूरे परिवार का उद्धार करता है, जबकि कोई ब्राह्मण यदि भक्त न होकर केवल ब्राह्मण-गुणों से सम्पन्न होता है, तो वह अपने आपको भी शुद्ध नहीं कर पाता, अपने परिवार को शुद्ध करना तो दूर रहा।'"

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (७.९.१०) में आया है और महाराज प्रह्लाद द्वारा कहा गया है। ब्राह्मण में बारह गुण होने चाहिए, जैसाकि *महाभारत* में कहा गया है :

धर्मश्च सत्यं च दमस्तपश्च
अमात्सर्यं ह्रीस्तितिक्षानसूया।
यज्ञश्च दानं च धृतिः श्रुतं च
व्रतानि वै द्वादश ब्राह्मणस्य॥

"ब्राह्मण को पूर्णतया धार्मिक होना चाहिए। उसे सत्यवादी तथा इन्द्रियों को वश में करने में समर्थ होना चाहिए। उसे कठोर तपस्या करनी चाहिए। उसे विरक्त, विनीत तथा सहिष्णु होना चाहिए। उसे किसी से द्वेष नहीं करना

चाहिए। उसे यज्ञ करने में पटु होना चाहिए और उसके पास जो भी हो उसे दान में देना चाहिए। उसे भक्ति में दृढ़ तथा वैदिक ज्ञान में निपुण होना चाहिए। ब्राह्मण के ये बारह गुण हैं।"

भगवद्गीता (१८.४२) में ब्राह्मण-गुण इस प्रकार बतलाये गये हैं :

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥

"शान्तिप्रियता, आत्मनिग्रह, तपस्या, पवित्रता, सहिष्णुता, ईमानदारी, ज्ञान, विज्ञान तथा धार्मिकता—ये ब्राह्मण के स्वाभाविक गुण हैं।"

मुक्ताफल-टीका में कहा गया है :

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्त्यार्जवविरक्तयः।
ज्ञानविज्ञानसन्तोषाः सत्यास्तिक्ये द्विषड् गुणाः॥

"मानसिक सन्तुलन, इन्द्रियनिग्रह, तपस्या, पवित्रता, सहिष्णुता, सरलता, विरक्ति, सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक ज्ञान, सन्तोष, सच्चाई तथा वेदों में दृढ़ विश्वास—ये ब्राह्मण के बारह गुण हैं।"

तोमा देखि, तोमा स्पर्शि, गाइ तोमार गुण ।
सर्वेन्द्रिय-फल,—एइ शास्त्र-निरूपण ॥ ६०॥

तोमा देखि, तोमा स्पर्शि, गाइ तोमार गुण ।
सर्वेन्द्रिय-फल,—एइ शास्त्र-निरूपण ॥ ६०॥

तोमा देखि—तुम्हें देखकर; **तोमा स्पर्शि**—तुम्हें स्पर्श करके; **गाइ तोमार गुण**—तुम्हारे दिव्य गुणों की प्रशंसा करके; **सर्व-इन्द्रिय-फल**—सभी इन्द्रियों के कार्यों की सिद्धि; **एइ**—यह; **शास्त्र-निरूपण**—शास्त्रों का आदेश।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु कहते गये, "तुम्हें देखकर, तुम्हें स्पर्श करके तथा तुम्हारे दिव्य गुणों का गान करके कोई भी व्यक्ति इन्द्रिय के सारे कार्यों के उद्देश्य को पूर्ण बना सकता है। यह प्रामाणिक शास्त्रों का निर्णय है।

तात्पर्य

इसकी पुष्टि अगले श्लोक में की गई है, जो *हरिभक्ति-सुधोदय* (१३.२) से उद्धृत है।

अक्ष्णोः फलं त्वादृश-दर्शनं हि
तनोः फलं त्वादृश-गात्र-सङ्गः ।
जिह्वा-फलं त्वादृश-कीर्तनं हि
सु-दुर्लभा भागवता हि लोके ॥ ६१ ॥

अक्ष्णोः फलं त्वादृश-दर्शनं हि
तनोः फलं त्वादृश-गात्र-सङ्गः ।
जिह्वा-फलं त्वादृश-कीर्तनं हि
सु-दुर्लभा भागवता हि लोके ॥ ६१ ॥

अक्ष्णोः—नेत्रों का; **फलम्**—फल; **त्वादृश**—तुम्हारे जैसे व्यक्ति; **दर्शनम्**—के दर्शन से; **हि**—अवश्य; **तनोः**—शरीर का; **फलम्**—फल; **त्वादृश**—तुम्हारे जैसे व्यक्ति के; **गात्र-सङ्गः**—शरीर को छूने से; **जिह्वा-फलम्**—जिह्वा की पूर्णता; **त्वादृश**—तुम्हारे जैसे व्यक्ति का; **कीर्तनम्**—महिमागान; **हि**—निश्चित रूप से; **सु-दुर्लभाः**—बहुत दुर्लभ; **भागवताः**—भगवान् के शुद्ध भक्त; **हि**—अवश्य; **लोके**—इस लोक में।

अनुवाद

"'हे वैष्णव, आप जैसे व्यक्ति का दर्शन करना दृष्टि की पूर्णता है। आपके चरणकमलों का स्पर्श करना स्पर्शेन्द्रिय की पूर्णता है। आपके सद्गुणों का गान करना जीभ का वास्तविक कार्य है, क्योंकि भौतिक जगत् में भगवान् का शुद्ध भक्त खोज पाना अतीव कठिन है।'"

एत कहि' कहे प्रभु,—"शुन, सनातन ।
कृष्ण—बड़ दयामय, पतित-पावन ॥ ६२ ॥

एत कहि' कहे प्रभु,—"शुन, सनातन ।
कृष्ण—बड़ दयामय, पतित-पावन ॥ ६२ ॥

एत कहि—यह कहकर; **कहे**—बोलते रहे; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **शुन**—कृपया सुनो; **सनातन**—मेरे प्रिय सनातन; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **बड़**—बहुत; **दया-मय**—कृपालु; **पतित-पावन**—पतित पावन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने आगे कहा, "हे सनातन, कृपया मुझसे सुनो। कृष्ण अत्यन्त दयालु हैं और सभी पतितात्माओं के उद्धारक हैं।

महा-रौरव हैते तोमा करिला उद्धार ।
कृपार समुद्र कृष्ण गम्भीर अपार'' ॥ ६३ ॥

महा-रौरव हैते तोमा करिला उद्धार ।
कृपार समुद्र कृष्ण गम्भीर अपार" ॥ ६३ ॥

महा-रौरव हैते—अत्यन्त नारकीय परिस्थितियों से; **तोमा**—तुम्हारा; **करिला उद्धार**—उद्धार किया है; **कृपार समुद्र**—वे कृपा सागर हैं; **कृष्ण**—कृष्ण; **गम्भीर**—गम्भीर; **अपार**—अपार।

अनुवाद

"हे सनातन, कृष्ण ने तुम्हें जीवन के सबसे गहरे नरक, महारौरव से बचा लिया है। वे दया के सागर हैं और उनकी लीलाएँ अत्यन्त गम्भीर हैं।"

तात्पर्य

भगवद्गीता (१८.६१) में कहा गया है—*ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।* हर एक के हृदय में रहते हुए भगवान् कृष्ण अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक कार्य करते हैं। कोई यह नहीं समझ सकता कि वे किस तरह कार्य कर रहे हैं, किन्तु जैसे ही भगवान् किसी भक्त के निष्ठावान कार्य को समझ जाते हैं तो वे उस भक्त की इस तरह सहायता करते हैं कि वह समझ ही नहीं पाता कि सारी बातें कैसे घटित हो रही हैं। यदि भक्त भगवान् की सेवा के लिए कृतसंकल्प है, तो भगवान् उसकी सहायता करने के लिए सदैव तैयार रहते हैं (*ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते*)। श्री चैतन्य महाप्रभु सनातन गोस्वामी को समझा रहे हैं कि कृष्ण कितने दयालु हैं। सनातन गोस्वामी नवाब हुसेन शाह के मन्त्री थे। वे भौतिक प्रवृत्ति वाले लोगों, विशेषतया मांसभक्षक मुसलमानों के घनिष्ठ सम्पर्क में रहते थे। यद्यपि वे ऐसे लोगों के घनिष्ठ सम्पर्क में थे, किन्तु कृष्ण की कृपा से उन्हें ऐसा सम्पर्क कभी भाता नहीं था। अतएव उन्होंने उनका साथ छोड़ दिया। श्रीनिवास आचार्य ने ठीक ही कहा है—*त्यक्त्वा तूर्णं अशेषमण्डलपति श्रेणीं सदा तुच्छवत्।* कृष्ण ने सनातन गोस्वामी को इस तरह ज्ञानालोक प्रदान किया कि वे अपना मन्त्री का उच्च पद छोड़ सके। सनातन अपने भौतिक पद को तुच्छ समझकर साधु बनने के लिए प्रस्तुत थे। सनातन

गोस्वामी के कार्यों को समझकर ही श्री चैतन्य महाप्रभु ने उनके कर्म की प्रशंसा की और कृष्ण को उनके ऊपर कृपा करने के लिए धन्यवाद दिया।

सनातन कहे,—'कृष्ण आमि नाहि जानि ।
आमार उद्धार-हेतु तोमार कृपा मानि' ॥ ६४ ॥

सनातन कहे,—'कृष्ण आमि नाहि जानि ।
आमार उद्धार-हेतु तोमार कृपा मानि' ॥ ६४ ॥

सनातन कहे—सनातन गोस्वामी ने उत्तर दिया; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण को; **आमि**—मैं; **नाहि जानि**—नहीं जानता; **आमार**—मेरे; **उद्धार-हेतु**—उद्धार का कारण; **तोमार**—आपकी; **कृपा**—दया; **मानि**—मानता हूँ।

अनुवाद

सनातन ने उत्तर दिया, "मैं कृष्ण को नहीं जानता। जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं तो एकमात्र आपकी कृपा से बन्दी-गृह से मुक्त किया जा सका हूँ।"

'केमने छूटिला' बलि प्रभु प्रश्न कैला ।
आद्योपान्त सब कथा तेँहो शुनाइला ॥ ६५ ॥

'केमने छुटिला' बलि प्रभु प्रश्न कैला ।
आद्योपान्त सब कथा तेंहो शुनाइला ॥ ६५ ॥

केमने छुटिला—तुम कैसे छूटे; **बलि**—यह कहकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **प्रश्न कैला**—प्रश्न किया; **आद्य-उपान्त**—शुरू से आखिर तक; **सब**—सब; **कथा**—कथा; **तेंहो**—उन्होंने; **शुनाइला**—वर्णन की।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी से पूछा, "तुम बन्दी-गृह से किस तरह छूटे?" अतः सनातन ने आदि से लेकर अन्त तक सारी कथा कह सुनाई।

प्रभु कहे,—"तोमार दुइ-भाइ प्रयागे मिलिला ।
रूप, अनुपम—दुँहे वृन्दावन गेला" ॥ ६६ ॥

प्रभु कहे,—"तोमार दुइ-भाइ प्रयागे मिलिला ।
रूप, अनुपम—दुँहे वृन्दावन गेला" ॥ ६६ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **तोमार**—तुम्हारे; **दुइ-भाइ**—दोनों भाई; **प्रयागे मिलिला**—मुझे प्रयाग में मिले थे; **रूप**—रूप गोस्वामी; **अनुपम**—उनका भाई अनुपम; **दुँहे**—दोनों; **वृन्दावन गेला**—वृन्दावन चले गये हैं।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मैं तुम्हारे दो भाइयों, रूप तथा अनुपम से प्रयाग में मिला था। अब वे वृन्दावन चले गये हैं।"

তপন-মিশ্রেরে আর চন্দ্রশেখরেরে ।
প্রভু-আজ্ঞায় সনাতন মিলিলা দোঁহারে ॥ ৬৭ ॥

তপন-মিশ্রেরে আর চন্দ্রশেখরেরে ।
প্রভু-আজ্ঞায় সনাতন মিলিলা দোঁহারে ॥ ৬৭ ॥

তপন-মিশ্রেরে—তপন मिश्र को; **আর**—और; **চন্দ্রশেখরেরে**—चन्द्रशेखर को; **প্রভু-আজ্ঞায়**—श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश से; **সনাতন**—सनातन; **মিলিলা**—मिले; **দোঁহারে**—उन दोनों को।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश से सनातन गोस्वामी तपन मिश्र तथा चन्द्रशेखर दोनों से मिले।

তপন-মিশ্র তবে তাঁরে কৈলা নিমন্ত্রণ ।
প্রভু কহে,—'ক্ষৌর করাহ, যাহ, সনাতন' ॥ ৬৮ ॥

তপন-মিশ্র তবে তাঁরে কৈলা নিমন্ত্রণ ।
প্রভু কহে,—'ক্ষৌর করাহ, যাহ, সনাতন' ॥ ৬৮ ॥

তপন-মিশ্র—तपन मिश्र ने; **তবে**—तब; **তাঁরে**—उनको (सनातन गोस्वामी को); **কৈলা**—किया; **নিমন্ত্রণ**—निमन्त्रण; **প্রভু কহে**—चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **ক্ষৌর করাহ**—हजामत बना लो; **যাহ**—जाओ; **সনাতন**—मेरे प्रिय सनातन।

अनुवाद

तब तपन मिश्र ने सनातन गोस्वामी को निमन्त्रण दिया और श्री चैतन्य महाप्रभु ने सनातन से कहा कि वे अपने बाल कटवा दें।

চন্দ্রশেখরেরে প্রভু কহে বোলাঞা ।
'এই বেষ দূর কর, যাহ ইঁহারে লঞা' ॥ ৬৯॥

चन्द्रशेखरेरे प्रभु कहे बोलाञा ।
'एइ वेष दूर कर, याह इँहारे लञा' ॥ ६९ ॥

चन्द्रशेखरेरे—चन्द्रशेखर को; **प्रभु कहे**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **बोलाञा**—बुलाकर; **एइ वेष**—इस प्रकार की वेशभूषा; **दूर कर**—उतार दो; **याह**—जाओ; **इँहारे लञा**—उसे अपने साथ लेकर।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने चन्द्रशेखर को बुलाकर उनसे कहा कि सनातन गोस्वामी को अपने साथ ले जाएँ। उन्होंने उनसे यह भी कहा कि सनातन की यह वेशभूषा भी उतार दें।

ভদ্র করাঞা তাঁরে গঙ্গা-স্নান করাইল ।
শেখর আনিয়া তাঁরে নূতন বস্ত্র দিল ॥৭০॥

भद्र कराञा ताँरे गङ्गा-स्नान कराइल ।
शेखर आनिया ताँरे नूतन वस्त्र दिल ॥ ७० ॥

भद्र कराञा—भद्र बनाकर; **ताँरे**—उन्हें; **गङ्गा-स्नान**—गंगा स्नान; **कराइल**—करवाया; **शेखर**—चन्द्रशेखर ने; **आनिया**—लाकर; **ताँरे**—उनको; **नूतन**—नये; **वस्त्र**—वस्त्र; **दिल**—दिये।

अनुवाद

तब चन्द्रशेखर ने सनातन गोस्वामी को भद्र पुरुष की तरह बना दिया। उन्होंने उन्हें गंगास्नान कराया और बाद में उन्हें नये कपड़े दिये।

तात्पर्य

इस श्लोक में *भद्र कराञा* शब्द महत्त्वपूर्ण हैं। लम्बे बाल, मूच्छें तथा दाढ़ी के कारण सनातन गोस्वामी दरवेश या हिप्पी जैसे लग रहे थे। चूँकि श्री चैतन्य

महाप्रभु को सनातन के यह हिप्पी जैसे लक्षण अच्छे नहीं लगे, इसीलिए उन्होंने तुरन्त चन्द्रशेखर से कहा कि उनके बाल कटवा दें। इसलिए जो भी लम्बे बालों या दाढ़ी वाला व्यक्ति इस कृष्णभावनामृत आन्दोलन में जुड़ना और हमारे साथ रहना चाहता है, उसे अपने बाल कटाकर स्वच्छ हो जाना चाहिए। श्री चैतन्य महाप्रभु के अनुयायी लम्बे बालों को आपत्तिजनक मानते हैं।

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कृपावश सनातन गोस्वामी को महारौरव से बचाया था। महारौरव वह नरक है, जहाँ कसाइयों को रखा जाता है। इस सम्बन्ध में *श्रीमद्भागवत* (५.२६.१०-१२) देखना चाहिए।

सेइ वस्त्र सनातन ना कैल अङ्गीकार ।
शुनिया प्रभुर मने आनन्द अपार ॥७१॥

सेइ वस्त्र सनातन ना कैल अङ्गीकार ।
शुनिया प्रभुर मने आनन्द अपार ॥७१॥

सेइ वस्त्र—वह नई पोशाक; **सनातन**—सनातन गोस्वामी; **ना कैल**—नहीं की; **अङ्गीकार**—स्वीकार; **शुनिया**—सुनकर; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **मने**—मन में; **आनन्द अपार**—अपार आनन्द हुआ।

अनुवाद

चन्द्रशेखर ने सनातन गोस्वामी को नये वस्त्र दिये, किन्तु सनातन ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह समाचार सुना, तो उन्हें अपार आनन्द हुआ।

मध्याह्न करिया प्रभु गेला भिक्षा करिवारे ।
सनातने लञा गेला तपन-मिश्रेर घरे ॥७२॥

मध्याह्न करिया प्रभु गेला भिक्षा करिबारे ।
सनातने लञा गेला तपन-मिश्रेर घरे ॥७२॥

मध्याह्न करिया—दोपहर का स्नान करके; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **गेला**—गये; **भिक्षा करिबारे**—भोजन करने; **सनातने**—सनातन गोस्वामी को; **लञा**—लेकर; **गेला**—गये; **तपन-मिश्रेर घरे**—तपन मिश्र के घर।

अनुवाद

दोपहर में स्नान करने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु तपन मिश्र के घर भोजन करने गये। वे अपने साथ सनातन गोस्वामी को भी लेते गये।

পাদ-প্রক্ষালন করি' ভিক্ষাতে বসিলা ।
'সনাতনে ভিক্ষা দেহ'—মিশ্রেরে কহিলা ॥৭৩॥

পাদ-প্রক্ষালন করি' ভিক্ষাতে বসিলা ।
'সনাতনে ভিক্ষা দেহ'—মিশ্রেরে কহিলা ॥৭৩॥

पाद-प्रक्षालन—पाँव धोने के बाद; **करि'**—करके; **भिक्षाते**—भोजने के लिए; **वसिला**—बैठे; **सनातने भिक्षा देह**—सनातन गोस्वामी को भोजन दो; **मिश्रेरे कहिला**—तपन मिश्रा को कहा।

अनुवाद

अपने पाँव धोने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु भोजन करने बैठ गये। उन्होंने तपन मिश्र से कहा कि सनातन गोस्वामी को भी भोजन प्रदान करें।

মিশ্র কহে,—'সনাতনের কিছু কৃত্য আছে ।
তুমি ভিক্ষা কর, প্রসাদ তাঁরে দিব পাছে' ॥৭৪॥

মিশ্র কহে,—'সনাতনের কিছু কৃত্য আছে ।
তুমি ভিক্ষা কর, প্রসাদ তাঁরে দিব পাছে' ॥৭৪॥

मिश्र कहे—तपन मिश्र ने कहा; **सनातनेर**—सनातन गोस्वामी का; **किछु**—कुछ; **कृत्य**—कार्य; **आछे**—है; **तुमि भिक्षा कर**—आप अपना प्रसाद ग्रहण कीजिये; **प्रसाद**—आपका शेष; **ताँरे**—उन्हें; **दिब**—मैं दूँगा; **पाछे**—बाद में।

अनुवाद

तब तपन मिश्र ने कहा, "सनातन को अभी कुछ कार्य करने हैं, अतः वे अभी भोजन नहीं कर सकते। भोजन समाप्त हो लेने पर मैं सनातन को शेष प्रसाद दूँगा।"

ভিক্ষা করি' মহাপ্রভু বিশ্রাম করিল ।
মিশ্র প্রভুর শেষ-পাত্র সনাতনে দিল ॥৭৫॥

भिक्षा करि' महाप्रभु विश्राम करिल ।
मिश्र प्रभुर शेष-पात्र सनातने दिल ॥ ७५ ॥

भिक्षा करि'—अपना भोजन ग्रहण करके; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **विश्राम करिल**—विश्राम किया; **मिश्र**—तपन मिश्र ने; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **शेष-पात्र**—शेष प्रसाद का पात्र; **सनातने दिल**—सनातन को दे दिया।

अनुवाद

भोजन करने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने थोड़ा आराम किया। तपन मिश्र ने चैतन्य महाप्रभु द्वारा छोड़ा गया भोजन सनातन गोस्वामी को दिया।

मिश्र सनातने दिला नूतन वसन ।
वस्त्र नाहि निला, तेंहो कैल निवेदन ॥ ७६ ॥

मिश्र सनातने दिला नूतन वसन ।
वस्त्र नाहि निला, तेंहो कैल निवेदन ॥ ७६ ॥

मिश्र—तपन मिश्र ने; **सनातने**—सनातन को; **दिला**—दिया; **नूतन वसन**—नया वस्त्र; **वस्त्र**—वस्त्र; **नाहि निला**—उन्होंने नहीं लिये; **तेंहो**—उन्होंने; **कैल**—की; **निवेदन**—विनति।

अनुवाद

जब तपन मिश्र ने सनातन को नया वस्त्र दिया, तो उन्होंने नहीं लिया। अपितु उन्होंने इस प्रकार कहा।

"मोरे वस्त्र दिते यदि तोमार हय मन ।
निज परिधान एक देह' पुरातन" ॥ ७७ ॥

"मोरे वस्त्र दिते यदि तोमार हय मन ।
निज परिधान एक देह' पुरातन" ॥ ७७ ॥

मोरे—मुझे; **वस्त्र दिते**—वस्त्र देने की; **यदि**—यदि; **तोमार**—आपकी; **हय**—है; **मन**—इच्छा; **निज**—अपना; **परिधान**—वस्त्र; **एक**—एक; **देह'**—दीजिये; **पुरातन**—पुराना।

अनुवाद

"यदि आप मुझे कोई वस्त्र देना ही चाहते हैं, तो कृपया मुझे अपना पहना हुआ कोई पुराना वस्त्र दे दें।"

तबे मिश्र पुरातन एक धुति दिल ।
तेँहो दुइ बहिर्वास-कौपीन करिल ॥७८॥

तबे मिश्र पुरातन एक धुति दिल ।
तेंहो दुइ बहिर्वास-कौपीन करिल ॥ ७८ ॥

तबे—इसके बाद; **मिश्र**—तपन मिश्र ने; **पुरातन**—पुरानी; **एक**—एक; **धुति**—धोती; **दिल**—दी; **तेंहो**—उन्होंने (सनातन गोस्वामी ने); **दुइ**—दो; **बहिर्वास**—बहिर्वास; **कौपीन**—कौपीन; **करिल**—बनाये।

अनुवाद

जब तपन मिश्र ने सनातन को एक पुरानी धोती दी, तो सनातन ने उसे फाड़कर दो अंगोछे तथा एक कौपीन बना लिया।

महाराष्ट्रीय द्विजे प्रभु मिलाइला सनातने ।
सेइ विप्र ताँरे कैल महा-निमन्त्रणे ॥७९॥

महाराष्ट्रीय द्विजे प्रभु मिलाइला सनातने ।
सेइ विप्र ताँरे कैल महा-निमन्त्रणे ॥ ७९ ॥

महाराष्ट्रीय—महाराष्ट्र के; **द्विजे**—ब्राह्मण को; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **मिलाइला**—मिलवाया; **सनातने**—सनातन गोस्वामी से; **सेइ**—उस; **विप्र**—ब्राह्मण ने; **ताँरे**—उन्हें; **कैल**—दिया; **महा**—पूर्ण; **निमन्त्रणे**—निमन्त्रण।

अनुवाद

जब चैतन्य महाप्रभु ने महाराष्ट्रीय ब्राह्मण का सनातन से परिचय कराया, तो उस ब्राह्मण ने तुरन्त ही सनातन गोस्वामी को पूर्ण भोजन का निमन्त्रण दिया।

"सनातन, तुमि यावत्काशीते रहिवा ।
तावतामार घरे भिक्षा ये करिबा" ॥८०॥

"सनातन, तुमि यावत् काशीते रहिबा ।
तावत् आमार घरे भिक्षा ये करिबा" ॥ ८० ॥

सनातन—हे सनातन; **तुमि**—आप; **यावत्**—जब तक; **काशीते**—बनारस में; **रहिबा**—

रहेंगे; **तावत्**—तब तक; **आमार**—मेरे; **घरे**—घर में; **भिक्षा**—भोजन; **ग्रे**—वह; **करिबा**—कृपया लीजिये।

अनुवाद

उस ब्राह्मण ने कहा, "हे प्रिय सनातन, तुम जब तक काशी में रहो, तब तक मेरे ही घर पर भोजन करो।"

सनातन कहे,—"आमि माधुकरी करिब ।
ब्राह्मणेर घरे केने एकत्र भिक्षा लब?" ॥ ८१ ॥

सनातन कहे—सनातन ने उत्तर दिया; **आमि**—मैं; **माधुकरी करिब**—माधुकरी करके भोजन ग्रहण करूँगा; **ब्राह्मणेर घरे**—एक ब्राह्मण के घर में; **केने**—क्यों; **एकत्र**—एक ही स्थान पर; **भिक्षा लब**—मैं भोजन ग्रहण करूँ।

अनुवाद

सनातन ने उत्तर दिया, "मैं माधुकरी की विधि अपनाऊँगा। मैं किसी ब्राह्मण के घर में पूरा भोजन क्यों स्वीकार करूँ?"

तात्पर्य

माधुकरी शब्द *मधुकर* से बना है, जो फूलों से मधु (शहद) एकत्र करने वाली मधुमक्खियों का द्योतक है। माधुकरी वह साधु है, जो किसी एक घर से पूरा भोजन ग्रहण करने के बदले द्वार-द्वार जाकर प्रत्येक गृहस्थ के घर से थोड़ा थोड़ा भोजन एकत्र करता है। इस तरह वह आवश्यकता से अधिक नहीं खाता और न ही गृहस्थों को वृथा तंग करता है। संन्यास आश्रम में व्यक्ति माँग तो सकता है, किन्तु वह भोजन नहीं पकाता है। उसका भिक्षाटन गृहस्थों के लिए बोझ नहीं बनना चाहिए। माधुकरी विधि का पालन विशेष रूप से बाबाजी लोगों को दृढ़ता से करना चाहिए, जिन्होंने *परमहंस* अवस्था प्राप्त कर ली है। वृन्दावन में आज भी यह प्रथा प्रचलित है और ऐसे अनेक स्थान हैं, जहाँ भिक्षा दी जाती है। दुर्भाग्यवश वृन्दावन में ऐसे अनेक भिखारी आ गये हैं, जो भिक्षा तो माँगते हैं, किन्तु सनातन गोस्वामी के नियमों का पालन नहीं करते। लोग उनकी नकल करके माधुकरी वृत्ति द्वारा आलसी जीवन बिताते हैं। सनातन

गोस्वामी या रूप गोस्वामी का कठोरतापूर्वक अनुसरण करना लगभग असम्भव जैसा है। इससे अच्छा तो यही होगा कि मन्दिर में कृष्ण को अर्पित किया जाने वाला भोजन स्वीकार किया जाए और सनातन गोस्वामी और रूप गोस्वामी की नकल करने का प्रयास न किया जाए।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥

"जो व्यक्ति नियमित रूप से भोजन, निद्रा, कार्य तथा आमोद-प्रमोद करता है, वह योगाभ्यास द्वारा भौतिक कष्टों को कम कर सकता है।" (*भगवद्गीता* ६.१७)

आदर्श संन्यासी गोस्वामियों द्वारा निर्धारित विधियों का कठोरता से पालन करता है।

सनातनेर वैराग्ये प्रभुर आनन्द अपार ।
भोट-कम्बल पाने प्रभु चाहे बारे बार ॥८२॥

सनातनेर वैराग्ये प्रभुर आनन्द अपार ।
भोट-कम्बल पाने प्रभु चाहे बारे बार ॥८२॥

सनातनेर—सनातन गोस्वामी के; **वैराग्ये**—वैराग्य द्वारा; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **आनन्द**—प्रसन्नता; **अपार**—असीमित; **भोट-कम्बल**—ऊनी कंबल; **पाने**—की ओर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **चाहे**—देखते हैं; **बारे बार**—बारम्बार।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी को संन्यास के सिद्धान्तों का दृढ़ता से पालन करते देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु को अपार आनन्द हुआ। किन्तु वे बारम्बार उस ऊनी कम्बल को देख रहे थे, जिसे सनातन गोस्वामी ने ओढ़ रखा था।

सनातन जानिल एइ प्रभुरे ना भाय ।
भोट त्याग करिबारे चिन्तिला उपाय ॥८३॥

सनातन जानिल एइ प्रभुरे ना भाय ।
भोट त्याग करिबारे चिन्तिला उपाय ॥८३॥

सनातन जानिल—सनातन गोस्वामी समझ गये; **एइ**—यह; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **ना भाय**—पसन्द नहीं है; **भोट**—ऊनी कंबल; **त्याग**—त्याग; **करिबारे**—करने का; **चिन्तिला**—विचार किया; **उपाय**—उपाय।

अनुवाद

चूँकि श्री चैतन्य चैतन्य महाप्रभु इस कीमती ऊनी कम्बल को बारम्बार देख रहे थे, अतः सनातन गोस्वामी समझ गये कि यह महाप्रभु को पसन्द नहीं आ रहा है, अतएव वे इसे त्यागने के उपाय पर विचार करने लगे।

এত চিন্তি' গেলা গঙ্গায় মধ্যাহ্ন করিতে ।
এক গৌড়িয়া কান্থা ধুঞা দিয়াছে শুকাইতে ॥ ৮৪ ॥

एत चिन्ति' गेला गङ्गाय मध्याह्न करिते ।
एक गौड़िया कान्था धुञा दियाछे शुकाइते ॥ ८४ ॥

एत चिन्ति'—यह सोचकर; **गेला**—गये; **गङ्गाय**—गंगा के किनारे; **मध्याह्न**—दोपहर का स्नान; **करिते**—करने के लिए; **एक**—एक; **गौड़िया**—बंगाली वैष्णव ने; **कान्था**—गुदड़ी; **धुञा**—धोकर; **दियाछे**—बिछायी थी; **शुकाइते**—सुखाने के लिए।

अनुवाद

यह सोचते हुए सनातन स्नान करने गंगा नदी के किनारे गये। वहाँ उन्होंने देखा कि बंगाल के एक साधु ने अपनी गुदड़ी धोकर सूखाने के लिए फैला रखी है।

তারে কহে,—"ওরে ভাই, কর উপকারে ।
এই ভোট লঞা এই কাঁথা দেহ' মোরে" ॥ ৮৫ ॥

तारे कहे,—"ओरे भाइ, कर उपकारे ।
एइ भोट लञा एइ काँथा देह' मोरे" ॥ ८५ ॥

तारे कहे—उन्होंने उससे कहा; **ओरे भाइ**—हे मेरे भाई; **कर उपकारे**—कृपया एक उपकार करो; **एइ भोट**—एक ऊनी कंबल; **लञा**—लेकर; **एइ**—यह; **काँथा**—चादर; **देह'**—दे दो; **मोरे**—मुझे।

अनुवाद

तब सनातन ने उस बंगाली साधु से कहा, "अरे भाई, मुझ पर एक उपकार करो। इस ऊनी कम्बल के बदले अपनी गुदड़ी मुझे दे दो।"

सेइ कहे,—"रहस्य कर प्रामाणिक हञा? ।
बहु-मूल्य भोट दिबा केन काँथा लञा?" ॥८६॥

सेइ कहे,—"रहस्य कर प्रामाणिक हञा? ।
बहु-मूल्य भोट दिबा केन काँथा लञा?" ॥८६॥

सेइ कहे—उसने कहा; **रहस्य**—मजाक; **कर**—आप कर रहे हैं; **प्रामाणिक हञा**—एक प्रामाणिक व्यक्ति होकर भी; **बहु-मूल्य**—अत्यन्त कीमती; **भोट**—ऊनी कंबल; **दिबा**—आप देंगे; **केन**—क्यों; **काँथा लञा**—यह गुदड़ी लेकर।

अनुवाद

साधु ने उत्तर दिया, "हे महाशय, आप तो सम्मानित भद्र व्यक्ति हैं। आप मुझसे परिहास क्यों कर रहे हैं? मेरी फटी गुदड़ी से आप अपना कीमती कंबल क्यों बदलना चाहेंगे?"

तेँहो कहे,—"रहस्य नहे, कहि सत्य-वाणी ।
भोट लह, तुमि देह' मोरे काँथा-खानि" ॥८७॥

तेँहो कहे,—"रहस्य नहे, कहि सत्य-वाणी ।
भोट लह, तुमि देह' मोरे काँथा-खानि" ॥८७॥

तेँहो कहे—उन्होंने कहा; **रहस्य नहे**—यह कोई मजाक नहीं है; **कहि सत्य-वाणी**—मैं सच कह रहा हूँ; **भोट लह**—यह कंबल लेकर; **तुमि**—तुम; **देह'**—दे दो; **मोरे**—मुझे; **काँथा-खानि**—गुदड़ी।

अनुवाद

सनातन ने कहा, "मैं परिहास नहीं कर रहा हूँ; मैं सच कह रहा हूँ। कृपया अपनी फटी गुदड़ी के बदले यह कम्बल ले लें।"

एत बलि' काँथा लइल, भोट ताँरे दिया ।
गोसाञिर ठाञि आइला काँथा गले दिया ॥८८॥

एत बलि' काँथा लइल, भोट ताँरे दिया ।
गोसाञिर ठाञि आइला काँथा गले दिया ॥ ८८ ॥

एत बलि'—ऐसा कहकर; **काँथा लइल**—उन्होंने गुदड़ी ले ली; **भोट**—कंबल; **ताँरे**—उसे; **दिया**—देकर; **गोसाञिर ठाञि**—श्री चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर; **आइला**—वापस आये; **काँथा**—गुदड़ी; **गले**—कँधे पर; **दिया**—रखकर।

अनुवाद

यह कहकर सनातन गोस्वामी ने कम्बल को गुदड़ी से बदल लिया। फिर वे अपने कन्धे में वह गुदड़ी डाले श्री चैतन्य महाप्रभु के पास लौट आये।

प्रभु कहे,—'तोमार भोट-कम्बल कोथा गेल?' ।
प्रभु-पदे सब कथा गोसाञि कहिल ॥ ८९ ॥

प्रभु कहे,—'तोमार भोट-कम्बल कोथा गेल?' ।
प्रभु-पदे सब कथा गोसाञि कहिल ॥ ८९ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **तोमार**—तुम्हारा; **भोट-कम्बल**—ऊनी कंबल; **कोथा गेल**—कहाँ चला गया; **प्रभु-पदे**—चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में; **सब**—सारी; **कथा**—घटना; **गोसाञि**—सनातन गोस्वामी ने; **कहिल**—कह दी।

अनुवाद

जब सनातन गोस्वामी लौटे तो महाप्रभु ने पूछा, "तुम्हारा ऊनी कम्बल कहाँ है?" तब सनातन ने महाप्रभु से सारी कहानी कह सुनाई।

प्रभु कहे,—"इहा आमि करियाछि विचार ।
विषय-रोग खण्डाइल कृष्ण ये तोमार ॥ ९० ॥
से केने राखिबे तोमार शेष विषय-भोग? ।
रोग खण्डि' सद्वैद्य ना राखे शेष रोग ॥ ९१ ॥

प्रभु कहे,—"इहा आमि करियाछि विचार ।
विषय-रोग खण्डाइल कृष्ण ये तोमार ॥ ९० ॥
से केने राखिबे तोमार शेष विषय-भोग? ।
रोग खण्डि' सद्-वैद्य ना राखे शेष रोग ॥ ९१ ॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **इहा**—यह; **आमि**—मैंने; **करियाछि विचार**—गम्भीरतापूर्वक विचार किया; **विषय-रोग**—भौतिक आकर्षण का रोग; **खण्डाइल**—अब नष्ट हो गया है; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण ने; **ग्रे**—क्योंकि; **तोमार**—तुम्हारा; **से**—भगवान् कृष्ण; **केने**—क्यों; **राखिबे**—तुम्हें रखने देंगे; **तोमार**—तुम्हारा; **शेष**—अन्तिम; **विषय-भोग**—भौतिक वस्तुओं के प्रति आकर्षण; **रोग खण्डि'**—रोग को नष्ट करके; **सत्-वैद्य**—एक अच्छा वैद्य; **ना राखे**—नहीं रखता; **शेष**—अन्तिम भाग; **रोग**—बीमारी।

अनुवाद

तब श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मैं पहले ही इस विषय पर विचार कर चुका हूँ। चूँकि भगवान् कृष्ण अत्यन्त दयालु हैं, अतएव उन्होंने भौतिक वस्तुओं के प्रति तुम्हारी आसक्ति को खण्डित कर दिया है। भला कृष्ण तुम्हें भौतिक आसक्ति का अन्तिम चिह्न भी क्यों रखने देते? रोग को नष्ट करने के बाद अच्छा वैद्य रोग के किसी भाग को बचा रहने नहीं देता।

তিন মুদ্রার ভোট গায়, মাধুকরী গ্রাস ।
ধর্ম-হানি হয়, লোক করে উপহাস'' ॥৯২॥

तिन मुद्रार भोट गाय, माधुकरी ग्रास ।
धर्म-हानि हय, लोक करे उपहास" ॥ ९२॥

तिन मुद्रार भोट—तीन सोने की मुद्रा के मूल्य वाला ऊनी कंबल; **गाय**—शरीर पर; **माधुकरी ग्रास**—तथा माधुकरी करना; **धर्म-हानि हय**—धर्म की हानि होगी; **लोक करे उपहास**—लोग मजाक उड़ायेंगे।

अनुवाद

"माधुकरी का अभ्यास तथा बहुमूल्य कम्बल ओढ़ना पारस्परिक विरोधी हैं। ऐसा करने से मनुष्य अपनी आध्यात्मिक शक्ति खो देता है और वह हँसी का पात्र बन जाता है।"

গোসাঞি কহে,—''যে খণ্ডিল কুবিষয়-ভোগ ।
তাঁর ইচ্ছায় গেল মোর শেষ বিষয়-রোগ'' ॥৯৩॥

गोसाञि कहे,—"ग्रे खण्डिल कुविषय-भोग ।
ताँर इच्छाय गेल मोर शेष विषय-रोग" ॥ ९३॥

गोसाञि कहे—सनातन गोस्वामी ने कहा; **ग्रे खण्डिल**—जिस व्यक्ति ने नष्ट किया; **कु-विषय-भोग**—पापमय भौतिक जीवन का भोग; **ताँर इच्छाय**—उन्हीं की कृपा द्वारा; **गेल**—चला गया; **मोर**—मेरा; **शेष**—अन्तिम अंश; **विषय-रोग**—भौतिक विषय भोग का रोग।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने उत्तर दिया, "पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने मुझे इस भौतिक संसार के पापमय जीवन से बचा लिया है। उनकी इच्छानुसार भौतिक आकर्षण का मेरा अन्तिम चिह्न भी अब चला गया है।"

प्रसन्न हञा प्रभु ताँरे कृपा कैल ।
ताँर कृपाय प्रश्न करिते ताँर शक्ति हैल ॥९४॥

प्रसन्न हञा प्रभु ताँरे कृपा कैल ।
ताँर कृपाय प्रश्न करिते ताँर शक्ति हैल ॥ ९४॥

प्रसन्न हञा—अत्यन्त प्रसन्न होकर; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **ताँरे**—उन्हें; **कृपा कैल**—अपनी अहैतुकी कृपा प्रदान की; **ताँर कृपाय**—उनकी कृपा द्वारा; **प्रश्न करिते**—प्रश्न करने की; **ताँर**—उन्हें; **शक्ति हैल**—शक्ति प्राप्त हुई।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी से प्रसन्न होकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें अपनी अहैतुकी कृपा प्रदान की। भगवान् की कृपा से सनातन गोस्वामी ने उनसे प्रश्न करने की आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त की।

पूर्वे यैछे राय-पाशे प्रभु प्रश्न कैला ।
ताँर शक्त्ये रामानन्द ताँर उत्तर दिला ॥९५॥
इहाँ प्रभुर शक्त्ये प्रश्न करे सनातन ।
आपने महाप्रभु करे 'तत्त्व'-निरूपण ॥९६॥

पूर्वे यैछे राय-पाशे प्रभु प्रश्न कैला ।
ताँर शक्त्ये रामानन्द ताँर उत्तर दिला ॥ ९५॥
इहाँ प्रभुर शक्त्ये प्रश्न करे सनातन ।
आपने महाप्रभु करे 'तत्त्व'-निरूपण ॥ ९६॥

पूर्वे—पहले; **यैछे**—जिस प्रकार; **राय-पाशे**—रामानन्द राय से; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु

ने; **प्रश्न कैला**—प्रश्न किया; **ताँर शक्त्ये**—उन्हीं की कृपा से; **रामानन्द**—रामानन्द राय; **ताँर**—उनके; **उत्तर**—उत्तर; **दिला**—दे पाये; **इहाँ**—यहाँ; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **शक्त्ये**—शक्ति द्वारा; **प्रश्न**—प्रश्न; **करे**—करते हैं; **सनातन**—सनातन गोस्वामी; **आपने**—स्वयं; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **करे**—करते हैं; **तत्त्व**—तथ्य; **निरूपण**—वर्णन।

अनुवाद

इसके पूर्व श्री चैतन्य महाप्रभु ने रामानन्द राय से आध्यात्मिक प्रश्न पूछे थे, जिनका रामानन्द राय ने महाप्रभु की अहैतुकी कृपा से सही-सही उत्तर दिया था। अब श्री चैतन्य महाप्रभु की कृपा से सनातन गोस्वामी महाप्रभु से प्रश्न पूछ रहे थे और स्वयं महाप्रभु ने सत्य का प्रतिपादन किया।

कृष्ण-स्वरूप-माधुर्यैश्वर्य-भक्ति-रसाश्रयम् ।
तत्त्वं सनातनायेशः कृपयोपदिदेश सः ॥९७॥

कृष्ण-स्वरूप-माधुर्य्यैश्वर्य्य-भक्ति-रसाश्रयम् ।
तत्त्वं सनातनायेशः कृपयोपदिदेश सः ॥९७॥

कृष्ण-स्वरूप—श्रीकृष्ण के वास्तविक स्वरूप के; **माधुर्य्य**—माधुर्य प्रेम के; **ऐश्वर्य्य**—ऐश्वर्य के; **भक्ति**—प्रेमभक्ति के; **रस**—दिव्य रसों के; **आश्रयम्**—आश्रय; **तत्त्वम्**—तत्त्व को; **सनातनाय**—श्री सनातन को; **ईशः**—परम भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कृपया**—अपनी अहैतुकी कृपा से; **उपदिदेश**—उपदेश दिया; **सः**—उन्होंने।

अनुवाद

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं सनातन गोस्वामी को भगवान् कृष्ण के वास्तविक स्वरूप के सम्बन्ध में बताया। उन्होंने भगवान् के माधुर्य प्रेम, उनके निजी ऐश्वर्य तथा भक्ति-रस के विषय में भी बतलाया। महाप्रभु ने ये सारे तत्त्व अपनी अहैतुकी कृपावश सनातन गोस्वामी को बतलाये।

तबे सनातन प्रभुर चरणे धरिया ।
दैन्य विनति करे दन्ते तृण लञा ॥९८॥

तबे सनातन प्रभुर चरणे धरिया ।
दैन्य विनति करे दन्ते तृण लञा ॥९८॥

तबे—फिर; **सनातन**—सनातन गोस्वामी; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **चरणे**—चरणकमलों को; **धरिया**—पकड़कर; **दैन्य**—विनम्र; **विनति**—प्रार्थना; **करे**—करते हैं; **दन्ते**—दाँतों में; **तृण**—एक तिनका; **लञा**—रखकर।

अनुवाद

अपने मुँह में एक तिनका रखकर तथा शीश झुकाकर सनातन गोस्वामी ने महाप्रभु के चरणकमल पकड़ लिए और विनीत होकर इस प्रकार कहा।

"नीच जाति, नीच-सङ्गी, पतित अधम ।
कुविषय-कूपे पड़ि' गोङाइनु जनम! ॥९९॥

"नीच जाति, नीच-सङ्गी, पतित अधम ।
कुविषय-कूपे पड़ि' गोङाइनु जनम! ॥ ९९ ॥

नीच जाति—एक नीच कुल में जन्मा; **नीच-सङ्गी**—नीच लोगों के संग में रहा; **पतित**—पतित; **अधम**—अधम; **कु-विषय-कूपे**—विषय भोग के कूएँ में; **पड़ि'**—गिरकर; **गोङाइनु**—मैंने गवाँ दिया; **जनम**—अपना जीवन।

अनुवाद

"मैं निम्न परिवार में जन्मा था और मेरे संगी भी निम्नवर्ग के लोग हैं। मैं स्वयं पतित और अधम हूँ। निस्सन्देह, मैंने अपना सारा जीवन पापमय भौतिकता के कुएँ में गिरकर बिताया है।

तात्पर्य

वास्तव में श्री सनातन गोस्वामी सारस्वत ब्राह्मण कुल के थे और अत्यन्त सुसंस्कृत तथा सुशिक्षित थे। किसी न किसी तरह उन्होंने मुस्लिम सरकार में मन्त्री-पद स्वीकार कर लिया था; अतएव उनकी संगति मांसाहारियों, शराबियों तथा निपट भौतिकतावादियों से रहती थी। सनातन गोस्वामी अपने आपको पतित मानते थे, क्योंकि ऐसे लोगों की संगति में वे भी भौतिक भोग के शिकार बन चुके थे। उस दशा में जीवन बिताते हुए उन्होंने सोचा कि उन्होंने अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ ही गँवा दिया था। कोई व्यक्ति किस तरह इस भौतिक जगत् में पतित हो जाता है, इसका कथन यहाँ गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय के सबसे बड़े अधिकारी द्वारा किया जा रहा है। वस्तुतः आज सारा जगत् भौतिक

अस्तित्व में गिरा हुआ है। हर व्यक्ति मांसाहारी, शराबी, जुआरी, स्त्रियों के पीछे भागने वाला है। लोग चार मूल पाप करके भौतिक जीवन भोग रहे हैं। पतित होते हुए भी यदि वे श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों पर आत्म-समर्पण करें, तो वे पापकर्मों के फलों से बच सकते हैं।

আপনার হিতাহিত কিছুই না জানি! ।
গ্রাম্য-ব্যবহারে পণ্ডিত, তাই সত্য মানি ॥১০০॥

आपनार हिताहित किछुइ ना जानि! ।
ग्राम्य-व्यवहारे पण्डित, ताइ सत्य मानि ॥ १०० ॥

आपनार—अपना; **हित**—भला; **अहित**—बुरा; **किछुइ**—कुछ भी; **ना जानि**—मैं नहीं जानता; **ग्राम्य-व्यवहारे**—सामान्य व्यवहार में; **पण्डित**—एक विद्वान; **ताइ सत्य मानि**—मैंने उसे सत्य मान लिया।

अनुवाद

"मैं नहीं जानता कि मेरे लिए क्या लाभप्रद है और क्या हानिप्रद है। फिर भी सामान्य व्यवहार में लोग मुझे विद्वान पंडित मानते हैं और मैं भी अपने आपको ऐसा ही सोचता हूँ।

কৃপা করি' যদি মোরে করিয়াছ উদ্ধার ।
আপন-কৃপাতে কহ 'কর্তব্য' আমার ॥১০১॥

कृपा करि' य़दि मोरे करियाछ उद्धार ।
आपन-कृपाते कह 'कर्तव्य' आमार ॥ १०१ ॥

कृपा करि'—अपनी अहैतुकी कृपा द्वारा; **य़दि**—यदि; **मोरे**—मेरा; **करियाछ**—आपने किया है; **उद्धार**—उद्धार; **आपन-कृपाते**—अपनी ही कृपा द्वारा; **कह**—कृपया कहिये; **कर्तव्य आमार**—मेरा कर्तव्य।

अनुवाद

आपने अपनी अहैतुकी कृपा द्वारा भौतिकतावादी मार्ग से मेरा उद्धार कर दिया है। अब उसी अहैतुकी कृपा से आप मुझे मेरे कर्तव्य के विषय में बतलायें।

'কে আমি', 'কেনে আমায় জারে তাপ-ত্রয়' ।
ইহা নাহি জানি—'কেমনে হিত হয়' ॥১০২॥

'के आमि', 'केने आमाय जारे ताप-त्रय' ।
इहा नाहि जानि—'केमने हित हय' ॥ १०२ ॥

के आमि—मैं कौन हूँ; **केने**—क्यों; **आमाय**—मुझे; **जारे**—कष्ट देते हैं; **ताप-त्रय**—तीन प्रकार की दु:खदायक स्थितियाँ; **इहा**—यह; **नाहि जानि**—मैं नहीं जानता; **केमने**—किस प्रकार; **हित**—मेरा भला; **हय**—हो।

अनुवाद

"मैं कौन हूँ? तीनों ताप मुझे निरन्तर कष्ट क्यों देते हैं? यदि मैं यह नहीं जानता, तो फिर मैं किस प्रकार लाभान्वित हो सकता हूँ?

तात्पर्य

तीन प्रकार के भौतिक दु:ख शरीर तथा मन से, अन्य जीवों के प्रति किये जाने वाले व्यवहारों से तथा प्राकृतिक उत्पातों से उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी हमें शारीरिक कष्ट होता है, जब हम ज्वर से पीड़ित होते हैं। हमें मानसिक कष्ट तब होता है, जब हमारे कोई निकट सम्बन्धी की मृत्यु होती है। अन्य जीव भी हमें कष्ट पहुँचाते हैं। ये जीव मानवभ्रूण, अण्डों, पसीने तथा वनस्पति से उत्पन्न होते हैं। प्राकृतिक विपदाओं द्वारा उत्पन्न कष्टदायक परिस्थितियाँ देवताओं द्वारा नियन्त्रित होती हैं। घोर शीत, वज्रपात या प्रेतों द्वारा मनुष्य सताया जा सकता है। ये तीनों प्रकार के कष्ट सदैव हमारे समक्ष रहते हैं और वे हमें गम्भीर स्थिति में जकड़ लेते हैं। *पदं पदं यद् विपदाम्।* जीवन में पग-पग पर विपदा आती है।

'সাধ্য'-'সাধন'-তত্ত্ব পুছিতে না জানি ।
কৃপা করি' সব তত্ত্ব কহ ত' আপনি" ॥১০৩॥

'साध्य'-'साधन'-तत्त्व पुछिते ना जानि ।
कृपा करि' सब तत्त्व कह त' आपनि" ॥ १०३ ॥

साध्य—आध्यात्मिक जीवन के लक्ष्य का; **साधन**—उस लक्ष्य को प्राप्त करने की विधि का; **तत्त्व**—रहस्य; **पुछिते**—पूछने की विधि; **ना जानि**—मैं नहीं जानता; **कृपा करि'**—

अपनी अहैतकी कृपा द्वारा; **सब तत्त्व**—ऐसे सभी तथ्य; **कह त' आपनि**—कृपया स्वयं मुझे बताइये।

अनुवाद

"वास्तविकता तो यह है कि मैं नहीं जानता कि जीवन के लक्ष्य तथा उसे प्राप्त करने की विधि के विषय में किस तरह पूछूँ। आप मुझ पर कृपा करके इन तत्त्वों को मुझे बतलायें।"

प्रभु कहे,—"कृष्ण-कृपा तोमाते पूर्ण हय ।
सब तत्त्व जान, तोमार नाहि ताप-त्रय ॥१०४॥

प्रभु कहे,—"कृष्ण-कृपा तोमाते पूर्ण हय ।
सब तत्त्व जान, तोमार नाहि ताप-त्रय ॥१०४॥

प्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **कहे**—कहा; **कृष्ण-कृपा**—कृष्ण की कृपा; **तोमाते**—तुम पर; **पूर्ण**—पूरी; **हय**—है; **सब तत्त्व**—सारे तथ्य; **जान**—तुम जानते हो; **तोमार**—तुम्हें; **नाहि**—नहीं है; **ताप-त्रय**—तीन प्रकार के दुःख।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "तुम पर भगवान् कृष्ण की पूरी कृपा है, जिसके कारण तुम्हें ये सारी बातें ज्ञात हैं। तुम्हारे लिए तीनों तापों का अस्तित्व नहीं है।

कृष्ण-शक्ति धर तुमि, जान तत्त्व-भाव ।
जानि' दार्ढ्य लागि' पुछे,—साधुर स्वभाव ॥१०५॥

कृष्ण-शक्ति धर तुमि, जान तत्त्व-भाव ।
जानि' दार्ढ्य लागि' पुछे,—साधुर स्वभाव ॥१०५॥

कृष्ण-शक्ति—भगवान् कृष्ण की शक्ति; **धर**—धारण करते हो; **तुमि**—तुम; **जान**—जानते हो; **तत्त्व-भाव**—वास्तविक सत्य; **जानि'**—ये सब जानते हुए भी; **दार्ढ्य लागि'**—दृढ़ता के लिए; **पुछे**—पूछता है; **साधुर**—एक साधु का; **स्वभाव**—स्वभाव।

अनुवाद

"चूँकि तुम्हें कृष्ण की शक्ति प्राप्त है, अतएव तुम इन बातों को जानते हो। किन्तु प्रश्न करना तो साधु का स्वभाव है। यद्यपि साधु इन

बातों को जानता है, किन्तु अपने में दृढ़ता लाने के लिए वह प्रश्न करता है।

अचिरादेव सर्वार्थः सिध्यत्येषामभीप्सितः ।
सद्धर्मस्यावबोधाय येषां निर्बन्धिनी मतिः ॥१०६॥

अचिरादेव सर्वार्थः सिध्यत्येषामभीप्सितः ।
सद्धर्मस्यावबोधाय ग्रेषां निर्बन्धिनी मतिः ॥ १०६ ॥

अचिरात्—बहुत जल्दी; **एव**—निश्चित रूप से; **सर्व-अर्थः**—जीवन का लक्ष्य; **सिध्यति**—सिद्ध हो जाता है; **एषाम्**—इन लोगों का; **अभीप्सितः**—इच्छित; **सत्-धर्मस्य**—प्रेमभक्ति के पथ को; **अवबोधाय**—समझने के लिए; **ग्रेषाम्**—जिनकी; **निर्बन्धिनी**—एकनिष्ठ; **मतिः**—बुद्धि।

अनुवाद

"'जो लोग अपनी आध्यात्मिक चेतना जगाने के लिए उत्सुक हैं, जिन लोगों के पास अविचल बुद्धि है और जो विचलित नहीं होते, वे अवश्य ही अति शीघ्र जीवन का इच्छित लक्ष्य प्राप्त करते हैं।

तात्पर्य

यह श्लोक *नारदीय पुराण* का है और *भक्तिरसामृतसिन्धु* (१.२.१०३) में आया है।

योग्य-पात्र हओ तुमि भक्ति प्रवर्ताइते ।
क्रमे सब तत्त्व शुन, कहिये तोमाते ॥१०७॥

ग्रोग्य-पात्र हओ तुमि भक्ति प्रवर्ताइते ।
क्रमे सब तत्त्व शुन, कहिये तोमाते ॥ १०७ ॥

ग्रोग्य-पात्र—योग्य व्यक्ति; **हओ**—हो; **तुमि**—तुम; **भक्ति**—प्रेमभक्ति के; **प्रवर्ताइते**—प्रसारण के लिए; **क्रमे**—क्रमपूर्वक; **सब**—सभी; **तत्त्व**—तथ्य; **शुन**—कृपया सुनो; **कहिये**—मैं कहूँगा; **तोमाते**—तुम्हें।

अनुवाद

"तुम भक्ति सम्प्रदाय का प्रसार करने के लिए योग्य हो। अतएव एक-एक करके मुझसे सारे तत्त्वों के विषय में सुनो। मैं तुम्हें उनके बारे में बतलाऊँगा।

जीवेर 'स्वरूप' हय——कृष्णेर 'नित्य-दास' ।
कृष्णेर 'तटस्था-शक्ति' 'भेदाभेद-प्रकाश' ॥१०८॥
सूर्यांश-किरण, यैछे अग्नि-ज्वाला-चय ।
स्वाभाविक कृष्णेर तिन-प्रकार 'शक्ति' हय ॥१०९॥

जीवेर 'स्वरूप' हय——कृष्णेर 'नित्य-दास' ।
कृष्णेर 'तटस्था-शक्ति' 'भेदाभेद-प्रकाश' ॥१०८॥
सूर्य्यांश-किरण, य्रैछे अग्नि-ज्वाला-चय ।
स्वाभाविक कृष्णेर तिन-प्रकार 'शक्ति' हय ॥१०९॥

जीवेर—जीवात्मा की; **स्वरूप**—वैधानिक अवस्था; **हय**—है; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **नित्य-दास**—नित्य सेवक; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **तटस्था**—तटस्था; **शक्ति**—शक्ति; **भेद-अभेद**—एक समान तथा भिन्न; **प्रकाश**—अभिव्यक्त; **सूर्य्य-अंश**—सूर्य का अंश; **किरण**—सूर्य प्रकाश की किरण; **य्रैछे**—जिस प्रकार; **अग्नि-ज्वाला-चय**—अग्नि का अणु अंश; **स्वाभाविक**—स्वाभाविक रूप से; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **तिन-प्रकार**—तीन प्रकार की; **शक्ति**—शक्तियाँ; **हय**—हैं।

अनुवाद

"कृष्ण का सनातन सेवक होना जीव की वैधानिक स्थिति है, क्योंकि जीव कृष्ण की तटस्था शक्ति है और वह भगवान् से एक ही समय उसी तरह अभिन्न और भिन्न है, जिस तरह सूर्य-प्रकाश या अग्नि का एक कण। कृष्ण की शक्ति के तीन प्रकार हैं।

तात्पर्य

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने इन श्लोकों का अर्थ इस प्रकार दिया है : श्री सनातन गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु से पूछा, "मैं कौन हूँ?" इसके उत्तर में महाप्रभु ने कहा, "तुम शुद्ध जीव हो। तुम न तो भौतिक शरीर हो, न ही मन तथा बुद्धि से निर्मित सूक्ष्म शरीर हो। वस्तुत: तुम आत्मा हो—सर्वोपरि आत्मा कृष्ण के शाश्वत अंश हो। अतएव तुम कृष्ण के नित्य दास हो। तुम कृष्ण की तटस्था शक्ति हो। जगत् दो प्रकार के हैं—भौतिक जगत् तथा आध्यात्मिक जगत्—और तुम भौतिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों के बीच स्थित हो। तुम्हारा सम्बन्ध भौतिक तथा आध्यात्मिक—दोनों जगतों से है, इसलिए तुम तटस्था शक्ति कहलाते हो। तुम कृष्ण से एक होकर भी भिन्न रूप से सम्बन्धित हो।

आत्मा होने के कारण तुम पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के समान गुण वाले हो, किन्तु आत्मा का एक सूक्ष्म कण होने के कारण तुम सर्वोपरि आत्मा से भिन्न हो। अतएव तुम्हारी स्थिति परमात्मा से अभिन्न होकर भी भिन्न है। जो उदाहरण दिये गये हैं, वे सूर्य तथा सूर्य-प्रकाश के सूक्ष्म कणों के एवं प्रज्ज्वलित अग्नि तथा उसके सूक्ष्म कणों के हैं।" इन श्लोकों की अन्य व्याख्या आदिलीला, अध्याय २, श्लोक ९६ में दी हुई है।

एक-देश-स्थितस्याग्नेर्ज्योत्स्ना विस्तारिणी यथा ।
परस्य ब्रह्मणः शक्तिस्तथेदमखिलं जगत् ॥ ११०॥

एक-देश-स्थितस्याग्नेर्ज्योत्स्ना विस्तारिणी यथा ।
परस्य ब्रह्मणः शक्तिस्तथेदमखिलं जगत् ॥ ११०॥

एक-देश—एक स्थान पर; **स्थितस्य**—स्थित; **अग्नेः**—अग्नि की; **ज्योत्स्ना**—चमक; **विस्तारिणी**—सब जगह फैलती है; **यथा**—जिस प्रकार; **परस्य**—परम की; **ब्रह्मणः**—परम सत्य की; **शक्तिः**—शक्ति; **तथा**—उसी प्रकार; **इदम्**—यह; **अखिलम्**—सम्पूर्ण; **जगत्**—सृष्टि।

अनुवाद

"'जिस तरह एक स्थान पर रखी अग्नि का प्रकाश सर्वत्र फैलता है, उसी तरह परब्रह्म अर्थात् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की शक्तियाँ इस ब्रह्माण्ड-भर में फैली हुई हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *विष्णु-पुराण* (१.२२.५३) का है।

कृष्णेर स्वाभाविक तिन-शक्ति-परिणति ।
चिच्छक्ति, जीव-शक्ति, आर माया-शक्ति ॥ १११॥

कृष्णेर स्वाभाविक तिन-शक्ति-परिणति ।
चिच्छक्ति, जीव-शक्ति, आर माया-शक्ति ॥ १११॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण की; **स्वाभाविक**—स्वाभाविक; **तिन**—तीन; **शक्ति**—शक्तियों का; **परिणति**—रूपांतरण; **चित्-शक्ति**—आध्यात्मिक शक्ति; **जीव-शक्ति**—आध्यात्मिक स्फुलिंग, जीवात्मा; **आर**—तथा; **माया-शक्ति**—मायाशक्ति।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण के स्वभावतः तीन शक्ति-रूपान्तर हैं। इनके नाम हैं—आध्यात्मिक शक्ति, जीव शक्ति तथा माया शक्ति।

विष्णु-शक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथा परा ।
अविद्या-कर्म-संज्ञान्या तृतीया शक्तिरिष्यते ॥ ११२॥

विष्णु-शक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथा परा ।
अविद्या-कर्म-संज्ञान्या तृतीया शक्तिरिष्यते ॥ ११२॥

विष्णु-शक्तिः—भगवान् विष्णु की शक्ति; **परा**—आध्यात्मिक; **प्रोक्ता**—कहलाती है; **क्षेत्र-ज्ञ-आख्या**—क्षेत्रज्ञ नामक शक्ति; **तथा**—और साथ ही; **परा**—आध्यात्मिक; **अविद्या**—अज्ञान; **कर्म**—सकाम कर्म; **संज्ञा**—नामक; **अन्या**—अन्य; **तृतीया**—तीसरी; **शक्तिः**—शक्ति; **इष्यते**—कहलाती है।

अनुवाद

"'मूल रूप से कृष्ण की शक्ति आध्यात्मिक है और जीव शक्ति भी आध्यात्मिक है। किन्तु एक शक्ति और भी है, जिसे माया कहते हैं, जो सकाम कर्मों से बनी होती है। यही भगवान् की तीसरी शक्ति है।'

तात्पर्य

यह श्लोक भी विष्णु पुराण (६.७.६१) से उद्धृत है। इस श्लोक की अधिक व्याख्या के लिए आदिलीला, अध्याय ७, श्लोक ११९ देखें।

शक्तयः सर्व-भावानामचिन्त्य-ज्ञान-गोचराः
यतोऽतो ब्रह्मणस्तास्तु सर्गाद्या भाव-शक्तयः ।
भवन्ति तपतां श्रेष्ठ पावकस्य यथोष्णता ॥ ११३॥

शक्तयः सर्व-भावानामचिन्त्य-ज्ञान-गोचराः
यतोऽतो ब्रह्मणस्तास्तु सर्गाद्या भाव-शक्तयः ।
भवन्ति तपतां श्रेष्ठ पावकस्य यथोष्णता ॥ ११३॥

शक्तयः—शक्तियाँ; **सर्व-भावानाम्**—सब प्रकार की सृष्टि की; **अचिन्त्य**—अद्भुत; **ज्ञान-गोचराः**—मनुष्य के ज्ञान की सीमा द्वारा; **यतः**—जिसके द्वारा; **अतः**—इसलिए; **ब्रह्मणः**—परम सत्य की; **ताः**—वे; **तु**—परन्तु; **सर्ग-आद्याः**—सृष्टि, पालन तथा प्रलय करने

वाली; **भाव-शक्तयः**—सृजनात्मक शक्तियाँ; **भवन्ति**—हैं; **तपताम्**—सभी तपस्वियों में; **श्रेष्ठ**—हे श्रेष्ठ; **पावकस्य**—अग्नि की; **यथा**—जिस प्रकार; **उष्णता**—गर्मी।

अनुवाद

"'सारी सृजनात्मक शक्तियाँ परम अद्वय सत्य में विद्यमान रहती हैं। सामान्य व्यक्ति के लिये यह अचिन्त्य होती है। ये अचिन्त्य शक्तियाँ सृजन, पालन तथा संहार की विधि में कार्य करती हैं। हे श्रेष्ठ तपस्वी, जिस तरह अग्नि में दो शक्तियाँ—ऊष्मा तथा प्रकाश—होती हैं, उसी तरह यह अचिन्त्य शक्तियाँ परम सत्य के स्वाभाविक गुण हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण भी *विष्णु-पुराण* (१.३.२) का है।

यया क्षेत्र-ज्ञ-शक्तिः सा वेष्टिता नृप सर्व-गा ।
संसार-तापानखिलानवाप्नोत्यत्र सन्ततान् ॥ ११४॥

यया क्षेत्र-ज्ञ-शक्तिः सा वेष्टिता नृप सर्व-गा ।
संसार-तापानखिलानवाप्नोत्यत्र सन्ततान् ॥ ११४॥

यया—जिसके द्वारा; **क्षेत्र-ज्ञ-शक्तिः**—श्रेत्रज्ञ शक्ति नामक जीवात्मा; **सा**—वह शक्ति; **वेष्टिता**—आवृत; **नृप**—हे राजन्; **सर्व-गा**—भौतिक तथा आध्यात्मिक जगत् में कही भी जाने में समर्थ; **संसार-तापान्**—बारम्बार जन्म-मृत्यु के चक्र के कारण उत्पन्न कष्ट; **अखिलान्**—सभी प्रकार के; **अवाप्नोति**—प्राप्त करता है; **अत्र**—इस भौतिक जगत् में; **सन्ततान्**—सकाम कर्मों के विभिन्न परिणामों को भोगने द्वारा उत्पन्न।

अनुवाद

"'हे राजन, क्षेत्रज्ञ शक्ति तो जीव है। यद्यपि उसे भौतिक जगत् अथवा आध्यात्मिक जगत् में रहने की सुविधा प्राप्त है, किन्तु वह भौतिक अस्तित्व के तीन तापों को भोगता है, क्योंकि उसे अविद्या शक्ति प्रभावित करती रहती है, जो उसकी वैधानिक स्थिति को आच्छादित कर देती है।

तात्पर्य

यह श्लोक तथा अगला श्लोक भी *विष्णु-पुराण* (६.७.६२-६३) से लिये गये हैं।

তয়া তিরোহিতত্বাচ্চ শক্তিঃ ক্ষেত্র-জ্ঞ-সংজ্ঞিতা ।
সর্ব-ভূতেষু ভূ-পাল তারতম্যেন বর্ততে ॥১১৫॥

तया तिरोहितत्वाच्च शक्तिः क्षेत्र-ज्ञ-संज्ञिता ।
सर्व-भूतेषु भू-पाल तारतम्येन वर्तते ॥ ११५ ॥

तया—उसके (अविद्या) द्वारा; **तिरोहितत्वात्**—प्रभावित होने के कारण; **च**—तथा; **शक्तिः**—शक्ति; **क्षेत्र-ज्ञ-संज्ञिता**—श्रेत्रज्ञ नामक; **सर्व-भूतेषु**—विभिन्न प्रकार के शरीरों में; **भू-पाल**—हे राजन्; **तारतम्येन**—विभिन्न मात्राओं में; **वर्तते**—रहती है।

अनुवाद

"'अविद्या के प्रभाव से आच्छादित यह जीव विभिन्न भौतिक स्थिति में विविध रूपों में विद्यमान रहता है। हे राजा, इस तरह वह कम या अधिक मात्रा में भौतिक शक्ति के प्रभाव से मुक्त होता रहता है।

অপরেয়মিতস্ত্বন্যাং প্রকৃতিং বিদ্ধি মে পরাম্ ।
জীব-ভূতাং মহা-বাহো যয়েদং ধার্যতে জগৎ ॥১১৬॥

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि में पराम् ।
जीव-भूतां महा-बाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥ ११६ ॥

अपरा—निकृष्ट शक्ति; **इयम्**—यह भौतिक जगत्; **इतः**—इससे परे; **तु**—परन्तु; **अन्याम्**—एक अन्य; **प्रकृतिम्**—शक्ति; **विद्धि**—तुम जान लो; **मे**—मेरी; **पराम्**—उत्कृष्ट (शक्ति); **जीव-भूताम्**—जीवात्मा; **महा-बाहो**—हे महाबाहु (अर्जुन); **यया**—जिसके द्वारा; **इदम्**—यह भौतिक जगत्; **धार्यते**—संचालित किया जाता है; **जगत्**—भौतिक जगत्।

अनुवाद

"'हे महाबाहु अर्जुन, इस अपरा शक्ति के अतिरिक्त मेरी एक परा शक्ति भी है, जो जीवों से बनी है, जो कि निःकृष्ट भौतिक शक्ति के स्त्रोतों का शोषण कर रहे हैं।

तात्पर्य

यह श्लोक *भगवद्गीता* (७.५) का है। यह आदिलीला, अध्याय ७, श्लोक ११८ में भी आया है।

कृष्ण भुलि' सेई जीव अनादि-बहिर्मुख ।
अतएव माया तारे देय संसार-दुःख ॥ ११७॥

कृष्ण भुलि' सेइ जीव अनादि-बहिर्मुख ।
अतएव माया तारे देय संसार-दुःख ॥ ११७॥

कृष्ण भुलि'—कृष्ण को भूलकर; **सेइ जीव**—वह जीवात्मा; **अनादि**—अनादि काल से; **बहिर्-मुख**—बाह्य रूप द्वारा आकर्षित; **अतएव**—इसलिए; **माया**—मायाशक्ति; **तारे**—उसे; **देय**—देती है; **संसार-दुःख**—भौतिक जगत् के कष्ट।

अनुवाद

"जीव अनन्त काल से कृष्ण को भूलकर बाह्य रूप द्वारा आकृष्ट होता रहा है, अतः माया उसे इस भौतिक संसार में सभी प्रकार के दुःख देती रहती है।

तात्पर्य

जब जीव कृष्ण के सनातन सेवक के रूप में अपनी वैधानिक स्थिति को भुला देता है, तब वह तुरन्त माया के पाश में फँस जाता है। जीव मूलतः कृष्ण का अंश है, अतः कृष्ण की परा शक्ति है। उसे सूक्ष्म मात्रा में अचिन्त्य शक्ति प्राप्त है, जो उसके शरीर के भीतर अचिन्त्य रीति से कार्य करती है। किन्तु जीव अपनी स्थिति भूलकर भौतिक शक्ति में स्थित रहता है। जीव तटस्था शक्ति कहलाता है, क्योंकि स्वभाव से वह आध्यात्मिक है, किन्तु विस्मृति के कारण भौतिक शक्ति में स्थित रहता है। अतएव वह या तो भौतिक शक्ति या फिर आध्यात्मिक शक्ति में रहने में समर्थ है और इसीलिए वह तटस्था शक्ति कहलाता है। इस तटस्था स्थिति में रहते हुए कभी-कभी वह बाह्य शक्ति माया से आकृष्ट होता है, तो यह उसके भौतिक जीवन का प्रारम्भ है। जब यह भौतिक शक्ति में प्रवेश करता है, तब उसे काल की तिहरी माप—भूत, वर्तमान तथा भविष्य—प्रभावित करती है। भूत, वर्तमान तथा भविष्य केवल भौतिक जगत् में होते हैं, आध्यात्मिक जगत् में ये नहीं होते। जीव शाश्वत है और वह इस भौतिक जगत् की सृष्टि के पूर्व से विद्यमान है। दुर्भाग्यवश वह कृष्ण से अपने सम्बन्ध को भूल चुका है। यहाँ पर जीव की विस्मृति को *अनादि* कहा गया है, जो यह सूचित करता है कि यह अनन्त काल से चला आ रहा है।

मनुष्य को यह समझना चाहिए कि कृष्ण स्पर्धा करके भोग करने की अपनी इच्छा के फलस्वरूप ही वह इस भौतिक जगत् में आता है।

कभु स्वर्गे उठाय, कभु नरके डुबाय ।
दण्ड्य-जने राजा येन नदीते चुबाय ॥ ११८॥

कभु स्वर्गे उठाय, कभु नरके डुबाय ।
दण्ड्य-जने राजा येन नदीते चुबाय ॥ ११८॥

कभु—कभी; **स्वर्गे**—उच्च लोकों में; **उठाय**—उठाया जाता है; **कभु**—कभी; **नरके**—नारकीय जीवन की स्थिति में; **डुबाय**—वह डुबाया जाता है; **दण्ड्य-जने**—एक अपराधी को; **राजा**—एक राजा; **येन**—जिस प्रकार; **नदीते**—नदी में; **चुबाय**—डुबाता और निकालता है।

अनुवाद

"भौतिक अवस्था में जीव कभी उच्चतर ग्रह-मण्डलों में तथा भौतिक समृद्धि तक ऊपर उठा दिया जाता है, तो कभी नरक में डुबो दिया जाता है। उसकी अवस्था ठीक उस अपराधी जैसी है, जिसे राजा पानी में बारम्बार डुबोये और निकाले जाने का दण्ड देता है।

तात्पर्य

बृहदारण्यक उपनिषद् (४.३.१६) में कहा गया है—*असङ्गो हि अयं पुरुष:*—जीव सदा भौतिक जगत् के कल्मष से मुक्त होता है। जो व्यक्ति भौतिक जगत् द्वारा दूषित नहीं होता और कृष्ण को अपने स्वामी के रूप में नहीं भूलता, वह *नित्य-मुक्त* कहलाता है। दूसरे शब्दों में, जो भौतिक कल्मष से सदा मुक्त है, वह *नित्यमुक्त* कहलाता है। नित्यमुक्त जीव सनातन काल से कृष्ण का भक्त रहा है और उसका एकमात्र प्रयास कृष्ण की सेवा करना होता है। इस तरह वह कृष्ण की नित्य दासता को कभी नहीं भूलता। जो भी जीव कृष्ण से अपने नित्य सम्बन्ध को भूल जाता है, वह भौतिकता में लिप्त होता है। भगवान् की दिव्य प्रेमाभक्ति से विहीन होकर वह सकाम कर्मों के फलों के अधीन हो जाता है। जब वह सांसारिक पुण्य कार्यों के कारण स्वर्गलोक जाता है, तो वह अपने आपको उचित स्थान पर पाता है, किन्तु जब उसे दण्डित किया जाता है, तो वह सोचता है कि वह ठीक स्थान पर नहीं आया।

इस प्रकार भौतिक प्रकृति जीव को पुरस्कृत करती है और दण्डित भी करती है। जब जीव भौतिक रूप से ऐश्वर्यवान होता है, तब प्रकृति उसे पुरस्कृत कर रही है और जब वह भौतिक दृष्टि से चिन्ताग्रस्त रहता है, तब भौतिक प्रकृति उसे दण्ड दे रही है।

भयं द्वितीयाभिनिवेशतः स्याद्
ईशादपेतस्य विपर्ययोऽस्मृतिः ।
तन्मायया तो बुध आभजेत्तं
भक्त्यैकयेशं गुरु-देवतात्मा ॥११९॥

भयम्—डर; **द्वितीय-अभिनिवेशतः**—स्वयं को भौतिक शक्ति से उत्पन्न समझने की भ्रांत धारणा द्वारा; **स्यात्**—उत्पन्न होता है; **ईशात्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण से; **अपेतस्य**—जो (बद्धजीव) विमुख हो गया; **विपर्ययः**—विपरीत परिस्थिति; **अस्मृतिः**—परम भगवान् से अपने सम्बन्ध की धारणा से रहित; **तत्-मायया**—परम भगवान् की माया शक्ति के कारण; **अतः**—इसलिए; **बुधः**—जो बुद्धिमान है; **आभजेत्**—उपासना करें; **तम्**—उनकी; **भक्त्या**—प्रेम भक्ति द्वारा; **एकया**—कर्म तथा ज्ञान से अबाधित; **ईशम्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण को; **गुरु**—आध्यात्मिक गुरु की तरह; **देवता**—आराध्य भगवान्; **आत्मा**—परमात्मा।

अनुवाद

'"जब जीव कृष्ण से भिन्न ऐसी भौतिक शक्ति द्वारा आकृष्ट होता है, तब वह भय द्वारा ग्रस्त हो जाता है। भौतिक शक्ति द्वारा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से अलग होने के कारण जीवन के प्रति उनकी दृष्टि बदल जाती है। दूसरे शब्दों में, वह कृष्ण का नित्य दास होने के बदले कृष्ण का प्रतियोगी बन जाता है। इसे *विपर्ययोऽस्मृतिः* कहते हैं। इस भूल को निरस्त करने के लिए वास्तव में विद्वान तथा उन्नत व्यक्ति पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की पूजा अपने गुरु, आराध्य देवता तथा जीवन के स्त्रोत के रूप में करता है। इस तरह वह अनन्य भक्ति की विधि से भगवान् की पूजा करता है।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (११.२.३७) का है। यह नौ योगेन्द्रों में से एक, कवि ऋषि द्वारा दिया गया उपदेश है। जब द्वारका में कृष्ण के पिता वसुदेव ने देवर्षि नारद से भक्ति के विषय में पूछा, तो यह बताया गया कि विदेह के राजा निमि को नौ योगेन्द्रों ने पहले उपदेश दिया था। जब श्री नारद मुनि ने *भागवत धर्म* अर्थात् भक्तिमय सेवा पर प्रवचन दिया, तब उन्होंने बताया कि किस तरह बद्धजीव भगवान् की दिव्य सेवा में संलग्न रहकर मुक्त हो सकता है। भगवान् समस्त बद्ध आत्माओं के परमात्मा, गुरु तथा पूज्य देव हैं। कृष्ण समस्त जीवों के न केवल परम पूज्य देव ही हैं, अपितु वे *गुरु* अथवा *चैत्यगुरु*—परमात्मा भी हैं, जो जीव को सदैव अच्छा उपदेश देते हैं। दुर्भाग्यवश जीव परम भगवान् के उपदेशों की उपेक्षा करता है। इस तरह वह अपने आपको भौतिक शक्ति मान बैठता है, जिसके फलस्वरूप वह अपने आपको शरीर मानने तथा शरीर से सम्बन्धित सामग्री को अपनी सम्पत्ति मानने से उत्पन्न भय का शिकार बन जाता है। वस्तुतः सकाम कर्म के समस्त फल आत्मा से आते हैं, किन्तु जीव अपने वास्तविक कर्तव्य को भुला देने के कारण ऐसे भय तथा आसक्ति के अनेक भौतिक परिणामों से चिन्तित रहता है। भगवान् की सेवा में दोबारा लग जाना, वही इसका एकमात्र उपाय है, जिससे भौतिक प्रकृति के अवांछित उत्पीड़न से बचा जा सकता है।

साधु-शास्त्र-कृपाय यदि कृष्णोन्मुख हय ।
सेइ जीव निस्तरे, माया ताहारे छाड़य ॥ १२० ॥

साधु-शास्त्र-कृपाय यदि कृष्णोन्मुख हय ।
सेइ जीव निस्तरे, माया ताहारे छाड़य ॥ १२० ॥

साधु—साधुओं की; **शास्त्र**—शास्त्रों की; **कृपाय**—कृपा द्वारा; **यदि**—यदि; **कृष्ण-उन्मुख हय**—कोई कृष्णभावनाभावित हो जाता है; **सेइ**—वह; **जीव**—जीवात्मा; **निस्तरे**—मुक्त हो जाता है; **माया**—माया शक्ति; **ताहारे**—उसे; **छाड़य**—छोड़ देती है।

अनुवाद

"यदि कोई बद्धजीव किसी ऐसे साधु पुरुष की कृपा से

कृष्णभावनाभावित हो जाता है, जो उसे शास्त्रों का उपदेश देता रहता है और उसे कृष्णभावनाभावित होने में सहायता देता है, तो वह बद्धजीव माया के पाश से मुक्त हो जाता है, क्योंकि माया उसे छोड़ देती है।

तात्पर्य

बद्धजीव वह है, जो कृष्ण को अपने सनातन स्वामी के रूप में भुला चुका है। बद्धजीव यह सोचकर कि वह भौतिक जगत् का उपभोग कर रहा है, इस भौतिक जगत् के तीनों कष्टों को सहन करता है। साधुगण, अर्थात् भगवान् के वैष्णव भक्त वैदिक साहित्य के आधार पर कृष्णभावना का प्रचार करते हैं। उन्हीं की कृपा से बद्धजीव में कृष्णभावना जाग्रत होती है। एक बार जाग्रत हो जाने पर वह भौतिक जीवन शैली बिताने के लिए उत्सुक नहीं रह जाता। इसके बदले वह भगवान् की दिव्य प्रेममयी सेवा में लग जाता है। जब जीव भगवान् की भक्तिमयी सेवा में लग जाता है, तब वह भौतिक भोग से विरक्त हो जाता है।

भक्तिः परेशानुभवो विरक्ति-
रन्यत्र चैष त्रिक एककालः।

(*भागवत* ११.२.४२)

मनुष्य भक्ति में अग्रसर हो रहा है या नहीं, यह जानने की यही परीक्षा है। मनुष्य को भौतिक भोग से अनासक्त हो जाना चाहिए। ऐसी अनासक्ति का अर्थ यह है कि माया ने बद्धजीव को मायावी भोग से मुक्ति दे दी है। जब मनुष्य कृष्णभावना में उन्नत हो जाता है, तब वह अपने आपको कृष्ण के समान नहीं समझता। वह जब भी अपने आपको भौतिक ऐश्वर्यों का भोक्ता मानता है, तो वह देहात्म बुद्धि से बँध जाता है। किन्तु देहात्म बुद्धि से छूटने पर वह भक्तिमय सेवा में लग सकता है, जो माया के पाश से स्वतन्त्र होने की वास्तविक स्थिति है। इसकी व्याख्या अगले श्लोक में दी गई है, जो *भगवद्गीता* (७.१४) से लिया गया है।

दैवी ह्येषा गुण-मयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥ १२१ ॥

दैवी ह्येषा गुण-मयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥ १२१ ॥

दैवी—परम भगवान् से सम्बन्धित; **हि**—निश्चित रूप से; **एषा**—यह; **गुण-मयी**—तीन गुणों से निर्मित; **मम**—मेरी; **माया**—बहिरंगा शक्ति; **दुरत्यया**—लाँघने में अत्यन्त कठिन; **माम्**—मेरे प्रति; **एव**—निश्चित रूप से; **ये**—जो; **प्रपद्यन्ते**—पूर्ण शरणागत हो जाते हैं; **मायाम्**—माया शक्ति को; **एताम्**—इस; **तरन्ति**—पार कर लेते हैं; **ते**—वे।

अनुवाद

"'भौतिक प्रकृति के तीन गुणों से युक्त मेरी इस दैवी शक्ति का अतिक्रमण करना कठिन है। किन्तु जिन्होंने मेरी शरण ले रखी है, वे इसे आसानी से पार कर सकते हैं।'

माया-मुग्ध जीवेर नाहि स्वतः कृष्ण-ज्ञान ।
जीवेरे कृपाय कैला कृष्ण वेद-पुराण ॥ १२२॥

माया-मुग्ध जीवेर नाहि स्वतः कृष्ण-ज्ञान ।
जीवेरे कृपाय कैला कृष्ण वेद-पुराण ॥ १२२॥

माया-मुग्ध—माया-शक्ति द्वारा मोहित; **जीवेर**—बद्धजीव को; **नाहि**—नहीं है; **स्वतः**—स्वाभाविक रूप से; **कृष्ण-ज्ञान**—भगवान् कृष्ण का ज्ञान; **जीवेरे**—बद्ध जीव के प्रति; **कृपाय**—कृपा करके; **कैला**—प्रदान किये; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण ने; **वेद-पुराण**—वैदिक शास्त्र तथा पुराण (वैदिक ग्रन्थों के पूरक ग्रन्थ)।

अनुवाद

"बद्धजीव अपने खुद के प्रयत्न से अपनी कृष्णभावना को जाग्रत नहीं कर सकता। किन्तु भगवान् कृष्ण ने अहैतुकी कृपावश वैदिक साहित्य तथा इसके पूरक पुराणों का सृजन किया।

तात्पर्य

बद्धजीव भगवान् की भ्रामक शक्ति माया द्वारा मोहग्रस्त हो जाता है। माया का कार्य ही बद्धजीव को कृष्ण के साथ उसके सम्बन्ध को भुलाये रखना है। इस तरह जीव ब्रह्मरूपी अपने वास्तविक परिचय को भूल जाता है और अपनी वास्तविक स्थिति को अनुभव न करके अपने आपको भौतिक शक्ति की उपज मानता है। *श्रीमद्भागवत* (१.७.५) के अनुसार :

यया सम्मोहितो जीव आत्मानं त्रिगुणात्मकम्।
परोऽपि मनुतेऽनर्थं तत्कृतं चाभिपद्यते॥

"इस बाह्य शक्ति माया के कारण, भौतिक प्रकृति के तीन गुणों से परे होने पर भी जीव अपने आपको भौतिक उपज मानता है और भौतिक दु:खों की प्रतिक्रिया को सहता है।"

यह विवरण है बद्धजीव पर माया के कार्य का। अपने आपको भौतिक शक्ति की उपज मानकर बद्धजीव भौतिक शक्ति की सेवा में कई प्रकार से लगा रहता है। वह काम, क्रोध, लोभ तथा द्वेष का दास बन जाता है। इस तरह वह माया का पूर्ण रूप से दास बन जाता है। बाद में मोहग्रस्त जीव मानसिक तर्कवितर्क का दास बन जाता है, किन्तु प्रत्येक दशा में वह माया द्वारा आच्छादित ही रहता है। कृष्ण ने व्यासदेव के अवतार में अपनी अहैतुकी कृपा तथा दयावश विविध वैदिक ग्रन्थों का संकलन किया। व्यासदेव कृष्ण के *शक्त्यावेश अवतार* हैं। उन्होंने कृपा करके बद्धजीवों को जाग्रत करने के लिए इन ग्रन्थों को प्रस्तुत किया है। दुर्भाग्यवश, आजकल असुर सारे बद्धजीवों का मार्गदर्शन करते हैं, जो वैदिक ग्रन्थों को पढ़ने की परवाह नहीं करते। यद्यपि ज्ञान का विशाल खजाना विद्यमान है, किन्तु लोग व्यर्थ का साहित्य पढ़ने में लगे हुए हैं, जो माया के पाश से छूटने का कोई उपाय नहीं बताता। वैदिक ग्रन्थों का उद्देश्य निम्नलिखित श्लोकों में समझाया गया है।

'शास्त्र-गुरु-आत्म'-रूपे आपनारे जानान ।
'कृष्ण मोर प्रभु, त्राता'——जीवेर हय ज्ञान ॥ १२३॥

'शास्त्र-गुरु-आत्म'-रूपे आपनारे जानान ।
'कृष्ण मोर प्रभु, त्राता'——जीवेर हय ज्ञान ॥ १२३॥

शास्त्र-गुरु-आत्म-रूपे—वैदिक शास्त्र, आध्यात्मिक गुरु तथा परमात्मा के रूप में; **आपनारे जानान**—अपनी जानकारी देते हैं; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **मोर**—मेरे; **प्रभु**—स्वामी; **त्राता**—उद्धारकर्ता; **जीवेर**—बद्ध जीव को; **हय**—होता है; **ज्ञान**—ज्ञान।

अनुवाद

"कृष्ण आत्मविस्मृत बद्धजीव को वैदिक ग्रन्थों, स्वरूपसिद्ध गुरु

तथा परमात्मा के माध्यम से शिक्षा देते हैं। जीव इनके द्वारा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को उनके यथार्थ रूप में समझ सकता है और यह समझ सकता है कि भगवान् कृष्ण उसके सनातन स्वामी तथा माया के पाश से उद्धार करने वाले हैं। इस तरह वह अपने बद्ध जीवन का वास्तविक ज्ञान प्राप्त कर सकता है और मुक्ति प्राप्त करने का उपाय जान सकता है।

तात्पर्य

अपनी वास्तविक स्थिति भूल जाने के कारण बद्धजीव शास्त्र, गुरु तथा अपने हृदय के भीतर स्थित परमात्मा की सहायता ले सकता है। कृष्ण हर एक के हृदय में परमात्मा के रूप में उपस्थित रहते हैं। जैसाकि *भगवद्गीता* (१८.६१) में कहा गया है :

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥

"हे अर्जुन, भगवान् हर एक के हृदय में स्थित हैं और भौतिक शक्ति माया से निर्मित यन्त्र पर सवार हुए सारे जीवों की गतिविधियों का निर्देशन करते हैं।"

कृष्ण शक्त्यावेश अवतार व्यासदेव के रूप में बद्धजीव को वैदिक ग्रन्थों के माध्यम से शिक्षा देते हैं। बाह्य रूप से कृष्ण गुरु के रूप में आविर्भूत होते हैं और बद्धजीव को कृष्णभावनामृत प्राप्त करने का प्रशिक्षण देते हैं। जब बद्धजीव की मूल कृष्णभावना पुनर्जाग्रत हो जाती है, तब वह भौतिक पाश से मुक्त हो जाता है। इस तरह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् बद्धजीव की तीन प्रकार से सहायता करते हैं—शास्त्र, गुरु तथा हृदय के भीतर स्थित परमात्मा के द्वारा। भगवान् बद्धजीव के उद्धारक हैं और सारे जीवों के परमेश्वर माने जाते हैं। *भगवद्गीता* (१८.६६) में कृष्ण कहते हैं :

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

"सभी प्रकार के धर्मों को त्यागकर मात्र मेरी शरण में आ जाओ। मैं तुम्हें सभी पापकर्मों से मुक्त कर दूँगा। डरो मत।" यही उपदेश सम्पूर्ण वैदिक साहित्य में पाया जाता है। साधु, शास्त्र तथा गुरु, कृष्ण के प्रतिनिधि के रूप में कार्य

करते हैं और कृष्णभावनामृत आन्दोलन भी सारे विश्व में फैल रहा है। जो भी इस अवसर का लाभ उठाता है, वह मुक्त हो जाता है।

বেদ-শাস্ত্র কহে—'সম্বন্ধ', 'অভিধেয়', 'প্রয়োজন' ।
'কৃষ্ণ'—প্রাপ্য সম্বন্ধ, 'ভক্তি'—প্রাপ্ত্যের সাধন ॥১২৪॥

वेद-शास्त्र कहे—'सम्बन्ध', 'अभिधेय', 'प्रयोजन' ।
'कृष्ण'—प्राप्य सम्बन्ध, 'भक्ति'—प्राप्त्येर साधन ॥ १२४॥

वेद-शास्त्र कहे—वैदिक शास्त्र सिखाते हैं; **सम्बन्ध**—बद्धजीव का भगवान् से सम्बन्ध; **अभिधेय**—बद्धजीव द्वारा उस सम्बन्ध का पुनर्जागरण करने के लिए नियतकर्म; **प्रयोजन**—तथा बद्धजीव द्वारा प्राप्त करने योग्य चरम लक्ष्य; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **प्राप्य**—जागृत करने के लिए; **सम्बन्ध**—मूल सम्बन्ध; **भक्ति**—भक्तिमय सेवा; **प्राप्त्येर साधन**—कृष्ण को प्राप्त करने का साधन।

अनुवाद

"वैदिक ग्रन्थ कृष्ण के साथ जीव के सनातन सम्बन्ध के विषय में जानकारी देते हैं। यही *सम्बन्ध* कहलाता है। जीव द्वारा इस सम्बन्ध की जानकारी तथा तदनुसार कर्म करना *अभिधेय* कहलाता है। भगवद्धाम लौट जाना जीवन का चरम लक्ष्य है, जिसे *प्रयोजन* कहते हैं।

অভিধেয়-নাম 'ভক্তি', 'প্রেম'—প্রয়োজন ।
পুরুষার্থ-শিরোমণি প্রেম মহা-ধন ॥১২৫॥

अभिधेय-नाम 'भक्ति', 'प्रेम'—प्रयोजन ।
पुरुषार्थ-शिरोमणि प्रेम महा-धन ॥ १२५॥

अभिधेय—अपना सम्बन्ध पुनर्जागृत करने की क्रियाएं; **नाम**—नामक; **भक्ति**—प्रेममयी सेवा; **प्रेम**—भगवत्प्रेम; **प्रयोजन**—जीवन का चरम लक्ष्य; **पुरुष-अर्थ-शिरोमणि**—जीवात्मा का सर्वश्रेष्ठ प्रयोजन; **प्रेम**—भगवत्प्रेम; **महा-धन**—सर्वश्रेष्ठ धन।

अनुवाद

"भक्ति अथवा भगवान् की तुष्टि के लिए इन्द्रियों से काम करना अभिधेय कहलाता है, क्योंकि इससे मनुष्य का मूल भगवत्प्रेम विकसित हो सकता है, जो जीवन का लक्ष्य है। यह लक्ष्य जीव का सर्वोच्च हित है

और सबसे बड़ा धन है। इस तरह भगवान् के प्रति दिव्य प्रेमाभक्ति प्राप्त होती है।

तात्पर्य

बद्धजीव बाह्य भौतिक शक्ति माया द्वारा मोहग्रस्त रहता है, जो उसे नाना प्रकार की इन्द्रियतृप्ति में लगाये रखती है। भौतिक कार्यों में व्यस्त रहने के कारण जीव की मूल कृष्णभावना आच्छादित हो जाती है। किन्तु सारे जीवों के परम पिता के रूप में कृष्ण चाहते हैं कि उनके सारे पुत्र भगवद्धाम वापस आयें; इसीलिए वे *भगवद्गीता* जैसा वैदिक ग्रन्थ प्रदान करने के लिए स्वयं आते हैं। वे गुरु के रूप में कार्य करने वाले अपने विश्वस्त सेवकों को नियुक्त करते हैं और इस तरह बद्धजीवों को ज्ञान प्रदान करते हैं। प्रत्येक जीव के हृदय में उपस्थित रहने के कारण भगवान् जीवों को विवेक (अन्तःकरण में कर्तव्य बोध) प्रदान करते हैं, जिससे वे वेदों तथा गुरु को अंगीकार करते हैं। इस तरह जीव अपनी वैधानिक स्थिति एवं भगवान् के साथ अपने सम्बन्ध को समझ सकता है। जैसाकि भगवान् ने स्वयं *भगवद्गीता* (१५.१५) में स्थापना की है—*वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः*—वेदान्त के अध्ययन से मनुष्य परमेश्वर के साथ अपने सम्बन्ध को भलीभाँति जान सकता है और फिर तदनुसार कर्म कर सकता है। इस तरह अन्ततः भगवान् की प्रेमाभक्ति प्राप्त की जा सकती है। भगवान् को समझना जीव के हित में है। दुर्भाग्यवश, जीवों ने भुला दिया है कि यह उनके सर्वोच्च हित में है; इसीलिए *श्रीमद्भागवत* (७.५.३१) का कथन है *न ते विदुः स्वार्थ गतिं हि विष्णुम्।*

प्रत्येक व्यक्ति जीवन का आखरी लक्ष्य प्राप्त करना चाहता है, किन्तु भौतिक शक्ति माया में लिप्त रहने के कारण हम इन्द्रियतृप्ति में अपना समय गँवाते हैं। वैदिक साहित्य के अध्ययन से, जिनमें से *भगवद्गीता* सार-रूप है, मनुष्य कृष्णभावना को प्राप्त करता है। इस तरह वह भक्ति में लगता है, जो *अभिधेय* कहलाती है। जब जीव भगवत्प्रेम वास्तव में विकसित कर लेता है, तब यह *प्रयोजन* कहलाता है, जो जीव का चरम लक्ष्य है। दूसरे शब्दों में, जब मनुष्य पूरी तरह कृष्णभावनाभावित हो जाता है, तब कहा जा सकता है कि उसने जीवन की पूर्णता प्राप्त कर ली है।

কৃষ্ণ-মাধুর্য-সেবানন্দ-প্রাপ্তির কারণ ।
কৃষ্ণ-সেবা করে, আর কৃষ্ণ-রস-আস্বাদন ॥ ১২৬ ॥

कृष्ण-माधुर्य्र-सेवानन्द-प्राप्तिर कारण ।
कृष्ण-सेवा करे, आर कृष्ण-रस-आस्वादन ॥ १२६ ॥

कृष्ण-माधुर्य्र—कृष्ण से अन्तरंग प्रेम सम्बन्ध की; **सेवा-आनन्द**—उनकी सेवा करने के आनन्द की; **प्राप्तिर**—प्राप्ति; **कारण**—कारणवश; **कृष्ण-सेवा करे**—कोई कृष्ण की सेवा करता है; **आर**—तथा; **कृष्ण-रस**—ऐसी सेवा के रस का; **आस्वादन**—आस्वादन।

अनुवाद

"जब किसी को कृष्ण के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध होने का दिव्य आनन्द प्राप्त हो जाता है, तो वह उनकी सेवा करता है और कृष्णभावनामृत-रस का आस्वादन करता है।

ইহাতে দৃষ্টান্ত—যৈছে দরিদ্রের ঘরে ।
'সর্বজ্ঞ' আসি' দুঃখ দেখি' পুছয়ে তাহারে ॥ ১২৭ ॥

इहाते दृष्टान्त—य्रैछे दरिद्रेर घरे ।
'सर्वज्ञ' आसि' दुःख देखि' पुछये ताहारे ॥ १२७ ॥

इहाते—इस सम्बन्ध में; **दृष्टान्त**—एक उदाहरण; **य्रैछे**—जिस प्रकार; **दरिद्रेर घरे**—एक गरीब व्यक्ति के घर में; **सर्व-ज्ञ**—एक ज्योतिषी; **आसि'**—आकर; **दुःख**—दुःखमय स्थिति; **देखि'**—देखकर; **पुछये ताहारे**—उससे पूछता है।

अनुवाद

"निम्नलिखित दृष्टान्त प्रस्तुत किया जा सकता है। एक बार एक निर्धन व्यक्ति के घर एक विद्वान ज्योतिषी आया और उसकी दुःखी दशा देखकर उसने पूछा।

तात्पर्य

कभी-कभी जब हम दुःखी अवस्था में होते हैं या भविष्य जानना चाहते हैं, तो ज्योतिषी या हस्तरेखाविद के पास जाते हैं। जीव बद्ध अवस्था में भौतिक अस्तित्व के तीन तापों से सदैव पीड़ित रहता है। ऐसी दशा में वह अपनी स्थिति जानने के लिए उत्सुक रहता है। उदाहरणार्थ, सनातन गोस्वामी पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु के पास यह पूछने के लिए गये कि वे

कष्ट में क्यों हैं। सारे बद्धजीवों की ऐसी ही दशा है। हम सब सदैव दुःखी दशा में रहते हैं और जो बुद्धिमान है, उसका जिज्ञासु होना स्वाभाविक है। यह दशा *ब्रह्मजिज्ञासा* कहलाती है। *अथातो ब्रह्मजिज्ञासा* (*वेदान्त-सूत्र* १.१.१)। यहाँ पर *ब्रह्म* सूचक है वैदिक साहित्य का। बद्धजीव के निरन्तर दुःखी होने का कारण जानने के लिए मनुष्य को वैदिक साहित्य से परामर्श लेना चाहिए। वैदिक साहित्य बद्धजीव को भौतिक अस्तित्व की दुःखमयी अवस्था से उद्धार करने के ही निमित्त हैं। इस अध्याय में ज्योतिषी सर्वज्ञ तथा एक निर्धन व्यक्ति की कहानी अत्यन्त शिक्षाप्रद है।

'तुमि केने दुःखी, तोमार आछे पितृ-धन ।
तोमारे ना कहिल, अन्यत्र छाड़िल जीवन'' ॥ १२८॥

'तुमि केने दुःखी, तोमार आछे पितृ-धन ।
तोमारे ना कहिल, अन्यत्र छाड़िल जीवन" ॥ १२८॥

तुमि—तुम; **केने**—क्यों; **दुःखी**—दुःखी; **तोमार**—तुम्हारी; **आछे**—है; **पितृ-धन**—पिता की सम्पत्ति; **तोमारे**—तुम्हें; **ना कहिल**—उसने नहीं बताया; **अन्यत्र**—कहीं ओर; **छाड़िल**—त्याग दिया; **जीवन**—अपना जीवन।

अनुवाद

"ज्योतिषी ने पूछा, 'तुम दुःखी क्यों हो? तुम्हारा पिता अत्यन्त धनवान था, किन्तु अन्यत्र मरने के कारण उसने अपनी सम्पत्ति के बारे में तुम्हें नहीं बताया।'

सर्वज्ञेर वाक्ये करे धनेर उद्देशे ।
ऐछे वेद-पुराण जीवे 'कृष्ण' उपदेशे ॥ १२९॥

सर्वज्ञेर वाक्ये करे धनेर उद्देशे ।
ऐछे वेद-पुराण जीवे 'कृष्ण' उपदेशे ॥ १२९॥

सर्वज्ञेर—ज्योतिषी के; **वाक्ये**—वचन; **करे**—देते हैं; **धनेर**—सम्पत्ति की; **उद्देशे**—सूचना; **ऐछे**—उसी प्रकार; **वेद-पुराण**—वैदिक ग्रन्थ; **जीवे**—बद्ध जीवात्माओं के प्रति; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण का; **उपदेशे**—बोध।

अनुवाद

जिस तरह सर्वज्ञ ज्योतिषी के शब्दों से निर्धन व्यक्ति के खजाने का पता चला, उसी तरह जब कोई यह जिज्ञासा करता है कि वह दु:खी अवस्था में क्यों है, तो वैदिक ग्रन्थ उसे कृष्णभावनामृत के विषय में उपदेश देते हैं।

सर्वज्ञेर वाक्ये मूल-धन अनुबन्ध ।
सर्व-शास्त्रे उपदेशे, 'श्री-कृष्ण'—सम्बन्ध ॥ १३०॥

सर्वज्ञेर वाक्ये मूल-धन अनुबन्ध ।
सर्व-शास्त्रे उपदेशे, 'श्री-कृष्ण'—सम्बन्ध ॥ १३०॥

सर्वज्ञेर—ज्योतिषी के; **वाक्ये**—वचनों द्वारा; **मूल-धन**—सम्पत्ति से; **अनुबन्ध**—सम्बन्ध; **सर्व-शास्त्रे**—सभी वैदिक शास्त्र; **उपदेशे**—निर्देशित करते हैं; **श्री-कृष्ण**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण से; **सम्बन्ध**—सम्बन्ध।

अनुवाद

"ज्योतिषी के शब्दों से उस खजाने से निर्धन व्यक्ति का सम्बन्ध स्थापित हुआ। उसी तरह वैदिक साहित्य हमें पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण के साथ अपने वास्तविक सम्बन्ध के विषय में उपदेश देता है।

तात्पर्य

भगवद्गीता (७.२६) में श्रीकृष्ण कहते हैं :

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन॥

"हे अर्जुन, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में मैं वह सब जानता हूँ, जो भूतकाल में घटित हो चुका है, वर्तमान में घटित हो रहा है और आगे होगा। मैं सारे जीवों को भी जानता हूँ, किन्तु मुझे कोई नहीं जानता।"

इस तरह कृष्ण बद्धजीव की दु:खमय स्थिति का कारण जानते हैं। इसीलिए वे अपने परम धाम से अवतरित होकर बद्धजीव को उपदेश देने और अपने साथ उसके सम्बन्ध की विस्मृति के विषय में बताने के लिए आते हैं। कृष्ण अपने सम्बन्धों में वृन्दावन में तथा कुरुक्षेत्र के युद्ध में अपने आपको

दिखलाते हैं, जिससे लोग उनके प्रति आकृष्ट होकर भगवद्धाम वापस जा सकें। कृष्ण ने *भगवद्गीता* में यह भी कहा है कि वे समस्त ब्रह्माण्डों के स्वामी, हर वस्तु के भोक्ता तथा हर एक के मित्र हैं। *भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरं। सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति* (*भगवद्गीता* ५.२९)। यदि हम कृष्ण के साथ अपने मूल सम्बन्ध को जाग्रत कर लें, तो इस संसार में हमारी दु:खी दशा समाप्त हो जायेगी। हर व्यक्ति भौतिक संसार की दु:खी दशा के साथ सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास कर रहा है, किन्तु कृष्ण से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किये बिना मूल समस्याएँ हल नहीं की जा सकतीं।

'बापेर धन आछे'—ज्ञाने धन नाहि पाय ।
तबे सर्वज्ञ कहे तारे प्राप्तिर उपाय ॥ १३१॥

'बापेर धन आछे'—ज्ञाने धन नाहि पाय ।
तबे सर्वज्ञ कहे तारे प्राप्तिर उपाय ॥ १३१॥

बापेर धन आछे—पिता के पास कुछ सम्पत्ति है; **ज्ञाने**—इस ज्ञान द्वारा; **धन**—सम्पत्ति; **नाहि पाय**—कोई प्राप्त नहीं कर सकता; **तबे**—तब; **सर्वज्ञ**—ज्योतिषी; **कहे**—बताता है; **तारे**—उस गरीब व्यक्ति को; **प्राप्तिर उपाय**—उस सम्पत्ति को प्राप्त करने का उपाय।

अनुवाद

"वह निर्धन व्यक्ति अपने पिता के धन के प्रति आश्वस्त होकर भी उसे केवल ऐसे ज्ञान के बल पर प्राप्त नहीं कर सकता था। इसीलिए ज्योतिषी को वह साधन बताना पड़ा, जिससे वह उस खजाने को वास्तव में पा सके।

'एइ स्थाने आछे धन'—यदि दक्षिणे खुदिबे ।
'भीमरुल-बरुली' उठिबे, धन ना पाइबे ॥ १३२॥

'एइ स्थाने आछे धन'—यदि दक्षिणे खुदिबे ।
'भीमरुल-बरुली' उठिबे, धन ना पाइबे ॥ १३२॥

एइ स्थाने—इस स्थान पर; **आछे**—है; **धन**—खजाना; **यदि**—यदि; **दक्षिणे**—दक्षिण

दिशा में; **खुदिबे**—तुम खोदोगे; **भीमरुल-बरुली**—बर्रे तथा मधुमक्खियाँ; **उठिबे**—निकलेंगी; **धन**—खजाना; **ना पाइबे**—तुम्हें नहीं प्राप्त होगा।

अनुवाद

"'ज्योतिषी ने कहा, 'खजाना इस स्थान में है, किन्तु यदि तुम दक्षिण दिशा में खोदोगे, तो बर्र तथा मधुमक्खियाँ निकलेंगी और तुम अपना खजाना नहीं पा सकोगे।

'पश्चिमे' खुदिबे, ताहा 'यक्ष' एक हय ।
से विघ्न करिबे,—धने हात ना पड़य ॥ १३३॥

'पश्चिमे' खुदिबे, ताहा 'यक्ष' एक हय ।
से विघ्न करिबे,—धने हात ना पड़य ॥ १३३॥

पश्चिमे—पश्चिम दिशा में; **खुदिबे**—यदि तुम खोदते हो; **ताहा**—वहाँ; **यक्ष**—प्रेत; **एक**—एक; **हय**—है; **से**—वह; **विघ्न करिबे**—बाधाएँ उत्पन्न करेगा; **धने**—खजाने पर; **हात**—हाथ; **ना**—न; **पड़य**—स्पर्श कर सकें।

अनुवाद

"'यदि तुम पश्चिम दिशा में खोदोगे, तो वहाँ एक प्रेत है। वह ऐसा विघ्न उत्पन्न करेगा कि तुम उस खजाने को हाथ भी नहीं लगा सकोगे।

'उत्तरे' खुदिले आछे कृष्ण 'अजगरे' ।
धन नाहि पावे, खुदिते गिलिबे सवारे ॥ १३४॥

'उत्तरे' खुदिले आछे कृष्ण 'अजगरे' ।
धन नाहि पाबे, खुदिते गिलिबे सबारे ॥ १३४॥

उत्तरे—उत्तर दिशा में; **खुदिले**—यदि तुम खोदते हो; **आछे**—है; **कृष्ण**—काला; **अजगरे**—साँप; **धन**—खजाना; **नाहि**—नहीं; **पाबे**—तुम प्राप्त करोगे; **खुदिते**—खोदने पर; **गिलिबे**—निगल जायेगा; **सबारे**—सबको।

अनुवाद

"'यदि तुम उत्तर दिशा में खोदोगे, तो वहाँ एक विशाल काला साँप है। यदि तुमने खजाना खोदने का प्रयास किया, तो वह तुम्हें निगल जायेगा।

पूर्व-दिके ताते माटी अल्प खुदिते ।
धनेर झारि पड़िबेक तोमार हातेते ॥ १३५ ॥

पूर्व-दिके—पूर्व दिशा में; **ताते**—वहाँ; **माटी**—मिट्टी; **अल्प**—अल्प मात्रा में; **खुदिते**—खोदने पर; **धनेर**—खजाने का; **झारि**—पात्र; **पड़िबेक**—तुम्हें मिलेगा; **तोमार**—तुम्हारे; **हातेते**—हाथों में।

अनुवाद

"'किन्तु यदि तुम पूर्व की ओर थोड़ी-सी भी मिट्टी खोदोगे, तो तुरन्त ही खजाने का पात्र तुम्हारे हाथों में आ जायेगा।'

तात्पर्य

पुराणों समेत सारे वैदिक ग्रन्थों का कहना है कि बद्धजीव की स्थिति के अनुसार विभिन्न विधियाँ हैं यथा कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड, योग तथा भक्तियोग। *कर्मकाण्ड* की तुलना बर्रों तथा मधुमक्खियों से की गई है, जो उनकी शरण में जाने वालों को केवल काटती हैं। *ज्ञानकाण्ड* अर्थात् तर्कवितर्क की प्रक्रिया प्रेत के समान है, जो मानसिक उत्पात मचाता है। *योग* की उपमा काले साँप से की गई है, जो *कैवल्य* के निर्विशेष अनुशीलन से लोगों को निगल जाता है। किन्तु जो कोई भक्तियोग को ग्रहण करता है, वह तुरन्त सफल होता है। दूसरे शब्दों में, भक्तियोग के द्वारा मनुष्य छिपे खजाने को बिना कठिनाई के प्राप्त कर सकता है।

सभी प्रामाणिक शास्त्रों और वैदिक आदेशों के लक्ष्य कृष्ण हैं, जैसाकि उन्होंने स्वयं *भगवद्गीता* (१५.१५) में कहा है—*वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः।* चूँकि वेद कृष्ण की खोज करने और उनके चरणकमलों की शरण ग्रहण करने का आदेश देते हैं और भक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी वैदिक विधि से यह सम्भव नहीं है, इसलिए व्यक्ति को भक्तिमय सेवा अपनानी चाहिए। *भगवद्गीता* (१८.५५) के अनुसार केवल भक्तियोग द्वारा निश्चित रूप से ऐसा होगा। *भक्त्या मामभिजानाति।* यही वेदों का निष्कर्ष है और पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की खोज में सच्चे मन से लगे हुए व्यक्ति को यही विधि स्वीकार करनी होगी। इस

सम्बन्ध में श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर का निम्नलिखित कथन द्रष्टव्य है। पूर्व दिशा भगवान् कृष्ण की भक्ति को बतलाती है। दक्षिण दिशा *कर्मकाण्ड* का निर्देश करती है, जिसका अन्त भौतिक लाभ में होता है। पश्चिम दिशा *ज्ञानकाण्ड* अर्थात् मानसिक तर्कवितर्क की सूचक है, जिसे कभी-कभी *सिद्धिकाण्ड* कहा जाता है। उत्तर दिशा तार्किक विधि की सूचक है, जिसे कभी-कभी योग पद्धति कहा जाता है। केवल पूर्व दिशा, जो भक्ति रूप है, मनुष्य को जीवन का वास्तविक लक्ष्य प्राप्त कराने में समर्थ है। दक्षिण दिशा में सकाम कर्म हैं, जिनसे जीव को यमराज का दण्ड मिलता है। जब कोई व्यक्ति कर्मकाण्ड का पालन करता है, तब उसकी भौतिक इच्छाएँ प्रबल रहती हैं। इसीलिए इस विधि के फलों की तुलना बर्रों तथा मधुमक्खियों से की गई है। जीव सकाम कर्म रूपी इन बर्रों तथा मधुमक्खियों द्वारा डसा जाता है, जिससे वह जन्म-जन्मांतर तक इस भौतिक संसार में कष्ट भोगता है। इस विधि का पालन करने से भौतिक इच्छाओं से कभी मुक्त नहीं हुआ जा सकता। भौतिक भोग की लालसा कभी समाप्त नहीं होती। इसलिए जन्म-मरण का चक्र चलता रहता है और आत्मा निरन्तर कष्ट भोगता है।

योग-विधि की तुलना उस काले सर्प से की गई है, जो जीव को निगलकर उसके भीतर विष प्रविष्ट कर देता है। योग पद्धति का चरम उद्देश्य ब्रह्म से तदाकार होना अर्थात् अपने अस्तित्व को मिटा देना है। किन्तु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के आध्यात्मिक अंश का शाश्वत और व्यक्तिगत अस्तित्व होता है। *भगवद्गीता* से पुष्टि होती है कि व्यक्तिगत आत्मा का अस्तित्व भूतकाल में था, वर्तमान में है और भविष्य में भी एक व्यक्तिगत आत्मा के रूप में बना रहेगा। कृत्रिम रूप से परम पूर्ण से तदाकार होने का प्रयत्न आत्महत्या के समान है। अपनी प्राकृतिक अवस्था का विनाश नहीं किया जा सकता।

धन की रक्षा करने वाला यक्ष किसी को भी भोग के लिए धन नहीं ले जाने देता। ऐसा असुर केवल उत्पात मचाता है। दूसरे शब्दों में, भक्त अपने भौतिक साधनों पर निर्भर न रहकर पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की दया पर निर्भर रहेगा, क्योंकि वे वास्तविक संरक्षण प्रदान करने वाले हैं। यही *रक्षिष्यतीति विश्वास:* है, अथवा भक्तिविनोद ठाकुर की बाँग्ला कविता 'शरणागति' का

अवश्य रक्षिबे कृष्ण—विश्वास-पालन है। शरणागत व्यक्ति को यह तथ्य स्वीकार करना होगा कि उसके वास्तविक रक्षक कृष्ण हैं, उसकी भौतिक उपलब्धियाँ नहीं।

इन सब बातों पर विचार करते हुए यह कहा जा सकता है कि कृष्ण-भक्ति ही जीव के लिए वास्तविक खजाना है। भक्ति-पद प्राप्त कर लेने पर मनुष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की संगति में सदैव ऐश्वर्यवान बना रहता है। जो भक्ति से विहीन है, उसे योग पद्धति रूपी काला सर्प निगल जाता है और कर्मकाण्ड रूपी बर्रे तथा मधुमक्खियाँ काटते रहते हैं तथा उसे भौतिक कष्ट उठाने पड़ते हैं। कभी-कभी जीव को ब्रह्म में तदाकार होने की भ्रांति उत्पन्न हो जाती है और वह अपने आपको पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के तुल्य मान लेता है। इसका अर्थ यह हुआ कि जब वह आध्यात्मिक पद पर पहुँचता है, तो वह विचलित होकर पुनः भौतिक पद पर लौट आयेगा। *श्रीमद्भागवत* (१०.२.३२) के अनुसार :

येऽन्येऽरविन्दाक्ष विमुक्तमानिन-
स्त्वय्यस्तभावादविशुद्धबुद्धयः ।
आरुह्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः
पतन्त्यधोऽनादृतयुष्मदङ्घ्रयः ॥

भले ही ऐसे लोग संन्यासी क्यों न हो जाएँ, किन्तु जब तक वे कृष्ण के चरणकमलों की शरण में नहीं जाते, तब तक वे परोपकारी कार्य करने के लिए भौतिक पद पर लौटते रहेंगे। इस तरह उनका आध्यात्मिक जीवन विनष्ट हो जाता है। यह तो वैसा ही है जैसे कि किसी को काला सर्प निगल ले।

ऐछे शास्त्र कहे,—कर्म, ज्ञान, योग त्यजि' ।
'भक्त्ये' कृष्ण वश हय, भक्त्ये ताँरे भजि ॥१३६॥

ऐछे शास्त्र कहे,—कर्म, ज्ञान, योग त्यजि' ।
'भक्त्ये' कृष्ण वश हय, भक्त्ये ताँरे भजि ॥ १३६ ॥

ऐछे—इस प्रकार; **शास्त्र कहे**—वैदिक शास्त्र घोषित करते हैं; **कर्म**—सकाम कर्म; **ज्ञान**—मनोकल्पित ज्ञान; **योग**—योग पद्धति; **त्यजि'**—त्यागकर; **भक्त्ये**—प्रेममयी सेवा द्वारा;

कृष्ण—परम भगवान् श्रीकृष्ण; **वश हय**—सन्तुष्ट होते हैं; **भक्त्ये**—प्रेम-भक्ति द्वारा; **तौरे**—उनकी; **भजि**—हम सेवा करें।

अनुवाद

"प्रामाणिक शास्त्रों का निर्णय है कि मनुष्य को कर्म, ज्ञान तथा योग का परित्याग करके भक्ति को ग्रहण करना चाहिए, जिससे कृष्ण पूर्णतया तुष्ट हो सकें।

न साधयति मां योगो न साङ्ख्यं धर्म उद्धव ।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ॥१३७॥

न साधयति मां योगो न साङ्ख्यं धर्म उद्धव ।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ॥ १३७॥

न—कभी नहीं; **साधयति**—सन्तुष्ट होने का कारण बनता है; **माम्**—मुझे; **योगः**—संयम की प्रक्रिया; **न**—नहीं; **साङ्ख्यम्**—परम सत्य के विषय में दार्शनिक ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया; **धर्मः**—इस प्रकार के कार्यकलाप; **उद्धव**—मेरे प्रिय उद्धव; **न**—न ही; **स्वाध्यायः**—वेदों का अध्ययन; **तपः**—तपस्याएँ; **त्यागः**—त्याग, संन्यास ग्रहण करना या दान देना; **यथा**—जितनी; **भक्तिः**—प्रेममयी सेवा; **मम**—मेरे प्रति; **ऊर्जिता**—विकसित।

अनुवाद

"[पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण ने कहा :] 'हे उद्धव, न तो अष्टांग योग से, न निर्विशेष अद्वैतवाद से, न परम सत्य के विश्लेषणात्मक अध्ययन से, न वेदों के अध्ययन से, न तपस्या से, न दान से, न संन्यास ग्रहण करने से कोई व्यक्ति मुझे उतना ही तुष्ट कर सकता है, जितना कि वह मेरी अनन्य भक्ति करके कर सकता है।

तात्पर्य

यह तथा अगला उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (११.१४.२०-२१) का है। इस श्लोक की व्याख्या आदिलीला १७.७६ में दी जा चुकी है।

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्व-पाकानपि सम्भवात् ॥१३८॥

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्व-पाकानपि सम्भवात् ॥ १३८ ॥

भक्त्या—प्रेममयी सेवा द्वारा; **अहम्**—मैं, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **एकया**—एकनिष्ठ; **ग्राह्यः**—प्राप्त करने योग्य; **श्रद्धया**—श्रद्धा द्वारा; **आत्मा**—सर्वाधिक प्रिय; **प्रियः**—प्रेममयी सेवा; **सताम्**—भक्तों द्वारा; **भक्तिः**—भक्ति; **पुनाति**—शुद्ध करती है; **मत्-निष्ठा**—मुझ पर समर्पित; **श्व-पाकान्**—मनुष्यों में सबसे अधम, कुत्ता खाने वाला; **अपि**—भी; **सम्भवात्**—जन्म तथा अन्य परिस्थितियों की कमी से।

अनुवाद

"'भक्तों तथा साधुओं को अत्यन्त प्रिय होने के कारण मुझे अविचल श्रद्धा तथा भक्ति द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह भक्तियोग, जो मेरे प्रति अनुरक्ति को क्रमशः बढ़ाता है, चंडाल तक को शुद्ध करने वाला है। अर्थात् भक्तियोग के माध्यम से हर व्यक्ति आध्यात्मिक पद तक ऊपर उठ सकता है।'

অতএব 'ভক্তি'—কৃষ্ণ-প্রাপ্ত্যের উপায় ।
'অভিধেয়' বলি' তারে সর্ব-শাস্ত্রে গায় ॥ ১৩৯ ॥

অতএব 'ভক্তি'—কৃষ্ণ-প্রাপ্ত্যের উপায় ।
'অভিধেয়' বলি' তারে সর্ব-শাস্ত্রে গায় ॥ ১৩৯ ॥

অতএব—इसलिए; **ভক্তি**—प्रेम-भक्ति; **কৃষ্ণ-প্রাপ্ত্যের**—भगवान् कृष्ण के चरणकमलों को प्राप्त करने का; **উপায়**—एक मात्र उपाय; **অভিধেয়**—अभिधेय; **বলি'**—नामक; **তারে**—इसे; **সর্ব-শাস্ত্রে**—सभी वैदिक ग्रन्थों में; **গায়**—वर्णन किया है।

अनुवाद

"निष्कर्ष यह है कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तक पहुँचने का एकमात्र उपाय भक्ति है। इसीलिए इस विधि को अभिधेय कहते हैं। यही सभी प्रामाणिक शास्त्रों का निर्णय है।

तात्पर्य

भगवद्गीता (१८.५५) में भगवान् कृष्ण द्वारा कहा गया है :

भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः ।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् ॥

"मुझे यथारूप में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के रूप में केवल भक्ति द्वारा समझा जा सकता है और जब मनुष्य ऐसी भक्ति द्वारा मेरी चेतना में पूर्ण रूप से स्थित होता है, तब वह भगवान् के धाम में प्रवेश कर सकता है।"

जीवन का उद्देश्य भौतिक बन्धन से छूटकर आध्यात्मिक जगत् में प्रवेश करना है। यद्यपि विभिन्न लोगों के लिए शास्त्रों में विभिन्न विधियाँ बतलाई गई हैं, किन्तु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का कहना है कि आध्यात्मिक प्रगति के विश्वस्त मार्ग के लिए अन्ततः भक्ति-मार्ग को ही स्वीकार करना होगा। भगवान् की भक्तिमय सेवा वही ऐसा एकमात्र मार्ग है, जिसे वास्तव में भगवान् द्वारा प्रमाणित किया गया है। *सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज* (*भगवद्गीता* १८.६६)। यदि कोई भगवद्धाम वापस लौटने का इच्छुक है और शाश्वत रूप से सुखी होना चाहता है, तो उसे उसके लिए भक्त बनना आवश्यक है।

धन पाइले यैछे सुख-भोग फल पाय ।
सुख-भोग हैते दुःख आपनि पलाय ॥ १४० ॥

धन पाइले यैछे सुख-भोग फल पाय ।
सुख-भोग हैते दुःख आपनि पलाय ॥ १४० ॥

धन पाइले—जब कोई धनी बन जाता है; **यैछे**—जिस प्रकार; **सुख-भोग**—सुख का आनन्द; **फल**—परिणाम; **पाय**—प्राप्त करता है; **सुख-भोग**—सुख का वास्तविक आनन्द; **हैते**—होने पर; **दुःख**—समस्त दुःख; **आपनि**—स्वतः; **पलाय**—दूर हो जाते हैं।

अनुवाद

"जब मनुष्य सचमुच धनी बन जाता है, तब वह स्वभावतः सारे सुखों का भोग करने लगता है। जब वह सुखी मुद्रा में होता है, तो सारी दुःखद दशाएँ स्वतः दूर हो जाती हैं। इसके लिए किसी बाह्य प्रयास की आवश्यकता नहीं पड़ती।

तैछे भक्ति-फले कृष्णे प्रेम उपजय ।
प्रेमे कृष्णास्वाद हैले भव नाश पाय ॥ १४१ ॥

तैछे भक्ति-फले कृष्णे प्रेम उपजय ।
प्रेमे कृष्णास्वाद हैले भव नाश पाय ॥ १४१ ॥

तैछे—इसी प्रकार; **भक्ति-फले**—प्रेम भक्ति के परिणाम स्वरूप; **कृष्णे**—भगवान् कृष्ण के प्रति; **प्रेम**—प्रेम; **उपजय**—जाग जाता है; **प्रेमे**—प्रेम भाव में; **कृष्ण-आस्वाद**—भगवान् कृष्ण के संग का आस्वादन; **हैले**—जब हो जाये; **भव**—जन्म-मृत्यु के चक्र का कष्ट; **नाश**—विनाश; **पाय**—प्राप्त करता है।

अनुवाद

"इसी तरह भक्ति के फलस्वरूप मनुष्य का सुप्त कृष्ण-प्रेम जाग्रत हो उठता है। जब मनुष्य भगवान् कृष्ण की संगति का आस्वादन कर सकने के योग्य हो जाता है, तब यह भौतिक संसार, जन्म तथा मृत्यु का चक्र, समाप्त हो जाता है।

दारिद्र्य-नाश, भव-क्षय,—प्रेमेर 'फल' नय ।
प्रेम-सुख-भोग—मुख्य प्रयोजन हय ॥ १४२॥
दारिद्र्य-नाश, भव-क्षय,—प्रेमेर 'फल' नय ।
प्रेम-सुख-भोग—मुख्य प्रयोजन हय ॥ १४२॥

दारिद्र्य-नाश—निर्धन जीवन का अन्त; **भव-क्षय**—भौतिक अस्तित्व का विनाश; **प्रेमेर**—भगवत्प्रेम का; **फल**—परिणाम; **नय**—नहीं है; **प्रेम-सुख-भोग**—भगवत्प्रेम के सुख का आस्वादन; **मुख्य**—मुख्य; **प्रयोजन**—जीवन का लक्ष्य; **हय**—है।

अनुवाद

"भगवत्प्रेम का लक्ष्य न तो भौतिक दृष्टि से धनी बनना है, न ही भवबन्धन से मुक्त होना है। वास्तविक लक्ष्य तो भगवान् की भक्तिमय सेवा में स्थित होकर दिव्य आनन्द भोगना है।

तात्पर्य

भक्ति के परिणाम न तो भौतिक लाभ हैं, न ही भवबन्धन से मुक्ति हैं। भक्ति का लक्ष्य तो भगवान् की प्रेममयी सेवा में निरन्तर स्थित रहकर उस सेवा का आध्यात्मिक आनन्द उठाना है। जब कोई मनुष्य पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को भूल जाता है, तो वह दरिद्र कहलाता है। उसे भौतिक संसार की इस दुःखद स्थिति को स्वतः समाप्त करने के लिए ऐसे दरिद्र जीवन को समाप्त करना होगा। जब वह कृष्ण की सेवा का आस्वादन कर लेता है, तो वह स्वतः भौतिक भोग से छुटकारा पा लेता है। ऐश्वर्य के लिए उसे अलग से प्रयास नहीं

करना पड़ता। ऐश्वर्य तो शुद्ध भक्त के पास अपने आप आता है, यद्यपि भक्त ऐसे भौतिक सुख की कामना नहीं करता।

वेद-शास्त्रे कहे सम्बन्ध, अभिधेय, प्रयोजन ।
कृष्ण, कृष्ण-भक्ति, प्रेम,—तिन महा-धन ॥ १४३ ॥
वेद-शास्त्रे कहे सम्बन्ध, अभिधेय, प्रयोजन ।
कृष्ण, कृष्ण-भक्ति, प्रेम,—तिन महा-धन ॥ १४३ ॥

वेद-शास्त्रे—वैदिक ग्रन्थों में; **कहे**—ऐसा कहा जाता है; **सम्बन्ध**—सम्बन्ध; **अभिधेय**—क्रिया; **प्र-योजन**—लक्ष्य; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **कृष्ण-भक्ति**—भगवान् कृष्ण की प्रेममयी सेवा; **प्रेम**—भगवत्प्रेम; **तिन**—ये तीनों; **महा-धन**—महा खजाने (हैं)।

अनुवाद

"वैदिक ग्रन्थों में कृष्ण आकर्षण के केन्द्रबिन्दु हैं और उनकी सेवा करना हमारा कर्म है। हमारे जीवन का चरम लक्ष्य कृष्ण-प्रेम प्राप्त करना वही है। अतएव कृष्ण, कृष्ण की सेवा तथा कृष्ण-प्रेम—ये जीवन के तीन महाधन हैं।

वेदादि सकल शास्त्रे कृष्ण—मुख्य सम्बन्ध ।
ताँर ज्ञाने आनुषङ्गे याय माया-बन्ध ॥ १४४ ॥
वेदादि सकल शास्त्रे कृष्ण—मुख्य सम्बन्ध ।
ताँर ज्ञाने आनुषङ्गे याय माया-बन्ध ॥ १४४ ॥

वेद-आदि—वेदों आदि; **सकल**—सभी; **शास्त्रे**—प्रामाणिक शास्त्रों में; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **मुख्य**—प्रधान; **सम्बन्ध**—केन्द्र बिन्दु या आकर्षण के केन्द्र; **ताँर ज्ञाने**—उनके ज्ञान द्वारा; **आनुषङ्गे**—साथ ही साथ; **याय**—दूर हो जाता है; **माया-बन्ध**—भौतिक अस्तित्व का बन्धन।

अनुवाद

"वेद इत्यादि सारे प्रामाणिक शास्त्रों के आकर्षण के केन्द्रीय बिन्दु कृष्ण हैं। जब कृष्ण विषयक पूर्ण ज्ञान की अनुभूति हो जाती है, तो माया का बन्धन स्वतः टूट जाता है।

व्यामोहाय चराचरस्य जगतस्ते ते पुराणागमास्
তাং তামেব হি দেবতাং পরমিকাং জল্পন্তু কল্পাবধি ।
সিদ্ধান্তে পুনরেক এব ভগবান্বিষ্ণুঃ সমস্তাগম-
ব্যাপারেষু বিবেচন-ব্যতিকরং নীতেষু নিশ্চীয়তে ॥ ১৪৫ ॥

व्यामोहाय चराचरस्य जगतस्ते ते पुराणागमास्
तां तामेव हि देवतां परमिकां जल्पन्तु कल्पावधि ।
सिद्धान्ते पुनरेक एव भगवान् विष्णुः समस्तागम-
व्यापारेषु विवेचन-व्यतिकरं नीतेषु निश्चीयते ॥ १४५ ॥

व्यामोहाय—भ्रम तथा अज्ञान को बढ़ाने के लिए; **चर-अचरस्य**—चर तथा अचर, सभी जीवात्माओं के; **जगतः**—संसार के; **ते ते**—वे क्रमशः; **पुराण**—पुराण नामक पूरक वैदिक ग्रन्थ; **आगमाः**—तथा वेद; **ताम् ताम्**—उस विशिष्ट का; **एव हि**—निश्चित रूप में; **देवताम्**—देवता को; **परमिकाम्**—परम के रूप में; **जल्पन्तु**—उन्हें कहने दो; **कल्प-अवधि**—कल्प के अन्त तक; **सिद्धान्ते**—निष्कर्ष में; **पुनः**—परन्तु; **एकः**—एक; **एव**—केवल; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **विष्णुः**—भगवान् विष्णु; **समस्त**—सभी; **आगम**—वेदों के; **व्यापारेषु**—व्यवहारों में; **विवेचन-व्यतिकरम्**—सामूहिक विचार; **नीतेषु**—जब बलपूर्वक लाया जाता है; **निश्चीयते**—निश्चित किया जाता है।

अनुवाद

"'वैदिक शास्त्र तथा पुराण अनेक प्रकार के हैं। उनमें से प्रत्येक में विशेष देवताओं का वर्णन प्रमुख देवताओं के रूप में पाया जाता है। यह समस्त चर तथा अचर प्राणियों में मोह उत्पन्न करने के लिए है। उन्हें निरन्तर ऐसी ही कल्पनाओं में लगे रहने दो। किन्तु जब इन सारे वैदिक शास्त्रों का सामूहिक विश्लेषण किया जाता है, तब निष्कर्ष यही निकलता है कि भगवान् विष्णु ही एकमात्र पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *पद्म-पुराण* का है।

মুখ্য-গৌণ-বৃত্তি, কিংবা অন্বয়-ব্যতিরেকে ।
বেদের প্রতিজ্ঞা কেবল কহয়ে কৃষ্ণকে ॥ ১৪৬ ॥

मुख्य-गौण-वृत्ति, किंवा अन्वय-व्यतिरेके ।
वेदेर प्रतिज्ञा केवल कहये कृष्णके ॥ १४६ ॥

मुख्य—प्रमुख; **गौण**—गौण; **वृत्ति**—अर्थ; **किंवा**—या; **अन्वय-व्यतिरेके**—प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष; **वेदेर प्रतिज्ञा**—वेदों का अन्तिम निष्कर्ष; **केवल**—केवल; **कहये**—कहता है; **कृष्णके**—कृष्ण के विषय में।

अनुवाद

"जब कोई व्यक्ति व्याख्या द्वारा, अथवा शाब्दिक अर्थ के द्वारा वैदिक शास्त्रों को स्वीकार करता है, तब वैदिक ज्ञान की अन्तिम घोषणा प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से भगवान् कृष्ण को ही इंगित करती है।

किं विधत्ते किमाचष्टे किमनूद्य विकल्पयेत्
इत्यस्या हृदयं लोके नान्यो मद्वेद कश्चन
मां विधत्तेऽभिधत्ते मां विकल्प्यापोह्यते ह्यहम्
एतावान्सर्व-वेदार्थः शब्द आस्थाय मां भिदाम्
मायां-मात्रमनूद्यान्ते प्रतिषिध्य प्रसीदति

किं विधत्ते किमाचष्टे किमनूद्य विकल्पयेत्
इत्यस्या हृदयं लोके नान्यो मद्वेद कश्चन
मां विधत्तेऽभिधत्ते मां विकल्प्यापोह्यते ह्यहम्
एतावान्सर्व-वेदार्थः शब्द आस्थाय मां भिदाम्
माया-मात्रमनूद्यान्ते प्रतिषिध्य प्रसीदति

किम्—क्या; **विधत्ते**—प्रत्यक्ष; **किम्**—क्या; **आचष्टे**—निर्देश करते हैं; **किम्**—क्या; **अनूद्य**—विषय रूप में; **विकल्पयेत्**—अनुमान लगा सकते हैं; **इति**—इसलिए; **अस्याः**—वैदिक शास्त्रों का; **हृदयम्**—आशय; **लोके**—इस जगत् में; **न**—नहीं; **अन्यः**—दूसरा; **मत्**—मेरी अपेक्षा; **वेद**—जानते हैं; **कश्चन**—कोई; **माम्**—मुझे; **विधत्ते**—वे निर्देशित करते हैं; **अभिधत्ते**—लक्ष्य करते हैं; **माम्**—मुझे; **विकल्प्य**—कल्पना करके; **अपोह्यते**—स्थित हूँ; **हि**—निश्चित रूप से; **अहम्**—मैं; **एतावान्**—इतना; **सर्व-वेद-अर्थः**—वेदों के अर्थ; **शब्दः**—वेद; **आस्थाय**—शरण लेकर; **माम्**—मेरी; **भिदाम्**—भिन्न; **माया**—माया; **मात्रम्**—केवल; **अनूद्य**—कहकर; **अन्ते**—अन्त में; **प्रतिषिध्य**—दूर कर देती है; **प्रसीदति**—सन्तुष्ट होते हैं।

अनुवाद

"[भगवान् कृष्ण ने कहा :] 'सारे वैदिक शास्त्रों का प्रयोजन क्या है? उनका लक्ष्य किस पर केन्द्रित होता है? सारे चिन्तन का लक्ष्य कौन है? इन बातों को मेरे अतिरिक्त कोई नहीं जानता। अब तुम यह जान लो

कि ये सारे कार्य मेरा ही वर्णन करने के लिए एवं मुझे प्राप्त करने के लिए हैं। वैदिक साहित्य का उद्देश्य विभिन्न मानसिक चिन्तनों द्वारा मुझे जानना है, चाहे वह अप्रत्यक्ष ज्ञान हो या शाब्दिक अर्थ द्वारा हो। हर व्यक्ति मेरे विषय में तर्क करता है। मुझमें और माया में अन्तर करना यही सारे वैदिक ग्रन्थों का सार है। मनुष्य माया पर विचार करने पर मुझे समझ पाता है। इस तरह वह वेदों के विषय में तर्क करने से मुक्त हो जाता है और अन्तिम निष्कर्ष के रूप में मेरे पास आता है और तब तुष्ट होता है।'

तात्पर्य

ये दोनों श्लोक *श्रीमद्भागवत* (११.२१.४२-४३) से उद्धृत हैं। जब उद्धव ने कृष्ण से वैदिक चिन्तन का उद्देश्य पूछा, तो भगवान् ने उन्हें वैदिक साहित्य समझने की विधि बतलाई। वेदों में कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड तथा उपासनाकाण्ड निहित हैं। यदि वेदों के उद्देश्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाए, तो यह पता चलेगा कि कर्मकाण्ड के द्वारा ज्ञानकाण्ड या तार्किक ज्ञान के निष्कर्ष की प्राप्ति होती है और तार्किक ज्ञान के फलस्वरूप व्यक्ति इसी निष्कर्ष पर पहुँचता है कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की सेवा ही सर्वोच्च है। इस निष्कर्ष को प्राप्त कर लेने पर मनुष्य पूर्णरूपेण तुष्ट हो जाता है।"

कृष्णेर स्वरूप—अनन्त, वैभव—अपार ।
चिच्छक्ति, माया-शक्ति, जीव-शक्ति आर ॥ १४९ ॥

कृष्णेर स्वरूप—कृष्ण का दिव्य स्वरूप; **अनन्त**—असीमित रूप से फैला हुआ; **वैभव**—ऐश्वर्य; **अपार**—असीमित; **चित्-शक्ति**—अन्तरंगा शक्ति; **माया-शक्ति**—बहिरंगा शक्ति; **जीव-शक्ति**—जीवशक्ति; **आर**—तथा।

अनुवाद

"कृष्ण का दिव्य स्वरूप अनन्त है और उनका ऐश्वर्य अपार है। वे अन्तरंगा, बहिरंगा तथा तटस्था शक्तियों के स्वामी हैं।

वैकुण्ठ, ब्रह्माण्ड-गण——शक्ति-कार्य हय ।
स्वरूप-शक्ति शक्ति-कार्येर——कृष्ण समाश्रय ॥ १५०॥

वैकुण्ठ, ब्रह्माण्ड-गण——शक्ति-कार्य्य हय ।
स्वरूप-शक्ति शक्ति-कार्य्येर——कृष्ण समाश्रय ॥ १५०॥

वैकुण्ठ—आध्यात्मिक जगत्; **ब्रह्माण्ड-गण**—भौतिक सृष्टि के ब्रह्माण्ड; **शक्ति-कार्य्य हय**—वे सभी कृष्ण की शक्तियों के कार्य हैं; **स्वरूप-शक्ति**—अन्तरंगा शक्ति का; **शक्ति-कार्य्येर**—बहिरंगा शक्ति के कार्यों के; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **समाश्रय**—मूल स्रोत।

अनुवाद

"भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों ही जगत् कृष्ण की क्रमशः बहिरंगा तथा अन्तरंगा शक्तियों के रूपान्तर हैं। अतएव भौतिक तथा आध्यात्मिक सृष्टियों के मूल स्रोत कृष्ण ही हैं।

दशमे दशमं लक्ष्यमाश्रिताश्रय-विग्रहम् ।
श्री-कृष्णाख्यं परं धाम जगद्धाम नमामि तत् ॥ १५१॥

दशमे दशमं लक्ष्यमाश्रिताश्रय-विग्रहम् ।
श्री-कृष्णाख्यं परं धाम जगद्धाम नमामि तत् ॥ १५१॥

दशमे—दसवें स्कन्ध में; **दशमम्**—दसवाँ विषय; **लक्ष्यम्**—देखने योग्य; **आश्रित**—शरणागत का; **आश्रय**—आश्रय; **विग्रहम्**—जो स्वरूप हैं; **श्री-कृष्ण-आख्यम्**—भगवान् श्रीकृष्ण नामक; **परम्**—सर्वश्रेष्ठ; **धाम**—निवास; **जगत्-धाम**—ब्रह्माण्डों के आश्रय; **नमामि**—मैं प्रणाम करता हूँ; **तत्**—उन्हें।

अनुवाद

"'श्रीमद्भागवत का दसवाँ स्कन्ध दसवें लक्ष्य, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को बतलाने वाला है, जो समस्त शरणागतों के आश्रय हैं। वे श्रीकृष्ण नाम से विख्यात हैं और समस्त ब्रह्माण्डों के परम स्रोत हैं। मैं उन्हें सादर नमस्कार करता हूँ।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* पर लिखी गई श्रीधर स्वामी की टीका *भावार्थ-दीपिका* (१०.१.१) से है। *श्रीमद्भागवत* के दसवें स्कन्ध में *आश्रय तत्त्व* श्रीकृष्ण का वर्णन है। तत्त्व दो प्रकार के हैं—*आश्रय तत्त्व* तथा *आश्रित तत्त्व।*

आश्रय तत्त्व वस्तु (विधेय) परक (आबजेक्टीव) है और आश्रित तत्त्व उद्देश्य परक (सबजेक्टीव) है। चूँकि भगवान् कृष्ण के चरणकमल सारे भक्तों के आश्रय हैं, अत: श्रीकृष्ण *परं धाम* कहलाते हैं। *भगवद्गीता* (१०.१२) में कहा गया है—*परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।* हर वस्तु कृष्ण के चरणकमलों पर आश्रित है। *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.५८) में कहा गया है :

समाश्रिता ये पदपल्लवप्लवं
महत्पदं पुण्ययशोमुरारेः।

सम्पूर्ण *महत् तत्त्व* श्रीकृष्ण के चरणकमलों के तले है। चूँकि हर वस्तु कृष्ण के संरक्षण में है, इसलिए श्रीकृष्ण *आश्रय तत्त्व* कहलाते हैं। अन्य सारी वस्तुएँ *आश्रित तत्त्व* हैं। यह भौतिक सृष्टि भी *आश्रित तत्त्व* कहलाती है। भवबन्धन से मोक्ष तथा आध्यात्मिक पद की प्राप्ति भी आश्रित तत्त्व हैं। कृष्ण ही एकमात्र आश्रय तत्त्व हैं। सृष्टि के प्रारम्भ में महाविष्णु, गर्भोदकशायी विष्णु तथा क्षीरोदकशायी विष्णु रहते हैं। वे भी *आश्रय तत्त्व* हैं। कृष्ण समस्त कारणों के कारण हैं (*सर्वकारणकारणम्*)। कृष्ण को भलीभाँति समझने के लिए आश्रय तत्त्व तथा आश्रित तत्त्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना आवश्यक है।

কৃষ্ণের স্বরূপ-বিচার শুন, সনাতন ।
অদ্বয়-জ্ঞান-তত্ত্ব, ব্রজে ব্রজেন্দ্র-নন্দন ॥১৫২॥

কৃষ্ণের স্বরূপ-বিচার শুন, সনাতন ।
অদ্বয়-জ্ঞান-তত্ত্ব, ব্রজে ব্রজেন্দ্র-নন্দন ॥ ১৫২॥

কৃষ্ণের—भगवान् कृष्ण के; **स्वरूप-विचार**—नित्य स्वरूप का विचार; **शुन**—कृपया सुनो; **सनातन**—मेरे प्रिय सनातन; **अद्वय-ज्ञान-तत्त्व**—द्वैत रहित परम सत्य; **व्रजे**—वृन्दावन में; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—नन्द महाराज का पुत्र।

अनुवाद

"हे सनातन, अब मुझसे भगवान् कृष्ण के सनातन स्वरूप के विषय में सुनो। वे द्वैत भाव से रहित परम अद्वय सत्य हैं, किन्तु वे वृन्दावन में नन्द महाराज के पुत्र रूप में रहते हैं।

सर्व-आदि, सर्व-अंशी, किशोर-शेखर ।
चिदानन्द-देह, सर्वाश्रय, सर्वेश्वर ॥ १५३॥

सर्व-आदि, सर्व-अंशी, किशोर-शेखर ।
चिदानन्द-देह, सर्वाश्रय, सर्वेश्वर ॥ १५३॥

सर्व-आदि—सब वस्तुओं के आदि; **सर्व-अंशी**—सभी अंशों के पूरक; **किशोर-शेखर**—सर्वोत्कृष्ट किशोर; **चित्-आनन्द-देह**—दिव्य आनन्द की देह; **सर्व-आश्रय**—सबके आश्रय; **सर्व-ईश्वर**—सभी के स्वामी।

अनुवाद

"कृष्ण प्रत्येक वस्तु के आदि स्त्रोत हैं और हर वस्तु के सर्वांश हैं। वे सर्वोत्कृष्ट किशोर रूप में प्रकट होते हैं और उनका सारा शरीर आध्यात्मिक आनन्द से बना हुआ है। वे हर वस्तु के आश्रय तथा हर एक के स्वामी हैं।

तात्पर्य

कृष्ण समस्त विष्णु तत्त्वों के स्त्रोत हैं, जिनमें महाविष्णु, गर्भोदकशायी विष्णु तथा क्षीरोदकशायी विष्णु सम्मिलित हैं। वे वैष्णव दर्शन के चरम लक्ष्य हैं। उन्हीं से सब कुछ उद्भूत है। उनका शरीर नितान्त आध्यात्मिक है और वही समस्त आध्यात्मिक जीवों का उद्गम है। यद्यपि वे सारी वस्तुओं के उद्गम हैं, किन्तु उनका कोई उद्गम नहीं है। *अद्वैतमच्युतमनादिमनन्तरूपं। आद्यं पुराण-पुरुषं नवयौवनं च।* सारी वस्तुओं के परम उद्गम होते हुए भी वे नवयुवक (किशोर) बने रहते हैं।

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्द-विग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्व-कारण-कारणम् ॥ १५४॥

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्द-विग्रहः ।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्व-कारण-कारणम् ॥ १५४॥

ईश्वरः—नियन्ता; **परमः**—सर्वश्रेष्ठ; **कृष्णः**—भगवान् कृष्ण; **सत्**—सनातन अस्तित्व; **चित्**—परम ज्ञान; **आनन्द**—परम आनन्द; **विग्रहः**—जिनका रूप; **अनादिः**—आरम्भ रहित; **आदिः**—मूल; **गोविन्दः**—भगवान् गोविन्द; **सर्व-कारण-कारणम्**—सभी कारणों के कारण।

अनुवाद

"'गोविन्द नाम से विख्यात कृष्ण परम नियन्ता हैं। उनका शरीर सनातन, आनन्दमय तथा आध्यात्मिक है। वे सबके उद्गम हैं। उनका अन्य कोई उद्गम नहीं है, क्योंकि वे समस्त कारणों के मुख्य कारण हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *ब्रह्म-संहिता* के पाँचवें अध्याय का प्रथम श्लोक है।

स्वयं भगवान्कृष्ण, 'गोविन्द' पर नाम ।
सर्वैश्वर्य-पूर्ण याँर गोलोक—नित्य-धाम ॥ १५५॥

स्वयं भगवान् कृष्ण, 'गोविन्द' पर नाम ।
सर्वैश्वर्य-पूर्ण याँर गोलोक—नित्य-धाम ॥ १५५॥

स्वयम्—स्वयं ही; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **कृष्ण**—कृष्ण; **गोविन्द**—गोविन्द; **पर नाम**—दूसरा नाम; **सर्व-ऐश्वर्य-पूर्ण**—सभी ऐश्वर्यों से परिपूर्ण; **याँर**—जिनका; **गोलोक**—गोलोक वृन्दावन; **नित्य-धाम**—नित्य धाम।

अनुवाद

"'आदि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तो श्रीकृष्ण हैं। उनका मूल नाम गोविन्द है। वे समस्त ऐश्वर्यों से पूर्ण हैं और उनका सनातन धाम गोलोक वृन्दावन कहलाता है।

एते चांश-कलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान्स्वयम् ।
इन्द्रारि-व्याकुलं लोकं मृड़यन्ति युगे युगे ॥ १५६॥

एते चांश-कलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् ।
इन्द्रारि-व्याकुलं लोकं मृड़यन्ति युगे युगे ॥ १५६॥

एते—ये; **च**—तथा; **अंश**—पूर्ण अंश; **कलाः**—पूर्ण अंशों के अंश; **पुंसः**—पुरुष अवतारों के; **कृष्णः**—भगवान् कृष्ण; **तु**—परन्तु; **भगवान्**—परम भगवान्; **स्वयम्**—स्वयं; **इन्द्र-अरि**—इन्द्र देव के शत्रु; **व्याकुलम्**—परेशान; **लोकम्**—संसार को; **मृड़यन्ति**—प्रसन्न करते हैं; **युगे युगे**—प्रत्येक युग में उचित समय पर।

अनुवाद

"'ईश्वर के ये सारे अवतार पुरुष-अवतार के या तो पूर्ण अंश हैं या

पूर्ण अंश के अंश हैं। किन्तु कृष्ण स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं। जब संसार इन्द्र के शत्रुओं द्वारा पीड़ित होता है, तब प्रत्येक युग में वे अपने इन विभिन्न रूपों द्वारा संसार की रक्षा करते हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१.३.२८) से उद्धृत है। इसके लिए आदिलीला अध्याय २, श्लोक ६७ भी देखें।

জ্ঞান, যোগ, ভক্তি,—তিন সাধনের বশে ।
ব্রহ্ম, আত্মা, ভগবান্—ত্রিবিধ প্রকাশে ॥ ১৫৭॥

ज्ञान, योग, भक्ति,—तिन साधनेर वशे ।
ब्रह्म, आत्मा, भगवान्—त्रिविध प्रकाशे ॥ १५७॥

ज्ञान—ज्ञान; **योग**—योग शक्ति; **भक्ति**—भक्तिमय सेवा; **तिन**—तीनों; **साधनेर**—आध्यात्मिक जीवन की प्रक्रियाओं के; **वशे**—वश में; **ब्रह्म**—निराकार ब्रह्म; **आत्मा**—परमात्मा; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **त्रि-विध प्रकाशे**—तीन प्रकार की अभिव्यक्तियाँ।

अनुवाद

"परम अद्वय सत्य को समझने की तीन प्रकार की आध्यात्मिक विधियाँ हैं—ज्ञान, योग तथा भक्ति। परम सत्य इन तीनों विधियों से क्रमशः ब्रह्म, परमात्मा तथा भगवान् रूप में प्रकट होते हैं।

বদন্তি তত্তত্ত্ব-বিদস্তত্ত্বং যজ্জ্ঞানমদ্বয়ম্ ।
ব্রহ্মেতি পরমাত্মেতি ভগবানিতি শব্দ্যতে ॥ ১৫৮॥

वदन्ति तत्तत्त्व-विदस्तत्त्वं यज्ज्ञानमद्वयम् ।
ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते ॥ १५८॥

वदन्ति—वे कहते हैं; **तत्**—उसे; **तत्त्व-विदः**—विद्वान; **तत्त्वम्**—परम सत्य; **यत्**—जो; **ज्ञानम्**—ज्ञान; **अद्वयम्**—अद्वितीय; **ब्रह्म**—ब्रह्म; **इति**—यह; **परमात्मा**—परमात्मा; **इति**—यह; **भगवान्**—भगवान्; **इति**—यह; **शब्द्यते**—कहलाता है।

अनुवाद

"'परम सत्य को जानने वाले विद्वान अध्यात्मवेत्ता इस अद्वय वस्तु को ब्रह्म, परमात्मा या भगवान् कहते हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१.२.११) का है।

जो निर्विशेष ब्रह्मज्योति में रुचि रखते हैं, जो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से अभिन्न है, वे ज्ञान द्वारा इस लक्ष्य की पूर्ति कर सकते हैं। जो लोग योगाभ्यास में रुचि रखते हैं, वे अन्तर्यामी परमात्मा को प्राप्त कर सकते हैं। जैसाकि *भगवद्गीता* (१८.६१) में कहा गया है, *ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति*—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् परमात्मा रूप में सभी प्राणियों के हृदय के भीतर स्थित हैं। वे जीवों के कार्यों के साक्षी रहते हैं और उन्हें कार्य करने की अनुमति देते हैं।

इसकी व्याख्या के लिए देखें आदिलीला (२.११)।

ब्रह्म—अङ्ग-कान्ति ताँर, निर्विशेष प्रकाशे ।
सूर्य येन चर्म-चक्षे ज्योतिर्मय भासे ॥ १५९॥

ब्रह्म—अङ्ग-कान्ति ताँर, निर्विशेष प्रकाशे ।
सूर्य्य ग्रेन चर्म-चक्षे ज्योतिर्मय भासे ॥ १५९॥

ब्रह्म—निराकार ब्रह्मज्योति; **अङ्ग-कान्ति**—अंगों की चमक; **ताँर**—उनके; **निर्विशेष**—विविधता से रहित; **प्रकाशे**—अभिव्यक्ति; **सूर्य्य ग्रेन**—सूर्य के समान; **चर्म-चक्षे**—हमारी साधारण भौतिक आँखों द्वारा; **ज्योतिः-मय**—केवल प्रकाशयुक्त; **भासे**—प्रतीत होता है।

अनुवाद

"निर्विशेष ब्रह्मज्योति की अभिव्यक्ति, जिसमें विविधता नहीं होती, कृष्ण के शारीरिक तेज की किरणें हैं। यह सूर्य के समान है। जब सूर्य को सामान्य आँखों से देखा जाता है, तो इसमें एकमात्र प्रकाश ही दिखता है।

यस्य प्रभा प्रभवतो जगदण्ड-कोटि-
कोटिष्वशेष-वसुधादि-विभूति-भिन्नम् ।
तद्ब्रह्म निष्कलमनन्तमशेष-भूतं
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ १६०॥

यस्य प्रभा प्रभवतो जगदण्ड-कोटि-
कोटिष्वशेष-वसुधादि-विभूति-भिन्नम् ।
तद् ब्रह्म निष्कलमनन्तमशेष-भूतं
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ १६० ॥

यस्य—जिसकी; **प्रभा**—कांति; **प्रभवतः**—जो शक्ति में सबसे श्रेष्ठ हैं; **जगत्-अण्ड**—ब्रह्माण्डों के; **कोटि-कोटिषु**—करोड़ों-करोड़ों में; **अशेष**—असीमित; **वसुधा-आदि**—ग्रहों तथा अन्य अभिव्यक्तियों के साथ; **विभूति**—ऐश्वर्यों के साथ; **भिन्नम्**—विभिन्नताओं से युक्त होकर; **तत्**—वह; **ब्रह्म**—ब्रह्म; **निष्कलम्**—अंशों से रहित; **अनन्तम्**—अनन्त; **अशेष-भूतम्**—पूर्ण; **गोविन्दम्**—भगवान् गोविन्द को; **आदि-पुरुषम्**—आदि पुरुष को; **तम्**—उनकी; **अहम्**—मैं; **भजामि**—वन्दना करता हूँ।

अनुवाद

"'मैं उन आदि भगवान् गोविन्द की पूजा करता हूँ, जो महान् शक्ति से सम्पन्न हैं। उनके दिव्य स्वरूप का देदीप्यमान तेज निर्विशेष ब्रह्म है, जो परम, पूर्ण तथा असीम है और जो करोड़ों ब्रह्माण्डों में असंख्य विविध लोकों को उनके विभिन्न ऐश्वर्यों समेत प्रदर्शित करते हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *ब्रह्म-संहिता* (५.४०) से उद्धृत किया गया है। इसकी व्याख्या के लिए देखें आदिलीला २.१४।

परमात्मा येँहो, तेँहो कृष्णेर एक अंश ।
आत्मार 'आत्मा' हय कृष्ण सर्व-अवतंस ॥ १६१ ॥

परमात्मा—हृदय में स्थित परमात्मा; **येंहो**—जो; **तेंहो**—वे; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **एक**—एक; **अंश**—पूर्ण अंश; **आत्मार**—आत्मा के; **आत्मा**—आत्मा; **हय**—हैं; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **सर्व**—प्रत्येक वस्तु के; **अवतंस**—स्रोत।

अनुवाद

"परमात्मा उन पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के पूर्ण अंश हैं, जो समस्त जीवों के आदि आत्मा हैं। कृष्ण ही परमात्मा के आदि स्रोत हैं।

कृष्णमेनमवेहि त्वमात्मानमखिलात्मनाम् ।
जगद्धिताय सोऽप्यत्र देहीवाभाति मायया ॥ १६२ ॥

कृष्णमेनमवेहि त्वमात्मानमखिलात्मनाम् ।
जगद्धिताय सोऽप्यत्र देहीवाभाति मायया ॥ १६२ ॥

कृष्णम्—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण को; **एनम्**—इन; **अवेहि**—समझने का प्रयास करो; **त्वम्**—तुम; **आत्मानम्**—आत्मा को; **अखिल-आत्मनाम्**—सभी जीवात्माओं के; **जगत्-हिताय**—समस्त संसार के कल्याण के लिए; **सः**—वे; **अपि**—निश्चित रूप से; **अत्र**—यहाँ; **देही**—एक मनुष्य; **इव**—की तरह; **आभाति**—प्रतीत होते हैं; **मायया**—अपनी अन्तरंगा शक्ति द्वारा।

अनुवाद

'"तुम कृष्ण को समस्त आत्माओं (जीवों) के आदि आत्मा जानो। वे अपनी अहैतुकी कृपावश सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के लाभ हेतु सामान्य मानव के रूप में प्रकट हुए हैं। उन्होंने अपनी अन्तरंगा शक्ति के बल पर ही ऐसा किया है।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१०.१४.५५) का है। परीक्षित महाराज ने शुकदेव गोस्वामी से पूछा कि कृष्ण वृन्दावनवासियों को इतने प्रिय क्यों थे कि वे उन्हें अपनी सन्तानों या अपने जीवन से भी अधिक प्रेम करते थे। उस समय शुकदेव गोस्वामी ने उत्तर दिया कि हर भौतिक देह धारण करने वाले जीव को अपना आत्मा अत्यन्त प्रिय होता है। लेकिन वह आत्मा कृष्ण का अंश है, इसीलिए कृष्ण प्रत्येक जीव को अत्यन्त प्रिय हैं। हर जीव को अपना शरीर अत्यन्त प्रिय है और वह सभी प्रकार से शरीर की रक्षा करना चाहता है, क्योंकि शरीर के भीतर आत्मा निवास करता है। आत्मा तथा शरीर में घनिष्ठ सम्बन्ध होने के ही कारण शरीर इतना महत्त्वपूर्ण तथा हर एक को प्रिय है। इसी तरह आत्मा कृष्ण का अंश होने के कारण सारे जीवों को अत्यन्त प्रिय है। दुर्भाग्यवश, आत्मा (जीव) अपनी वैधानिक स्थिति भूल जाता है और सोचता है कि मैं केवल शरीर हूँ (*देहात्म बुद्धि*)। इस प्रकार आत्मा प्रकृति के विधि-विधानों के अधीन आ जाता है। जब जीव अपनी बुद्धि से कृष्ण के प्रति अपने आकर्षण को पुनः जाग्रत करता है, तब वह समझ सकता है कि वह शरीर नहीं,

अपितु कृष्ण का अंश है। इस तरह ज्ञान से पूरित होने पर वह शरीर एवं शरीर से सम्बन्धित हर वस्तु के प्रति आसक्त होकर श्रम नहीं करता। *जनस्य मोहोऽयम्अहं ममेति।* वह भौतिक संसार भी, जिसमें रहते हुए मनुष्य सोचता है कि, "मैं शरीर हूँ और यह मेरा है," माया है। मनुष्य को अपने आकर्षण को कृष्ण के प्रति मोड़ना चाहिए। *श्रीमद्भागवत* (१.२.७) में कहा गया है :

वासुदेवे भगवति भक्तियोगः प्रयोजितः।
जनयत्याशु वैराग्यं ज्ञानं च यदहैतुकम्॥

"भगवान् श्रीकृष्ण की भक्ति करने से मनुष्य तुरन्त ही अहैतुक ज्ञान तथा जगत् से वैराग्य प्राप्त कर लेता है।"

অথ বা বহুনৈতেন কিং জ্ঞাতেন তবার্জুন ।
বিষ্টভ্যাহমিদং কৃত্স্নমেকাংশেন স্থিতো জগৎ ॥ ১৬৩॥

अथ वा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ १६३॥

अथ वा—या; **बहुना**—अधिक; **एतेन**—इससे; **किम्**—क्या लाभ है; **ज्ञातेन**—जानने से; **तव**—तुम्हारे द्वारा; **अर्जुन**—हे अर्जुन; **विष्टभ्य**—प्रवेश करके; **अहम्**—मैं; **इदम्**—इस; **कृत्स्नम्**—सम्पूर्ण; **एक-अंशेन**—एक अंश से; **स्थितः**—स्थित हैं; **जगत्**—विश्व।

अनुवाद

"'किन्तु हे अर्जुन, इस विस्तृत ज्ञान की आवश्यकता ही क्या है? मैं तो अपने एक अंश से इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त हूँ और इसको धारण करता हूँ।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *भगवद्गीता* (१०.४२) का है।

'ভক্ত্যে' ভগবানের অনুভব—পূর্ণ-রূপ ।
এক-ই বিগ্রহে তাঁর অনন্ত স্বরূপ ॥ ১৬৪॥

'भक्त्ये' भगवानेर अनुभव—पूर्ण-रूप ।
एक-इ विग्रहे ताँर अनन्त स्वरूप ॥ १६४॥

भक्त्ये—प्रेममयी सेवा द्वारा; **भगवानेर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का; **अनुभव**—अनुभव; **पूर्ण-रूप**—पूर्ण रूप से; **एक-इ**—एक; **विग्रहे**—दिव्य स्वरूप में; **ताँर**—उनके; **अनन्त**—असीमित; **स्वरूप**—पूर्ण अंशों के विस्तार।

अनुवाद

"एकमात्र भक्ति द्वारा मनुष्य भगवान् के उस दिव्य रूप को समझ सकता है, जो सभी प्रकार से पूर्ण है। यद्यपि उनका स्वरूप एक है, किन्तु अपनी परम इच्छा से वे इसका विस्तार असंख्य रूपों में कर सकते हैं।

स्वयं-रूप, तदेकात्म-रूप, आवेश——नाम ।
प्रथमेइ तिन-रूपे रहेन भगवान् ॥ १६५॥

स्वयं-रूप, तदेकात्म-रूप, आवेश——नाम ।
प्रथमेइ तिन-रूपे रहेन भगवान् ॥ १६५॥

स्वयम्-रूप—वास्तविक रूप; **तत्-एकात्म-रूप**—स्वयं रूप से अभिन्न, समान रूप; **आवेश**—विशेष शक्ति युक्त; **नाम**—नामक; **प्रथमेइ**—प्रारम्भ में; **तिन-रूपे**—तीन रूपों में; **रहेन**—रहते हैं; **भगवान्**—परम भगवान्।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तीन प्रधान रूपों में विद्यमान रहते हैं—स्वयं-रूप, तदेकात्म-रूप तथा आवेश-रूप।

तात्पर्य

श्रील रूप गोस्वामी ने अपने ग्रन्थ *लघु भागवतामृत* (पूर्वखण्ड, श्लोक १२) में *स्वयंरूप* का वर्णन किया है—*अनन्यापेक्षी यद् रूपं स्वयंरूपः स उच्यते*—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का जो रूप अन्य रूपों पर निर्भर नहीं करता, वह *स्वयंरूप* या मूल रूप कहलाता है।" यह रूप *श्रीमद्भागवत* (१.३.२८) में भी वर्णित है : *कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्।*" कृष्ण आदि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं।" वृन्दावन में ग्वालबाल के रूप में कृष्ण का रूप भगवान् का मूल रूप या *स्वयं-रूप* कहलाता है। इसकी पुष्टि *ब्रह्म-संहिता* (५.१) द्वारा होती है :

ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्वकारणकारणम्॥

गोविन्द से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है। वे ही चरम स्रोत तथा समस्त कारणों के कारण हैं। *भगवद्गीता* (७.७) में भी इसकी पुष्टि होती है, जहाँ भगवान् कहते है—*मत्तः परतरं नान्यत्*—"मुझसे श्रेष्ठ अन्य सत्य नहीं है।

तदेकात्म-रूपों का भी वर्णन *लघु भागवतामृत* (पूर्वखण्ड, श्लोक १४) में मिलता है :

यद् रूपं तदभेदेन स्वरूपेण विराजते।
आकृत्यादिभिरन्याद्दक् स तदेकात्मरूपकः ॥

तदेकात्म-रूप का अस्तित्व *स्वयं-रूप* के साथ-साथ रहता है और वे दोनों अभिन्न होते हैं। फिर भी उनके शारीरिक लक्षण तथा विशिष्ट कर्म अलग प्रतीत होते हैं। *तदेकात्म-रूप* के दो विभाग भी हैं—*स्वांश* तथा *विलास।*

भगवान् कृष्ण के *आवेश* रूपों की भी व्याख्या *लघु भागवतामृत* (श्लोक १८) में पाई जाती है :

ज्ञान शक्त्यादिकलया यत्राविष्टो जनार्दनः।
त आवेशा निगद्यन्ते जीवा एव महत्तमाः ॥

"जिस जीव को भगवान् ज्ञान अथवा शक्ति प्रदान करते हैं, वह *आवेश-रूप* कहलाता है।" जैसाकि *चैतन्य-चरितामृत* (अन्त्य ७.११) में कहा गया है—*कृष्ण-शक्ति विना नहे तार प्रवर्तन*—जब तक भक्त को भगवान् से विशेष शक्ति प्राप्त नहीं होती, तब तक वह सारे विश्व में भगवान् के पवित्र नाम का प्रचार नहीं कर सकता। *आवेश-रूप* शब्द की यही व्याख्या है।

'स्वयं-रूप' 'स्वयं-प्रकाश'—दुइ रूपे स्फूर्ति ।
स्वयं-रूपे—एक 'कृष्ण' व्रजे गोप-मूर्ति ॥ १६६॥

'स्वयं-रूप' 'स्वयं-प्रकाश'—दुइ रूपे स्फूर्ति ।
स्वयं-रूपे—एक 'कृष्ण' व्रजे गोप-मूर्ति ॥ १६६॥

स्वयम्-रूप—भगवान् का मूल रूप; **स्वयम्-प्रकाश**—व्यक्तिगत अभिव्यक्ति; **दुइ रूपे**—दो रूपों में; **स्फूर्ति**—प्राकट्य; **स्वयम्-रूपे**—मूल रूप में; **एक**—एक; **कृष्ण**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्, श्रीकृष्ण; **व्रजे**—वृन्दावन में; **गोप-मूर्ति**—ग्वालबाल रूप।

अनुवाद

"भगवान् का आदि रूप (स्वयं-रूप) दो रूपों में प्रदर्शित होता है—स्वयं-रूप तथा स्वयं-प्रकाश। अपने आदि स्वयं-रूप में कृष्ण वृन्दावन में ग्वालबाल के रूप में देखे जाते हैं।

'प्राभव-वैभव'-रूपे द्विविध प्रकाशे ।
एक-वपु बहु रूप यैछे हैल रासे ॥ १६७॥

'प्राभव-वैभव'-रूपे द्विविध प्रकाशे ।
एक-वपु बहु रूप यैछे हैल रासे ॥ १६७॥

प्राभव—प्रभाव; **वैभव**—वैभव; **रूपे**—रूपों में; **द्वि-विध प्रकाशे**—दो प्रकार की अभिव्यक्तियाँ; **एक-वपु**—समान वास्तविक रूप; **बहु रूप**—असंख्य रूपों में विस्तारित; **यैछे**—जिस प्रकार; **हैल**—हुआ; **रासे**—गोपियों के साथ रास नृत्यों में नृत्य करते हुए।

अनुवाद

"अपने आदि रूप में कृष्ण प्राभव तथा वैभव इन दो स्वरूपों में प्रकट होते हैं। वे अपने एक आदि रूप का अनेक रूपों में विस्तार कर लेते हैं, जैसाकि उन्होंने रासलीला नृत्य के अवसर पर किया था।

महिषी-विवाहे हैल बहु-विध मूर्ति ।
'प्राभव प्रकाश'—एइ शास्त्र-परसिद्धि ॥ १६८॥

महिषी-विवाहे हैल बहु-विध मूर्ति ।
'प्राभव प्रकाश'—एइ शास्त्र-परसिद्धि ॥ १६८॥

महिषी-विवाहे—द्वारका में १६,१०८ रानियों से विवाह करते समय; **हैल**—हुए; **बहु-विध मूर्ति**—अनेक रूप; **प्राभव प्रकाश**—प्राभव-प्रकाश नामक; **एइ**—इस; **शास्त्र-परसिद्धि**—प्रामाणिक शास्त्रों द्वारा निर्णित।

अनुवाद

"जब भगवान् ने द्वारका में १६,१०८ पत्नियों से विवाह किया, तब उन्होंने अपने आपका अनेक रूपों में विस्तार किया। ये विस्तार तथा रासनृत्य के अवसर पर हुए विस्तार शास्त्रों के निर्देशानुसार प्राभव-प्रकाश कहलाते हैं।

सौभर्यादि-प्राय सेई काय-व्यूह नय ।
काय-व्यूह हैले नारदेर विस्मय ना हय ॥ १६९॥

सौभर्यादि-प्राय सेइ काय-व्यूह नय ।
काय-व्यूह हैले नारदेर विस्मय ना हय ॥ १६९॥

सौभरि-आदि—सौभरि मुनि आदि; **प्राय**—जैसा; **सेइ**—वह; **काय-व्यूह**—अपने शरीर का विस्तार; **नय**—नहीं है; **काय-व्यूह**—शरीर का विस्तार; **हैले**—यदि हो; **नारदेर**—नारद मुनि को; **विस्मय**—आश्चर्य; **ना हय**—नहीं हो सकता।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण के ये प्राभव-प्रकाश सौभरि मुनि के विस्तारों जैसे नहीं हैं। यदि ऐसा होता, तो नारद उन्हें देखकर विस्मित न हुए होते।

चित्रं बतैतदेकेन वपुषा युगपत्पृथक् ।
गृहेषु द्व्यष्ट-साहस्रं स्त्रिय एक उदावहत् ॥ १७०॥

चित्रं बतैतदेकेन वपुषा युगपत्पृथक् ।
गृहेषु द्वि-अष्ट-साहस्रं स्त्रिय एक उदावहत् ॥ १७०॥

चित्रम्—आश्चर्यजनक; **बत**—अरे; **एतत्**—यह; **एकेन**—एक; **वपुषा**—रूप द्वारा; **युगपत्**—एक ही समय में; **पृथक्**—अलग-अलग; **गृहेषु**—घरों में; **द्वि-अष्ट-साहस्रम्**—१६,०००; **स्त्रियः**—सभी रानियों से; **एकः**—एक श्रीकृष्ण ने; **उदावहत्**—विवाह किया।

अनुवाद

"'यह विचित्र बात है कि अद्वय कृष्ण ने सोलह हजार रानियों से विवाह करने के लिए उन्हीं के घरों में अपना विस्तार एक जैसे सोलह हजार रूपों में कर लिया।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.६९.२) का है, जिसे नारद मुनि ने कहा था।

सेई वपु, सेई आकृति पृथक् यदि भासे ।
भावावेश-भेदे नाम 'वैभव-प्रकाशे' ॥ १७१॥

सेइ वपु, सेइ आकृति पृथक् यदि भासे ।
भावावेश-भेदे नाम 'वैभव-प्रकाशे' ॥ १७१॥

सेइ वपु—वही रूप; **सेइ आकृति**—वही आकृति; **पृथक्**—भिन्न; **ग्रदि**—यदि; **भासे**—प्रतीत होती है; **भाव-आवेश**—दिव्य भाव के; **भेदे**—भेद से; **नाम**—नामक; **वैभव-प्रकाशे**—वैभव प्रकाश।

अनुवाद

"यदि एक रूप या शरीर विभिन्न भावों के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकट हो, तो यह वैभव-प्रकाश कहलाता है।

अनन्त प्रकाशे कृष्णेर नाहि मूर्ति-भेद ।
आकार-वर्ण-अस्त्र-भेदे नाम-विभेद ॥ १७२ ॥

अनन्त प्रकाशे कृष्णेर नाहि मूर्ति-भेद ।
आकार-वर्ण-अस्त्र-भेदे नाम-विभेद ॥ १७२ ॥

अनन्त प्रकाशे—असंख्य अभिव्यक्तियों में; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण का; **नाहि**—नहीं है; **मूर्ति-भेद**—स्वरूप का भेद; **आकार**—आकार के; **वर्ण**—रंग के; **अस्त्र**—अस्त्रों के; **भेदे**—भेद के कारण; **नाम-विभेद**—नामों का भेद।

अनुवाद

"जब भगवान् अपना विस्तार असंख्य रूपों में करते हैं, तब इन रूपों में कोई भेद नहीं होता, किन्तु विभिन्न लक्षणों, वर्ण तथा अस्त्रों में भिन्नता के कारण उनके नाम भिन्न-भिन्न होते हैं।

अन्ये च संस्कृतात्मानो विधिनाभिहितेन ते ।
यजन्ति त्वन्मयास्त्वां वै बहु-मूर्त्येक-मूर्तिकम् ॥ १७३ ॥

अन्ये च संस्कृतात्मानो विधिनाभिहितेन ते ।
ग्रजन्ति त्वन्मयास्त्वां वै बहु-मूर्त्येक-मूर्तिकम् ॥ १७३ ॥

अन्ये—अन्य लोग; **च**—तथा; **संस्कृत-आत्मानः**—जो लोग शुद्ध हैं; **विधिना**—नियमों द्वारा; **अभिहितेन**—प्रामाणिक शास्त्रों द्वारा निर्देशित; **ते**—ऐसे व्यक्ति; **ग्रजन्ति**—उपासना करते हैं; **त्वत्-मयाः**—आपमें आविष्ट होकर; **त्वाम्**—आपको; **वै**—निश्चय ही; **बहु-मूर्ति**—अनेक स्वरूपों वाले; **एक-मूर्तिकम्**—यद्यपि एक ही।

अनुवाद

"'विभिन्न वैदिक शास्त्रों में इन विभिन्न रूपों की पूजा करने के विधि-

विधान नियत किये गये हैं। जब मनुष्य इन विधि-विधानों से शुद्ध हो जाता है, तब वह आप पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की पूजा करता है। यद्यपि आप अनेक रूपों में प्रकट होते हैं, किन्तु आप एक हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.४०.७) से लिया गया है। वेदों में कहा गया है कि एक अनेक हो जाता है (*एको बहु स्याम्*)। पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् अपना विस्तार अनेक रूपों में—*विष्णु तत्त्व, जीव तत्त्व* तथा *शक्ति तत्त्व* में—करते हैं।

वैदिक ग्रन्थों के अनुसार इन रूपों में से हर एक की पूजा करने के विधि-विधान भिन्न-भिन्न हैं। यदि कोई व्यक्ति वैदिक ग्रन्थों का लाभ उठाकर इन विधि-विधानों द्वारा अपने आपको शुद्ध कर लेता है, तो अन्ततः उसे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की पूजा करने का अवसर प्राप्त होता है। *भगवद्गीता* (४.११) में कृष्ण कहते हैं—*मम वर्त्मानु वर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।* देवताओं की पूजा एक प्रकार से पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की ही पूजा है, किन्तु ऐसी पूजा *अविधिपूर्वकम्* अर्थात् अनुचित कहलाती है। वस्तुतः देवता-पूजा अल्पज्ञों के लिए है। जो बुद्धिमान है, वह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के इन शब्दों—*सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज*—को समझता है। जो देवताओं की पूजा करता है, वह अप्रत्यक्ष रूप में भगवान् की ही पूजा करता है, किन्तु प्रामाणिक शास्त्रों के अनुसार ऐसी अप्रत्यक्ष पूजा की आवश्यकता नहीं है। भगवान् की पूजा प्रत्यक्ष रूप से की जा सकती है।

वैभव-प्रकाश कृष्णेर—श्री-बलराम ।
वर्ण-मात्र-भेद, सब—कृष्णेर समान ॥ १७४॥

वैभव-प्रकाश कृष्णेर—श्री-बलराम ।
वर्ण-मात्र-भेद, सब—कृष्णेर समान ॥ १७४॥

वैभव-प्रकाश—वैभव रूप की अभिव्यक्ति; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **श्री-बलराम**—श्री बलराम; **वर्ण-मात्र**—केवल रंग; **भेद**—अन्तर; **सब**—सब कुछ; **कृष्णेर समान**—कृष्ण के समान।

अनुवाद

"कृष्ण के वैभव-रूप का प्रथम प्राकट्य श्री बलरामजी हैं। श्री बलराम तथा कृष्ण के शरीरों के रंग भिन्न हैं, अन्यथा बलराम सभी प्रकार से कृष्ण के समान ही हैं।

तात्पर्य

स्वयं-रूप, तदेकात्म-रूप, आवेश, प्राभव तथा *वैभव* का अन्तर समझने के लिए श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने निम्नलिखित विवरण दिया है। प्रारम्भ में कृष्ण के तीन स्वरूप होते हैं : (१) वृन्दावन में ग्वालबाल के रूप में *स्वयं-रूप;* (२) *तदेकात्म-रूप* जो *स्वांशक* तथा *विलास* में विभाजित है तथा (३) *आवेश-रूप। स्वांशक* अर्थात् अन्तरंगा शक्ति के विस्तारों के अन्तर्गत (१) कारणोदकशायी, गर्भोदकशायी तथा क्षीरोदकशायी एवं (२) मत्स्य, कूर्म, वराह तथा नृसिंह अवतार आते हैं। *विलास* -रूप के अन्तर्गत *प्राभव* आता है, जिसमें वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध सम्मिलित हैं। एक अन्य विभाग *वैभव* है, जिसमें द्वितीय वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध समेत २४ रूप हैं। इनमें से प्रत्येक के तीन-तीन रूप हैं—इस तरह कुल मिलाकर १२ रूप हैं। ये बारहों रूप वर्ष के बारहों महीनों तथा शरीर में लगाये जाने वाले द्वादश तिलकों के मुख्य नाम हैं। इन चारों रूपों के अन्य दो दो रूप हैं—इस तरह आठ रूप हुए—यथा पुरुषोत्तम, अच्युत आदि। चारों रूप (वासुदेव इत्यादि), बारह (केशव आदि) तथा आठ (पुरुषोत्तम आदि) मिलाकर २४ रूप हो जाते हैं। इन सारे रूपों के नाम उनके द्वारा अपने चारों हाथों में धारण किये गये अस्त्रों के अनुसार होते हैं।

वैभव-प्रकाश यैछे देवकी-तनुज ।
द्विभुज-स्वरूप कभु, कभु हय चतुर्भुज ॥ १७५ ॥

वैभव-प्रकाश यैछे देवकी-तनुज ।
द्विभुज-स्वरूप कभु, कभु हय चतुर्भुज ॥ १७५ ॥

वैभव-प्रकाश—वैभव प्रकाश का स्वरूप; **यैछे**—जिस प्रकार; **देवकी-तनुज**—देवकी

के पुत्र; **द्वि-भुज**—दो भुजाओं वाला; **स्वरूप**—रूप; **कभु**—कभी; **कभु**—कभी; **हय**—है; **चतुर्-भुज**—चार भुजाओं वाला।

अनुवाद

"वैभव-प्रकाश का एक उदाहरण है देवकी के पुत्र। उनके कभी दो हाथ होते हैं तो कभी चार हाथ।

तात्पर्य

जब भगवान् कृष्ण ने जन्म लिया, तब गर्भ से बाहर आने पर वे चतुर्भुज विष्णु के रूप में प्रकट हुए। तब देवकी तथा वसुदेव ने उनकी स्तुति की और उनसे कहा कि वे अपना द्विभुज रूप धारण करें। भगवान् ने तुरन्त द्विभुज रूप धारण कर लिया और आदेश दिया कि उन्हें यमुना के उस पार गोकुल पहुँचा दिया जाये।

যে-কালে দ্বিভুজ, নাম—বৈভব-প্রকাশ ।
চতুর্ভুজ হৈলে, নাম—প্রাভব-প্রকাশ ॥ ১৭৬॥

য়ে-কালে দ্বিভুজ, নাম—বৈভব-প্রকাশ ।
চতুর্ভুজ হৈলে, নাম—প্রাভব-প্রকাশ ॥ ১৭৬॥

য়ে-কালে দ্বি-ভুজ—जब भगवान् द्विभुज रूप में प्रकट होते हैं; **নাম**—नामक; **বৈভব-প্রকাশ**—वैभव प्रकाश; **চতুর্-ভুজ হৈলে**—जब वे चतुर्भुज बनते हैं; **নাম**—नामक; **প্রাভব-প্রকাশ**—प्राभव प्रकाश।

अनुवाद

"जब भगवान् द्विभुज रहते हैं, तो वे वैभव-प्रकाश कहलाते हैं और जब वे चतुर्भुज होते हैं तो प्राभव-प्रकाश कहलाते हैं।

স্বয়ং-রূপের গোপ-বেশ, গোপ-অভিমান ।
বাসুদেবের ক্ষত্রিয়-বেশ, 'আমি—ক্ষত্রিয়'-জ্ঞান ॥ ১৭৭॥

স্বয়ং-রূপের গোপ-বেশ, গোপ-অভিমান ।
বাসুদেবের ক্ষত্রিয়-বেশ, 'আমি—ক্ষত্রিয়'-জ্ঞান ॥ ১৭৭॥

স্বয়ম্-রূপের—स्वयं रूप का; **গোপ-বেশ**—ग्वाल बाल की वेशभूषा; **গোপ-অভিমান**—

स्वयं को ग्वाल बालक मानकर; **वासुदेवेर**—वसुदेव देवकी के पुत्र, वासुदेव का; **क्षत्रिय-वेश**—एक क्षत्रिय जैसा वेश; **आमि**—मैं हूँ; **क्षत्रिय**—एक क्षत्रिय; **ज्ञान**—जानकर।

अनुवाद

"स्वयं-रूप (अपने मूल रूप) में भगवान् ग्वालबाल के वेश में रहते हैं और अपने आपको ग्वालबाल मानते हैं। जब वे वसुदेव तथा देवकी के पुत्र के रूप में प्रकट होते हैं, तब उनका वेश तथा उनकी चेतना एक क्षत्रिय अर्थात् योद्धा जैसे होते हैं।

सौन्दर्य, ऐश्वर्य, माधुर्य, वैदग्ध्य-विलास ।
व्रजेन्द्र-नन्दने इहा अधिक उल्लास ॥ १७८॥

सौन्दर्य्य, ऐश्वर्य्य, माधुर्य्य, वैदग्ध्य-विलास ।
व्रजेन्द्र-नन्दने इहा अधिक उल्लास ॥ १७८॥

सौन्दर्य्य—सुन्दरता; **ऐश्वर्य्य**—ऐश्वर्य; **माधुर्य्य**—मधुरता; **वैदग्ध्य-विलास**—बौद्धिक लीलाएँ; **व्रजेन्द्र-नन्दने**—नन्द महाराज तथा यशोदा के पुत्र के; **इहा**—ये सभी; **अधिक उल्लास**—और अधिक विलास हैं।

अनुवाद

"जब योद्धा-वासुदेव के सौन्दर्य, ऐश्वर्य, माधुर्य तथा बौद्धिक लीलाओं की तुलना नन्द महाराज के पुत्र ग्वालबाल कृष्ण से की जाती है, तब देखा जाता है कि कृष्ण के लक्षण अधिक सुहावने लगते हैं।

गोविन्देर माधुरी देखि' वासुदेवेर क्षोभ ।
से माधुरी आस्वादिते उपजय लोभ ॥१७९॥

गोविन्देर माधुरी देखि' वासुदेवेर क्षोभ ।
से माधुरी आस्वादिते उपजय लोभ ॥ १७९॥

गोविन्देर—भगवान् गोविन्द की; **माधुरी**—मधुरता; **देखि'**—देखकर; **वासुदेवेर**—वासुदेव का; **क्षोभ**—विचलित होना; **से**—वह; **माधुरी**—मधुरता; **आस्वादिते**—आस्वादन करने के लिए; **उपजय**—जाग जाता है; **लोभ**—लालच।

अनुवाद

"निस्सन्देह, गोविन्द की माधुरी देखकर वासुदेव में क्षोभ उत्पन्न होता

है और तब उस माधुरी का आस्वादन करने के लिए उनमें दिव्य लोभ उत्पन्न होता है।

उदगीर्णाद्भुत-माधुरी-परिमलस्याभीर-लीलस्य मे
द्वैतं हन्त समीक्षयन्मुहुरसौ चित्रीयते चारणः ।
चेतः केलि-कुतूहलोत्तरलितं सत्यं सखे मामकं
यस्य प्रेक्ष्य स्वरूपतां व्रज-वधू-सारूप्यमन्विच्छति ॥ १८० ॥

उद्गीर्ण—सराबोर; **अद्भुत**—अद्भुत; **माधुरी**—मधुरता; **परिमलस्य**—जिसकी सुगन्ध; **आभीर**—एक ग्वालबाल की; **लीलस्य**—जिनकी लीलाएँ हैं; **मे**—मेरा; **द्वैतम्**—दूसरा रूप; **हन्त**—हाय; **समीक्षयन्**—दिखाकर; **मुहुः**—बारम्बार; **असौ**—वह; **चित्रीयते**—एक चित्र की भाँति नाटक करते हैं; **चारणः**—एक नाटक का नायक; **चेतः**—हृदय; **केलि-कुतूहल**—लीलाओं के लिए उत्सुकता द्वारा; **उत्तरलितम्**—अत्यन्त उत्साहित; **सत्यम्**—वास्तव में; **सखे**—हे प्रिय मित्र; **मामकम्**—मेरे; **यस्य**—जिसको; **प्रेक्ष्य**—देखने से; **स्वरूपताम्**—मेरे स्वरूप के समान; **व्रज-वधू**—व्रजभूमि की गोपियों के; **सारूप्यम्**—समान एक स्वरूप; **अन्विच्छति**—चाहता है।

अनुवाद

'"हे मित्र, यह अभिनेता मेरे द्वितीय रूप जैसा लगता है। यह चित्र की भाँति आश्चर्यजनक आकर्षक माधुरी तथा सुगन्धि से ओतप्रोत ग्वालबाल की तरह मेरी लीलाएँ प्रदर्शित करता है, जो व्रजबालाओं को अत्यन्त प्रिय हैं। जब मैं इस प्रदर्शन को देखता हूँ, तो मेरा मन उत्तेजित हो उठता है। ऐसी लीलाओं के लिए मेरी भी इच्छा होने लगती है और इच्छा होती है कि मुझे भी व्रजबालाओं जैसा ही रूप प्राप्त हो जाए।'

तात्पर्य

यह श्लोक *ललितमाधव* (४.१९) से है और द्वारका में वासुदेव द्वारा कहा गया था।

मथुराय यैछे गन्धर्व-नृत्य-दरशने ।
पुनः द्वारकाते यैछे चित्र-विलोकने ॥ १८१ ॥

मथुराय यैछे गन्धर्व-नृत्य-दरशने ।
पुनः द्वारकाते यैछे चित्र-विलोकने ॥ १८१ ॥

मथुराय—मथुरा में; **यैछे**—जिस प्रकार; **गन्धर्व-नृत्य**—गन्धर्वों का नृत्य; **दरशने**—देखकर; **पुनः**—फिर; **द्वारकाते**—द्वारका में; **यैछे**—जिस प्रकार; **चित्र-विलोकने**—कृष्ण का एक चित्र देखकर।

अनुवाद

"एक बार जब वासुदेव ने मथुरा में गन्धर्व-नृत्य देखा, तो कृष्ण के प्रति वासुदेव को आकर्षण का अनुभव हुआ। दूसरी बार द्वारका में हुआ, जब वासुदेव कृष्ण का चित्र देखकर चकित हो गये थे।

अपरिकलित-पूर्वः कश्चमत्कार-कारी
स्फुरतु मम गरीयानेष माधुर्य-पूरः ।
अयमहमपि हन्त प्रेक्ष्य यं लुब्ध-चेताः
सरभसमुपभोक्तुं कामये राधिकेव ॥ १८२ ॥

अपरिकलित-पूर्वः कश्चमत्कार-कारी
स्फुरतु मम गरीयानेष माधुर्य-पूरः ।
अयमहमपि हन्त प्रेक्ष्य यं लुब्ध-चेताः
सरभसमुपभोक्तुं कामये राधिकेव ॥ १८२ ॥

अपरिकलित—अनुभव न किया हुआ; **पूर्वः**—पहले; **कः**—कौन; **चमत्कार-कारी**—चमत्कार करने वाला; **स्फुरतु**—प्रकट करता है; **मम**—मुझसे; **गरीयान्**—और श्रेष्ठ; **एषः**—यह; **माधुर्य-पूरः**—माधुर्य का भण्डार; **अयम्**—यह; **अहम्**—मैं; **अपि**—भी; **हन्त**—हाय; **प्रेक्ष्य**—देखकर; **यम्**—जिसे; **लुब्ध-चेताः**—मेरा मन भ्रमित होकर; **सरभसम्**—आग्रहपूर्वक; **उपभोक्तुम्**—आनन्द लेने के लिए; **कामये**—इच्छा करता है; **राधिका इव**—श्रीमती राधारानी की भाँति।

अनुवाद

"'वह कौन है, जो मुझसे भी बढ़कर ऐसी प्रभूत माधुरी प्रकट कर रहा है, जिसका अनुभव इसके पूर्व कभी नहीं किया गया और जो सबको चकित करने वाली है? हाय! इस सौन्दर्य को देखकर मेरा मन भी मोहित

हो रहा है और मैं स्वयं श्रीमती राधारानी के समान इसका आनन्द उठाने के लिए इच्छुक हूँ।'

तात्पर्य

यह श्लोक वासुदेव द्वारा द्वारका में कहा गया है, जो श्रील रूप गोस्वामी कृत *ललितमाधव* (८.३४) में अंकित है।

सेई वपु भिन्नाभासे किछु भिन्नाकार ।
भावावेशाकृति-भेदे 'तदेकात्म' नाम ताँर ॥ १८३॥

सेइ वपु भिन्नाभासे किछु भिन्नाकार ।
भावावेशाकृति-भेदे 'तदेकात्म' नाम ताँर ॥ १८३॥

सेइ वपु—वह शरीर; **भिन्न-आभासे**—भिन्न रूप में प्रकट; **किछु**—कुछ; **भिन्न-आकार**—शरीर की भिन्नता; **भाव-आवेश-आकृति**—रूप तथा दिव्य भावनाएँ; **भेदे**—भेद द्वारा; **तत्-एकात्म नाम**—तदेकात्म नाम के; **ताँर**—कृष्ण के।

अनुवाद

"जब वह शरीर किंचित् भिन्न रूप में प्रकट होता है और इसके स्वरूप भाव तथा रूप में किंचित् भिन्न होते हैं, तो वह तदेकात्म कहलाता है।

तदेकात्म-रूपे 'विलास', 'स्वांश'—दुइ भेद ।
विलास, स्वांशेर भेदे विविध विभेद ॥ १८४॥

तदेकात्म-रूपे 'विलास', 'स्वांश'—दुइ भेद ।
विलास, स्वांशेर भेदे विविध विभेद ॥ १८४॥

तत्-एकात्म-रूपे—तदेकात्म रूप में; **विलास**—लीला; **स्वांश**—स्वांश, निजी विस्तार; **दुइ भेद**—दो भेद; **विलास**—लीला विस्तार के; **स्वांशेर**—निजी विस्तार के; **भेदे**—भेदों द्वारा; **विविध**—अनेक; **विभेद**—भेद।

अनुवाद

"तदेकात्म-रूप के अन्तर्गत विलास (लीला-विस्तार) तथा स्वांश (व्यक्तिगत विस्तार) दो भेद हैं। लीला (विलास) तथा स्वांश के अनुसार विविध विभेद हैं।

तात्पर्य

भगवान् के विलास विस्तारों का वर्णन *लघु भागवतामृत* (१.१५) के निम्नलिखित श्लोक में किया गया है :

स्वरूपमन्याकारं यत्तस्य भाति विलासतः ।
प्रायेणात्मसमं शक्त्या स विलासो निगद्यते ॥

"जब भगवान् अपनी अचिन्त्य शक्ति के द्वारा भिन्न आकारों से युक्त अपने विविध रूप प्रदर्शित करते हैं, तब ये रूप विलास-विग्रह कहलाते हैं।"

लघु भागवतामृत (पूर्वखण्ड, श्लोक १७) में भगवान् के स्वांश विस्तारों का भी वर्णन किया गया है :

तादृशो न्यून शक्तिं यो व्यनक्ति स्वांश ईरितः ।
संकर्षणादिर्मत्स्यादिर्यथा तत्तत्स्वधामसु ॥

जब कृष्ण का कोई रूप आदि रूप से अभिन्न होकर कम महत्त्वपूर्ण होता है तथा कम शक्ति दिखलाता है, तब वह *स्वांश* कहलाता है। अपने-अपने धाम में निवास कर रहे भगवान के चतुर्व्यूह अवतारों—संकर्षण, वासुदेव, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध से लेकर पुरुष अवतार, लीलावतार, मन्वन्तर अवतार एवं युगावतार स्वांश के उदाहरण हैं।

प्राभव-वैभव-भेदे विलास—द्विधाकार ।
विलासेर विलास-भेद—अनन्त प्रकार ॥ १८५ ॥

प्राभव-वैभव-भेदे—प्राभव तथा वैभव के बीच भेद द्वारा; **विलास**—लीला विस्तार; **द्विधा-आकार**—दो प्रकार के; **विलासेर**—लीला रूपों के; **विलास-भेद**—विभिन्न लीलाओं द्वारा; **अनन्त प्रकार**—असीमित प्रकार के।

अनुवाद

"पुनः विलास रूपों को दो श्रेणियों में बाँटा गया है—प्राभव तथा वैभव। इन रूपों के विलासों के भी अंसख्य भेद हैं।

প্রাভব-বিলাস——বাসুদেব, সঙ্কর্ষণ ।
প্রদ্যুম্ন, অনিরুদ্ধ,——মুখ্য চারি-জন ॥ ১৮৬॥

প্রাভব-বিলাস——বাসুদেব, সঙ্কর্ষণ ।
প্রদ্যুম্ন, অনিরুদ্ধ,——মুখ্য চারি-জন ॥ ১৮৬॥

প্রাভব-বিলাস—প্রাভব বিলাস রূপ; **বাসুদেব**—বাসুদেব; **সঙ্কর্ষণ**—সংকর্ষণ; **প্রদ্যুম্ন**—প্রদ্যুম্ন; **অনিরুদ্ধ**—অনিরুদ্ধ; **মুখ্য চারি-জন**—চার মুখ্য বিস্তার।

অনুবাদ

"मुख्य चतुर्व्यूहों के नाम हैं वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध। ये प्राभव-विलास कहलाते हैं।

ব্রজে গোপ-ভাব রামের, পুরে ক্ষত্রিয়-ভাবন ।
বর্ণ-বেশ-ভেদ, তাতে 'বিলাস' তাঁর নাম ॥ ১৮৭॥

ব্রজে গোপ-ভাব রামের, পুরে ক্ষত্রিয়-ভাবন ।
বর্ণ-বেশ-ভেদ, তাতে 'বিলাস' তাঁর নাম ॥ ১৮৭॥

ব্রজে—বৃন্দাবন में; **গোপ-ভাব**—एक ग्वाल बालक का भाव; **রামের**—बलराम का; **পুরে**—द्वारका में; **ক্ষত্রিয়-ভাবন**—एक क्षत्रिय का भाव; **বর্ণ-বেশ-ভেদ**—रंग तथा वेश के भेदों द्वारा; **তাতে**—इसलिए; **বিলাস**—लीला विस्तार; **তাঁর নাম**—उनका नाम।

अनुवाद

"कृष्ण के आदि रूप जैसे ही रूप वाले बलराम वृन्दावन में एक ग्वालबाल हैं और वे अपने आपको द्वारका के क्षत्रिय वंश के एक सदस्य भी मानते हैं। इस तरह उनका रंग तथा वेश भिन्न है और वे कृष्ण के लीला-रूप कहलाते हैं।

বৈভব-প্রকাশে আর প্রাভব-বিলাসে ।
এক-ই মূর্ত্যে বলদেব ভাব-ভেদে ভাসে ॥ ১৮৮॥

বৈভব-প্রকাশে আর প্রাভব-বিলাসে ।
এক-ই মূর্ত্যে বলদেব ভাব-ভেদে ভাসে ॥ ১৮৮॥

বৈভব-প্রকাশে—वैभव प्राकट्य में; **আর**—तथा; **প্রাভব-বিলাসে**—प्राभव लीला रूप

में; **एक-इ मूर्त्ये**—एक रूप में; **बलदेव**—भगवान् बलराम; **भाव-भेदे**—विभिन्न भावों के अनुसार; **भासे**—रहते हैं।

अनुवाद

"श्री बलराम कृष्ण के वैभव-प्रकाश रूप हैं। वे वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध के मूल चतुर्व्यूह में भी प्रकट होते हैं। ये भिन्न भावों वाले प्राभव-विलास विस्तार हैं।

आदि-चतुर्व्यूह—ईँहार केह नाहि सम ।
अनन्त चतुर्व्यूह-गणेर प्राकट्य-कारण ॥१८९॥

आदि-चतुर्व्यूह—ईँहार केह नाहि सम ।
अनन्त चतुर्व्यूह-गणेर प्राकट्य-कारण ॥१८९॥

आदि-चतुर्-व्यूह—मूल चतुर्व्यूह का समूह ; **ईँहार**—इसके; **केह नाहि**—कोई नहीं; **सम**—समान; **अनन्त**—असीमित; **चतुर्-व्यूह-गणेर**—चतुर्व्यूह विस्तारों की; **प्राकट्य**—अभिव्यक्ति के; **कारण**—कारण।

अनुवाद

"चतुर्व्यूह का प्रथम विस्तार अद्वितीय है। उनकी कोई तुलना ही नहीं है। ये चतुर्व्यूह-रूप अनन्त चतुर्व्यूह-रूपों के स्त्रोत हैं।

कृष्णेर एइ चारि प्राभव-विलास ।
द्वारका-मथुरा-पुरे नित्य ईँहार वास ॥१९०॥

कृष्णेर एइ चारि प्राभव-विलास ।
द्वारका-मथुरा-पुरे नित्य ईँहार वास ॥१९०॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण के; **एइ**—ये; **चारि**—चार; **प्राभव-विलास**—प्राभव लीला रूप; **द्वारका-मथुरा-पुरे**—द्वारका तथा मथुरा में; **नित्य**—नित्य रूप से; **ईँहार**—इनका; **वास**—निवास।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण के ये चार प्राभव-विलास रूप द्वारका तथा मथुरा में शाश्वत निवास करते हैं।"

এই চারি হৈতে চব্বিশ মূর্তি পরকাশ ।
অস্ত্র-ভেদে নাম-ভেদ—বৈভব-বিলাস ॥ ১৯১ ॥

এइ চারি হৈতে চব্বিশ মূর্তি পরকাশ ।
অস্ত্র-ভেদে নাম-ভেদ—বৈভব-বিলাস ॥ ১৯১ ॥

এइ চারি হৈতে—इन चारों से; **চব্বিশ**—चौबीस; **মূর্তি**—रूप; **পরকাশ**—प्रकट; **অস্ত্র-ভেদে**—अस्त्रों के भेदानुसार; **নাম-ভেদ**—नामों का भेद; **বৈভব-বিলাস**—वैभव लीला विस्तार।

अनुवाद

"एक मूल चतुर्व्यूह से चौबीस रूप प्रकट होते हैं। वे अपने चारों हाथों में धारण किये जाने वाले अस्त्रों कि स्थिति के अनुसार भिन्न होते हैं। वे वैभव-विलास कहलाते हैं।

পুনঃ কৃষ্ণ চতুর্ব্যূহ লঞা পূর্ব-রূপে ।
পরব্যোম-মধ্যে বৈসে নারায়ণ-রূপে ॥ ১৯২ ॥

পুনঃ কৃষ্ণ চতুর্ব্যূহ লঞা পূর্ব-রূপে ।
পরব্যোম-মধ্যে বৈসে নারায়ণ-রূপে ॥ ১৯২ ॥

পুনঃ—फिर; **কৃষ্ণ**—कृष्ण; **চতুর্-ব্যূহ**—चार व्यूह; **লঞা**—लेकर; **পূর্ব-রূপে**—पहले की तरह; **পরব্যোম-মধ্যে**—परव्योम क्षेत्र में; **বৈসে**—रहते हैं; **নারায়ণ-রূপে**—चतुर्भुज नारायण रूप में।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण पुनः विस्तार करते हैं और परव्योम अर्थात् आध्यात्मिक आकाश में वे अपने मूल चतुर्व्यूह रूपों के विस्तार के साथ अपने चतुर्भुजी नारायण रूप में पूर्णरूपेण स्थित हैं।

तात्पर्य

परव्योम अर्थात् आध्यात्मिक आकाश के ऊपर गोलोक वृन्दावन है, जिसके तीन अंग हैं। दो अंग मथुरा तथा द्वारका हैं, जिनमें कृष्ण अपने प्राभव-विलास रूपों में निवास करते हैं। कृष्ण के वैभव-प्रकाश विस्तार बलराम गोकुल में नित्य वास करते हैं। प्राभव-विलास चतुर्व्यूह से वैभव-विलास के चौबीस रूपों का विस्तार होता है। इनमें से प्रत्येक चतुर्भुजी रूप हैं, जो विभिन्न अवस्थाओं में अस्त्र धारण किये हुए रहते हैं। आध्यात्मिक आकाश में सर्वोच्च

लोक गोलोक वृन्दावन है और उसके नीचे स्वयं आध्यात्मिक आकाश है। उस आध्यात्मिक आकाश में स्वयं कृष्ण चतुर्भुजी हैं और नारायण रूप में स्थित हैं।

তাঁহা হৈতে পুনঃ চতুর্ব্যূহ-পরকাশ ।
আবরণ-রূপে চারি-দিকে যাঁর বাস ॥ ১৯৩ ॥

তাঁহা হৈতে পুনঃ চতুর্ব্যূহ-পরকাশ ।
আবরণ-রূপে চারি-দিকে যাঁর বাস ॥ ১৯৩ ॥

তাঁহা হৈতে—मूल चतुर्व्यूह से; **पुनः**—दोबारा; **चतुर्-व्यूह-परकाश**—चतुर्व्यूह विस्तार का प्राकट्य; **आवरण-रूपे**—एक आवरण के रूप में; **चारि-दिके**—चार दिशाओं में; **याँर**—जिनका; **वास**—निवास।

अनुवाद

"इस तरह मूल चतुर्व्यूह रूप पुनः द्वितीय चतुर्व्यूह रूप में प्रकट होते हैं। इन द्वितीय चतुर्व्यूहों के आवास चारों दिशाओं को आच्छादित करते हैं।

চারি-জনের পুনঃ পৃথক্তিন তিন মূর্তি ।
কেশবাদি যাহা হৈতে বিলাসের পূর্তি ॥ ১৯৪ ॥

চারি-জনের পুনঃ পৃথক তিন তিন মূর্তি ।
কেশবাদি যাহা হৈতে বিলাসের পূর্তি ॥ ১৯৪ ॥

चारि-जनेर—चारों विस्तार के मूल के; **पुनः**—फिर; **पृथक्**—अलग; **तिन तिन**—तीन-तीन; **मूर्ति**—रूप; **केशव-आदि**—भगवान् केशव आदि; **याहा हैते**—जिनसे; **विलासेर पूर्ति**—विलास विस्तारों की पूर्ति होती है।

अनुवाद

"इन चतुर्व्यूहों का पुनः तीन बार विस्तार होता है, जिनमें केशव आदि आते हैं। यह विलास-रूपों की पूर्ति है।

চক্রাদি-ধারণ-ভেদে নাম-ভেদ সব ।
বাসুদেবের মূর্তি—কেশব, নারায়ণ, মাধব ॥ ১৯৫ ॥

चक्रादि-धारण-भेदे नाम-भेद सब ।
वासुदेवेर मूर्ति—केशव, नारायण, माधव ॥ १९५ ॥

चक्र-आदि—चक्र तथा अन्य अस्त्रों को; **धारण**—धारण करने के; **भेदे**—भेद द्वारा; **नाम**—नामों के; **भेद**—भेद; **सब**—सभी; **वासुदेवेर मूर्ति**—वासुदेव के विस्तार; **केशव**—केशव; **नारायण**—नारायण; **माधव**—माधव।

अनुवाद

"चतुर्व्यूह में से प्रत्येक रूप के तीन विस्तार होते हैं और वे अस्त्र धारण करने की स्थिति के अनुसार विभिन्न नाम वाले होते हैं। वासुदेव के विस्तार हैं केशव, नारायण तथा माधव।

सङ्कर्षणेर मूर्ति—गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन ।
ए अन्य गोविन्द—नहे व्रजेन्द्र-नन्दन ॥ १९६ ॥
सङ्कर्षणेर मूर्ति—गोविन्द, विष्णु, मधुसूदन ।
ए अन्य गोविन्द—नहे व्रजेन्द्र-नन्दन ॥ १९६ ॥

सङ्कर्षणेर मूर्ति—संकर्षण के विस्तार; **गोविन्द**—गोविन्द; **विष्णु**—विष्णु; **मधुसूदन**—मधुसूदन; **ए**—यह; **अन्य**—अलग; **गोविन्द**—गोविन्द; **नहे व्रजेन्द्र-नन्दन**—नन्द महाराज के पुत्र नहीं हैं।

अनुवाद

"संकर्षण के विस्तार हैं गोविन्द, विष्णु तथा मधुसूदन। ये गोविन्द मूल गोविन्द से भिन्न हैं, क्योंकि ये महाराज नन्द के पुत्र नहीं हैं।

प्रद्युम्नेर मूर्ति—त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर ।
अनिरुद्धेर मूर्ति—हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर ॥ १९७ ॥
प्रद्युम्नेर मूर्ति—त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर ।
अनिरुद्धेर मूर्ति—हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर ॥ १९७ ॥

प्रद्युम्नेर मूर्ति—प्रद्युम्न के रूप के विस्तार; **त्रिविक्रम**—त्रिविक्रम; **वामन**—वामन; **श्रीधर**—श्रीधर; **अनिरुद्धेर मूर्ति**—अनिरूद्ध के विस्तार; **हृषीकेश**—हृषिकेश; **पद्मनाभ**—पद्मनाभ; **दामोदर**—दामोदर।

अनुवाद

"प्रद्युम्न के विस्तार हैं त्रिविक्रम, वामन तथा श्रीधर। इसी तरह अनिरुद्ध के विस्तार हृषीकेश, पद्मनाभ तथा दामोदर हैं।

द्वादश-मासेर देवता——एइ-बार जन ।
मार्गशीर्षे——केशव, पौषे——नारायण ॥ १९८॥

द्वादश-मासेर देवता——एइ-बार जन ।
मार्गशीर्षे——केशव, पौषे——नारायण ॥ १९८॥

द्वादश-मासेर—बारह महीनों के; **देवता**—देवता; **एइ**—ये; **बार जन**—बारह भगवान्; **मार्ग-शीर्षे**—अग्रहायन (नवम्बर-दिसम्बर) का महीना; **केशव**—केशव; **पौषे**—पौष (दिसम्बर-जनवरी) मास; **नारायण**—नारायण।

अनुवाद

"ये बारहों बारह महीनों के प्रधान देवता हैं। केशव अग्रहायण मास के और नारायण पौष मास के प्रधान देवता हैं।

माघेर देवता——माधव, गोविन्द——फाल्गुने ।
चैत्रे——विष्णु, वैशाखे——श्री-मधुसूदन ॥ १९९॥

माघेर देवता——माधव, गोविन्द——फाल्गुने ।
चैत्रे——विष्णु, वैशाखे——श्री-मधुसूदन ॥ १९९॥

माघेर देवता—माघ (जनवरी-फरवरी) मास के देवता; **माधव**—माधव; **गोविन्द**—गोविन्द; **फाल्गुने**—फाल्गुन (फरवरी-मार्च) मास के; **चैत्रे**—चैत्र (मार्च-अप्रैल) मास में; **विष्णु**—भगवान् विष्णु; **वैशाखे**—वैशाख (अप्रैल-मई) मास में; **श्री-मधुसूदन**—श्री मधुसूदन।

अनुवाद

"माघ मास के प्रधान देवता माधव हैं और फाल्गुन के गोविन्द हैं। विष्णु चैत्र मास के और मधुसूदन वैशाख मास के प्रधान देवता हैं।

ज्यैष्ठे——त्रिविक्रम, आषाढ़े——वामन देवेश ।
श्रावणे——श्रीधर, भाद्रे——देव हृषीकेश ॥२००॥

ज्यैष्ठे—त्रिविक्रम, आषाढ़े—वामन देवेश ।
श्रावणे—श्रीधर, भाद्रे—देव हृषीकेश ॥ २००॥

ज्यैष्ठे—ज्येष्ठ (मई-जून) मास में; **त्रिविक्रम**—त्रिविक्रम; **आषाढ़े**—आषाढ़ (जून-जुलाई) मास में; **वामन देव-ईश**—भगवान् वामन; **श्रावणे**—श्रावण (जुलाई-अगस्त) मास में; **श्रीधर**—श्रीधर; **भाद्रे**—भाद्र (अगस्त-सितम्बर) मास में; **देव हृषीकेश**—भगवान् हृषिकेश।

अनुवाद

"ज्येष्ठ मास के प्रधान देवता त्रिविक्रम हैं, आषाढ़ के देवता वामन हैं, श्रावण मास के श्रीधर तथा भाद्र मास के हृषीकेश हैं।

आश्विने—पद्मनाभ, कार्तिके दामोदर ।
'राधा-दामोदर' अन्य ब्रजेन्द्र-कोङर ॥२०१॥

आश्विने—पद्मनाभ, कार्तिके दामोदर ।
'राधा-दामोदर' अन्य व्रजेन्द्र-कोङर ॥ २०१॥

आश्विने—आश्विन (सितम्बर-अक्तूबर) मास में; **पद्मनाभ**—पद्मनाभ; **कार्तिके**—कार्तिक (अक्तूबर-नवम्बर) मास में; **दामोदर**—दामोदर; **राधा-दामोदर**—श्रीमती राधारानी के दामोदर; **अन्य**—दूसरे हैं; **व्रजेन्द्र-कोडर**—नन्द महाराज के पुत्र।

अनुवाद

"आश्विन मास के प्रधान देवता पद्मनाभ हैं और कार्तिक मास के दामोदर हैं। ये दामोदर वृन्दावन के नन्द महाराज के पुत्र राधा-दामोदर से भिन्न हैं।

द्वादश-तिलक-मन्त्र एई द्वादश नाम ।
आचमने एई नामे स्पर्शि तत्तत्स्थान ॥२०२॥

द्वादश-तिलक-मन्त्र एइ द्वादश नाम ।
आचमने एइ नामे स्पर्शि तत्तत्स्थान ॥ २०२॥

द्वादश-तिलक—तिलक के बारह चिह्नों के; **मन्त्र**—मंत्र; **एइ**—ये; **द्वादश नाम**—बारह नाम; **आचमने**—जल से आचमन करने में; **एइ नामे**—इन्हीं नामों के साथ; **स्पर्शि**—हम स्पर्श करते हैं; **तत्-तत्-स्थान**—विशिष्ट स्थानों को।

अनुवाद

"शरीर के बारह स्थानों पर तिलक लगाते समय विष्णु के इन बारह नामों वाले मन्त्र का उच्चारण करना होता है। नित्य पूजा के बाद जल से आचमन करते समय इन नामों का उच्चारण करते हुए शरीर के प्रत्येक अंग का स्पर्श करना चाहिए।

तात्पर्य

शरीर में तिलक लगाते समय निम्नलिखित मन्त्र का उच्चारण करना चाहिए, जिसमें विष्णु के बारह नाम आते हैं :

ललाटे केशवं ध्यायेन नारायणमथोदरे।
वक्षःस्थले माधवं तु गोविन्दं कण्ठकूपके॥
विष्णुं च दक्षिणे कुक्षौ बाहौ च मधुसूदनम्।
त्रिविक्रमं कन्धरे तु वामनं वाम पार्श्वके॥
श्रीधरं वामबाहौ तु हृषीकेशं तु कन्धरे।
पृष्ठे च पद्मनाभं च कट्यां दामोदरं न्यसेत्॥

"मस्तक पर तिलक लगाते समय केशव का स्मरण करें। उदर में तिलक लगाते समय नारायण का, वक्षस्थल पर तिलक लगाते समय माधव का, गले के गड्ढे में तिलक लगाते समय गोविन्द का स्मरण करें। दाहिनी कोख में तिलक लगाते समय विष्णु का तथा दाहिनी भुजा में तिलक लगाते समय मधुसूदन का स्मरण करें। दाहिने कन्धे में तिलक लगाते समय त्रिविक्रम का, उदर के बाईं ओर तिलक लगाते समय वामन का, बाईं भुजा में तिलक लगाते समय श्रीधर का तथा बाएँ कन्धे में तिलक लगाते समय हृषीकेश का स्मरण करें। पीठ पर तिलक लगाते समय पद्मनाभ तथा दामोदर का स्मरण करें।"

এই চারি-জনের বিলাস-মূর্তি আর অষ্ট জন ।
তাঁ সবার নাম কহি, শুন সনাতন ॥২০৩॥

এइ चारि-जनेर विलास-मूर्ति आर अष्ट जन ।
ताँ सबार नाम कहि, शुन सनातन ॥ २०३ ॥

एइ चारि-जनेर—इस चार पुरुषों के; **विलास-मूर्ति**—लीला स्वरूप; **आर**—और अधिक; **अष्ट जन**—आठ पुरुष; **ताँ सबार**—उन सभी के; **नाम**—पवित्र नाम; **कहि**—मैं बताऊँगा; **शुन**—सुनो; **सनातन**—हे सनातन।

अनुवाद

"वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध से आठ और विलास-रूप आते हैं। हे सनातन, मैं उनके नामों का उल्लेख करता हूँ। उन्हें सुनो।

पूरुषोत्तम, अच्युत, नृसिंह, जनार्दन ।
हरि, कृष्ण, अधोक्षज, उपेन्द्र,—अष्ट-जन ॥२०४॥

पुरुषोत्तम, अच्युत, नृसिंह, जनार्दन ।
हरि, कृष्ण, अधोक्षज, उपेन्द्र,—अष्ट-जन ॥२०४॥

पुरुषोत्तम—पुरुषोत्तम; **अच्युत**—अच्युत; **नृसिंह**—नृसिंह; **जनार्दन**—जनार्दन; **हरि**—हरि; **कृष्ण**—कृष्ण; **अधोक्षज**—अधोक्षज; **उपेन्द्र**—उपेन्द्र; **अष्ट-जन**—आठ पुरुष।

अनुवाद

"ये आठ विलास (लीला-विस्तार) हैं—पुरुषोत्तम, अच्युत, नृसिंह, जनार्दन, हरि, कृष्ण, अधोक्षज तथा उपेन्द्र।

वासुदेवेर विलास दुइ—अधोक्षज, पूरुषोत्तम ।
सङ्कर्षणेर विलास—उपेन्द्र, अच्युत दुइ-जन ॥२०५॥

वासुदेवेर विलास दुइ—अधोक्षज, पुरुषोत्तम ।
सङ्कर्षणेर विलास—उपेन्द्र, अच्युत दुइ-जन ॥२०५॥

वासुदेवेर विलास—वासुदेव के लीला विस्तार; **दुइ**—दो; **अधोक्षज**—अधोक्षज; **पुरुषोत्तम**—पुरुषोत्तम; **सङ्कर्षणेर विलास**—संकर्षण के लीला विस्तार; **उपेन्द्र**—उपेन्द्र; **अच्युत**—अच्युत; **दुइ-जन**—दो व्यक्ति।

अनुवाद

"इन आठ विस्तारों में से दो तो वासुदेव के विलास हैं। उनके नाम हैं अधोक्षज तथा पुरुषोत्तम। संकर्षण के दो विलास हैं उपेन्द्र तथा अच्युत।

प्रद्युम्नेर विलास—नृसिंह, जनार्दन ।
अनिरुद्धेर विलास—हरि, कृष्ण दुई-जन ॥२०६॥

प्रद्युम्नेर विलास—नृसिंह, जनार्दन ।
अनिरुद्धेर विलास—हरि, कृष्ण दुइ-जन ॥ २०६॥

प्रद्युम्नेर विलास—प्रद्युम्न के लीला स्वरूप; **नृसिंह**—नृसिंह; **जनार्दन**—जनार्दन; **अनिरुद्धेर विलास**—अनिरुद्ध के लीला स्वरूप; **हरि**—हरि; **कृष्ण**—कृष्ण; **दुइ-जन**—दोनों।

अनुवाद

"प्रद्युम्न के विलास (लीला-विस्तार) हैं नृसिंह तथा जनार्दन एवं अनिरुद्ध के विलास हैं हरि तथा कृष्ण।

एई चब्बिश मूर्ति—प्राभव-विलास प्रधान ।
अस्त्र-धारण-भेदे धरे भिन्न भिन्न नाम ॥२०७॥

एइ चब्बिश मूर्ति—प्राभव-विलास प्रधान ।
अस्त्र-धारण-भेदे धरे भिन्न भिन्न नाम ॥ २०७॥

एइ चब्बिश मूर्ति—इन चौबीस रूपों में से; **प्राभव-विलास**—प्राभव विस्तार के लीला स्वरूप; **प्रधान**—मुख्य; **अस्त्र-धारण**—अस्त्रों को धारण करने के; **भेदे**—भेद से; **धरे**—रखते हैं; **भिन्न भिन्न**—एक दूसरे से अलग; **नाम**—नाम।

अनुवाद

"ये चौबीसों रूप भगवान् के मुख्य प्राभव-विलास हैं। इनके नाम हाथों में धारण किये गये अस्त्रों की स्थिति के अनुसार भिन्न-भिन्न होते हैं।

ईँहार मध्ये याहार हय आकार-वेश-भेद ।
सेई सेई हय विलास-वैभव-विभेद ॥२०८॥

इँहार मध्ये ग्याहार हय आकार-वेश-भेद ।
सेइ सेइ हय विलास-वैभव-विभेद ॥ २०८॥

इँहार मध्ये—इन सबमें से; **ग्याहार**—जिसका; **हय**—होता है; **आकार**—शारीरिक रूपों का; **वेश**—वेश का; **भेद**—भेद; **सेइ सेइ हय**—वे हैं; **विलास-वैभव**—वैभव विलास के; **विभेद**—भेद।

अनुवाद

"इन समस्त रूपों में जो रूप वेश तथा आकार में भिन्न होते हैं, वे वैभव-विलास कहलाते हैं।

पद्मनाभ, त्रिविक्रम, नृसिंह, वामन ।
हरि, कृष्ण आदि हय 'आकारे' विलक्षण ॥२०९॥

पद्मनाभ, त्रिविक्रम, नृसिंह, वामन ।
हरि, कृष्ण आदि हय 'आकारे' विलक्षण ॥ २०९ ॥

पद्मनाभ—पद्मनाभ; **त्रिविक्रम**—त्रिविक्रम; **नृसिंह**—नृसिंह; **वामन**—वामन; **हरि**—हरि; **कृष्ण**—कृष्ण; **आदि**—इत्यादि; **हय**—हैं; **आकारे विलक्षण**—शारीरिक आकारों में भिन्न।

अनुवाद

"इनमें से पद्मनाभ, त्रिविक्रम, नृसिंह, वामन, हरि, कृष्ण इत्यादि के शारीरिक रूप भिन्न-भिन्न हैं।

कृष्णेर प्राभव-विलास——वासुदेवादि चारि जन ।
सेइ चारि-जनार विलास——विंशति गणन ॥२१०॥

कृष्णेर प्राभव-विलास——वासुदेवादि चारि जन ।
सेइ चारि-जनार विलास——विंशति गणन ॥ २१० ॥

कृष्णेर—भगवान् कृष्ण के; **प्राभव-विलास**—प्राभव लीला रूप; **वासुदेव-आदि**—वासुदेव तथा अन्य; **चारि जन**—चार विस्तार; **सेइ**—उन; **चारि-जनार**—चार पुरुषों के; **विलास**—लीला स्वरूप; **विंशति गणन**—२० गिने जाते हैं।

अनुवाद

"वासुदेव तथा अन्य तीन विस्तार भगवान् कृष्ण के प्रत्यक्ष प्राभव-विलास हैं। इन चतुर्व्यूह रूपों के बीस विलास विस्तार हैं।

ईंहा-सबार पृथक्कैकुण्ठ——परव्योम-धामे ।
पूर्वादि अष्ट-दिके तिन तिन क्रमे ॥२११॥

इँहा-सबार पृथक् वैकुण्ठ—परव्योम-धामे ।
पूर्वादि अष्ट-दिके तिन तिन क्रमे ॥ २११ ॥

इँहा—उनका; **सबार**—सभी का; **पृथक्**—अलग; **वैकुण्ठ**—एक वैकुण्ठ लोक; **परव्योम-धामे**—आध्यात्मिक जगत् में; **पूर्व-आदि**—पूर्व से प्रारम्भ होकर; **अष्ट-दिके**—आठ दिशाओं में; **तिन तिन**—प्रत्येक में तीन; **क्रमे**—क्रमपूर्वक।

अनुवाद

"ये सारे रूप आध्यात्मिक आकाश धाम में भिन्न-भिन्न वैकुण्ठ लोकों के अधिष्ठाता हैं, जो पूर्व दिशा से क्रमशः प्रारम्भ होते हैं। आठों दिशाओं में प्रत्येक में तीन भिन्न रूप होते हैं।

यद्यपि परव्योम सवाकार नित्य-धाम ।
तथापि ब्रह्माण्डे कारो काँहो सन्निधान ॥२१२॥

यद्यपि परव्योम सबाकार नित्य-धाम ।
तथापि ब्रह्माण्डे कारो काँहो सन्निधान ॥ २१२ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **परव्योम**—आध्यात्मिक आकाश; **सबाकार**—उन सभी का; **नित्य-धाम**—नित्य निवास है; **तथापि**—फिर भी; **ब्रह्माण्डे**—भौतिक ब्रह्माण्डों में; **कारो**—उनमें से कुछ का; **काँहो**—कहीं; **सन्निधान**—निवासस्थान।

अनुवाद

"यद्यपि इन सबका परव्योम में सनातन निवासस्थान है, किन्तु इनमें से कुछ भौतिक ब्रह्माण्डों में स्थित हैं।

परव्योम-मध्ये नारायणेर नित्य-स्थिति ।
परव्योम-उपरि कृष्णलोकेर विभूति ॥२१३॥

परव्योम-मध्ये नारायणेर नित्य-स्थिति ।
परव्योम-उपरि कृष्णलोकेर विभूति ॥ २१३ ॥

परव्योम-मध्ये—आध्यात्मिक आकाश में; **नारायणेर**—नारायण का; **नित्य-स्थिति**—नित्य निवास; **परव्योम-उपरि**—आध्यात्मिक आकाश के ऊपरी भाग में; **कृष्ण-लोकेर विभूति**—कृष्णलोक का ऐश्वर्य।

अनुवाद

"परव्योम में नारायण का नित्य निवासस्थान है। इस परव्योम के ऊपरी भाग में कृष्णलोक है, जो समस्त ऐश्वर्यों से परिपूर्ण है।

एक 'कृष्णलोक' हय त्रिविध-प्रकार ।
गोकुलाख्य, मथुराख्य, द्वारकाख्य आर ॥२१४॥
एक 'कृष्णलोक' हय त्रिविध-प्रकार ।
गोकुलाख्य, मथुराख्य, द्वारकाख्य आर ॥ २१४॥

एक—एक; **कृष्ण-लोक**—कृष्णलोक नामक स्थान; **हय**—है; **त्रि-विध-प्रकार**—तीन विभागों में विभक्त; **गोकुल-आख्य**—गोकुल; **मथुरा-आख्य**—मथुरा; **द्वारका-आख्य**—द्वारका; **आर**—तथा।

अनुवाद

"कृष्णलोक तीन विभागों में बँटा है—गोकुल, मथुरा तथा द्वारका।"

मथुरातें केशवेर नित्य सन्निधान ।
नीलाचले पुरुषोत्तम—'जगन्नाथ' नाम ॥२१५॥
मथुराते केशवेर नित्य सन्निधान ।
नीलाचले पुरुषोत्तम—'जगन्नाथ' नाम ॥ २१५॥

मथुराते—मथुरा में; **केशवेर**—भगवान् केशव का; **नित्य**—नित्य; **सन्निधान**—निवास; **नीलाचले**—नीलाचल (जगन्नाथ पुरी) में; **पुरुषोत्तम**—पुरुषोत्तम; **जगन्नाथ नाम**—जगन्नाथ नाम से भी प्रसिद्ध।

अनुवाद

"भगवान् केशव का नित्य निवास मथुरा में है और भगवान् पुरुषोत्तम, जो जगन्नाथ नाम से विख्यात हैं, नीलाचल में नित्य निवास करते हैं।

प्रयागे माधव, मन्दारे श्री-मधुसूदन ।
आनन्दारण्ये वासुदेव, पद्मनाभ जनार्दन ॥२१६॥

प्रयागे माधव, मन्दारे श्री-मधुसूदन ।
आनन्दारण्ये वासुदेव, पद्मनाभ जनार्दन ॥ २१६ ॥

प्रयागे—प्रयाग में; **माधव**—बिन्दु माधव; **मन्दारे**—मन्दार पर्वत पर; **श्री-मधुसूदन**—श्रीमधुसूदन; **आनन्द-अरण्ये**—आनन्दारण्य नामक स्थान पर; **वासुदेव**—भगवान् वासुदेव; **पद्मनाभ**—भगवान् पद्मनाभ; **जनार्दन**—भगवान् जनार्दन।

अनुवाद

प्रयाग में भगवान् बिन्दु माधव के रूप में स्थित हैं और मन्दार पर्वत में मधुसूदन रूप में। वासुदेव, पद्मनाभ तथा जनार्दन ये तीनों आनन्दारण्य में निवास करते हैं।

বিষ্ণু-কাঞ্চীতে বিষ্ণু, হরি রহে, মায়াপুরে ।
ঐছে আর নানা মূর্তি ব্রহ্মাণ্ড-ভিতরে ॥২১৭॥

विष्णु-काञ्चीते विष्णु, हरि रहे, मायापुरे ।
ऐछे आर नाना मूर्ति ब्रह्माण्ड-भितरे ॥ २१७ ॥

विष्णु-काञ्चीते—विष्णु कांची में; **विष्णु**—भगवान् विष्णु; **हरि**—भगवान् हरि; **रहे**—रहते हैं; **मायापुरे**—मायापुर में; **ऐछे**—इसी प्रकार; **आर**—और भी; **नाना**—अनेक; **मूर्ति**—रूप; **ब्रह्माण्ड-भितरे**—समस्त ब्रह्माण्ड में।

अनुवाद

"विष्णुकांची में भगवान् विष्णु हैं, मायापुर में भगवान् हरि हैं तथा सारे ब्रह्माण्ड में नाना प्रकार के अनेक रूप हैं।

तात्पर्य

ये सारे रूप *मूर्तिरूप* हैं और उनकी पूजा मन्दिरों में की जाती है। उनके नाम हैं—मथुरा में केशव, नीलाचल में पुरुषोत्तम या जगन्नाथ, प्रयाग में बिन्दु माधव, मन्दार में मधुसूदन तथा दक्षिण भारत में केरल स्थित आनन्दारण्य में वासुदेव, पद्मनाभ तथा जनार्दन। विष्णुकांची में, भगवान् वरदराज हैं और श्री चैतन्य महाप्रभु की जन्मभूमि मायापुर में हरि स्थित हैं। इस तरह पूरे ब्रह्माण्ड में अनेक स्थलों में मन्दिरों में विविध अर्चाविग्रह हैं, जो भक्तों पर अहैतुकी कृपा करते हैं। ये सारे अर्चाविग्रह वैकुण्ठ लोक के मूर्ति-रूपों से अभिन्न हैं। यद्यपि *अर्चामूर्ति* अर्थात् भगवान् का पूजनीय अर्चाविग्रह भौतिक तत्त्वों की बना

हुआ दिखता है, किन्तु यह दिव्य वैकुण्ठ लोकों के आध्यात्मिक रूपों के ही समकक्ष है। फिर भी मन्दिर में अर्चाविग्रह भक्त को प्रत्यक्ष दिखता है। भौतिक बद्धावस्था में भगवान् का आध्यात्मिक रूप देख पाना सम्भव नहीं है। इसलिए भगवान् हम सब पर अहैतुकी कृपा करने के लिए ही *अर्चामूर्ति* रूप में प्रकट होते हैं, जिससे हम उनका दर्शन कर सकें। अर्चामूर्ति को पत्थर या काठ की बनी समझना वर्जित है। *पद्म-पुराण* में कहा गया है :

अर्च्ये विष्णौ शिलाधीर्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवेजातिबुद्धि :
र्विष्णोर्वा वैष्णवानां कलिमलमथने पादतीर्थेऽम्बुबुद्धिः।
श्रीविष्णोर्नाम्नि मन्त्रे सकल-कलुषहे शब्दसामान्यबुद्धि
र्विष्णौ सर्वेश्वरेशे तदितर समधीर्यस्य वा नारकी सः॥

"मन्दिर के अर्चाविग्रह को पत्थर या काठ का बना हुआ नहीं मानना चाहिए, न ही गुरु को सामान्य मनुष्य मानना चाहिए। वैष्णव को किसी विशेष जाति या नस्ल का नहीं मानना चाहिए और चरणामृत या गंगाजल को सामान्य जल नहीं मानना चाहिए। हरे कृष्ण महामन्त्र को भौतिक ध्वनि नहीं मानना चाहिए। भौतिक जगत् में कृष्ण के ये सारे विस्तार भगवान् की कृपा तथा इस भौतिक जगत् में भक्ति में लगे अपने भक्तों को सुविधा देने की इच्छा को प्रदर्शित करने वाले हैं।

एइ-मत ब्रह्माण्ड-मध्ये सबार 'परकाश'।
सप्त-द्वीपे नव-खण्डे याँहार विलास ॥२१८॥

एइ-मत ब्रह्माण्ड-मध्ये सबार 'परकाश'।
सप्त-द्वीपे नव-खण्डे याँहार विलास ॥ २१८ ॥

एइ-मत—इस प्रकार; **ब्रह्माण्ड-मध्ये**—ब्रह्माण्ड में; **सबार**—उन सब का; **परकाश**—आविर्भाव; **सप्त-द्वीपे**—सात द्वीपों पर; **नव-खण्डे**—नौं खंडों में; **याँहार विलास**—जिनकी लीलाएँ।

अनुवाद

"इस ब्रह्माण्ड के भीतर भगवान् विभिन्न आध्यात्मिक स्वरूपों में स्थित हैं। ये सात द्वीपों के नव खण्डों में विद्यमान हैं। इस तरह उनकी लीलाएँ चलती रहती हैं।

तात्पर्य

सिद्धान्त शिरोमणि में सात द्वीपों का उल्लेख हुआ है :

भूमेरर्धं क्षीरसिन्धोरुदकस्थं
जम्बुद्वीपं प्राहुराचार्यवर्याः ।
अर्धेऽन्यस्मिन् द्वीपषटकस्य याम्ये
क्षारक्षीराद्यम्बुधीनां निवेशः ॥
शाकं ततः शाल्मलमत्र कौशं
क्रौञ्चं च गोमेदकपुष्करे च ।
द्वयोर्द्वयोरन्तरमेकमेकं
समुद्रयोर्द्वीपमुदाहरन्ति ॥

सात द्वीप हैं (१) जम्बु, (२) शाक, (३) शाल्मली, (४) कुश, (५) क्रौञ्च, (६) गोमेद या प्लक्ष तथा (७) पुष्कर। ग्रहों (लोकों) को *द्वीप* कहा जाता है। बाह्य आकाश (अन्तरिक्ष) वायु के सागर जैसा है। जिस तरह जलयुक्त सागर में द्वीप होते हैं, उसी तरह ये ग्रह (लोक) आकाश तत्त्व के बने सागर में स्थित *द्वीप* कहलाते हैं। नौ *खण्डों* के नाम हैं (१) भारत, (२) किन्नर, (३) हरि, (४) कुरु, (५) हिरण्मय, (६) रम्यक, (७) इलावृत, (८) भद्राश्व तथा (९) केतुमाल। ये सब जम्बु द्वीप के विभिन्न भाग हैं। दो पर्वतों के बीच की घाटी *खण्ड* या *वर्ष* कहलाती है।

সর্বত্র প্রকাশ তাঁর——ভক্তে সুখ দিতে ।
জগতের অধর্ম নাশি' ধর্ম স্থাপিতে ॥২১৯॥

सर्वत्र प्रकाश ताँर——भक्ते सुख दिते ।
जगतेर अधर्म नाशि' धर्म स्थापिते ॥ २१९ ॥

सर्वत्र—सब जगह; **प्रकाश**—अभिव्यक्ति; **ताँर**—उनकी; **भक्ते**—भक्तों को; **सुख दिते**—आनन्द देने के लिए; **जगतेर**—भौतिक जगत् के; **अधर्म**—अधर्म कार्यों का; **नाशि'**—नाश करने के लिए; **धर्म**—धर्म के सिद्धान्तो की; **स्थापिते**—स्थापना करने के लिए।

अनुवाद

"भगवान् अपने भक्तों को प्रसन्न करने के लिए ही सारे ब्रह्माण्डों में

विभिन्न रूपों में स्थित हैं। इस तरह भगवान् अधर्म का विनाश करते हैं और धर्म की स्थापना करते हैं।

तात्पर्य

भौतिक जगत् में भगवान् बद्धजीवों के भौतिक कार्यकलापों को घटाने तथा उनकी आध्यात्मिक गतिविधियों को बढ़ाने के लिए मन्दिरों में विभिन्न *अर्चामूर्तियों* के रूप में स्थित हैं। विशेषतया भारत-भर में अनेक मन्दिर हैं। भक्त इनका लाभ उठा सकते हैं और जगन्नाथपुरी, वृन्दावन, प्रयाग, मथुरा, हरिद्वार तथा विष्णुकांची जाकर भगवान् का दर्शन कर सकते हैं। जब भक्तगण इन स्थानों में जाकर भगवान् का दर्शन करते हैं, तो वे भक्ति में अत्यन्त सुखी होते हैं।

ইঁহার মধ্যে কারো হয় 'অবতারে' গণন ।
যৈছে বিষ্ণু, ত্রিবিক্রম, নৃসিংহ, বামন ॥২২০॥

ইঁহার মধ্যে কারো হয় 'অবতারে' গণন ।
য়ৈছে বিষ্ণু, ত্রিবিক্রম, নৃসিংহ, বামন ॥ ২২০॥

ইঁহার মধ্যে—उनमें से; **कारो**—कुछ की; **हय**—होती है; **अवतारे**—अवतार रूप में; **गणन**—गिनती; **य़ैछे**—जैसे; **विष्णु**—भगवान् विष्णु; **त्रिविक्रम**—भगवान् त्रिविक्रम; **नृसिंह**—भगवान् नृसिंह; **वामन**—भगवान् वामन।

अनुवाद

"इन रूपों में से कुछ को अवतार माना जाता है। उदाहरणार्थ भगवान् विष्णु, भगवान् त्रिविक्रम, भगवान् नृसिंह तथा भगवान् वामन।

অস্ত্র-ধৃতি-ভেদ——নাম-ভেদের কারণ ।
চক্রাদি-ধারণ-ভেদ শুন, সনাতন ॥২২১॥

অস্ত্র-ধৃতি-ভেদ——নাম-ভেদের কারণ ।
চক্রাদি-ধারণ-ভেদ শুন, সনাতন ॥ ২২১॥

अस्त्र-धृति—अस्त्रों को धारण करने से; **भेद**—भिन्नता; **नाम-भेदेर**—विभिन्न नामों के; **कारण**—कारण; **चक्र-आदि**—चक्र आदि अस्त्र; **धारण**—धारण करने से; **भेद**—भिन्नता; **शुन**—कृपया सुनो; **सनातन**—हे सनातन।

अनुवाद

"हे सनातन, अब मुझसे सुनो कि किस तरह विभिन्न विष्णु-मूर्तियाँ अपने-अपने अस्त्र यथा चक्र इत्यादि धारण करती हैं, एवं किस तरह अपने हाथों में धारण किए गये अस्त्रों के अनुसार उनके नाम पड़ते हैं।

दक्षिणाधो हस्त हैते वामाधः पर्यन्त ।
चक्रादि अस्त्र-धारण-गणनार अन्त ॥२२२॥

दक्षिणाधो हस्त हैते वामाधः पर्य्यन्त ।
चक्रादि अस्त्र-धारण-गणनार अन्त ॥ २२२ ॥

दक्षिण-अधः—नीचे के दाहिने; **हस्त**—हाथ; **हैते**—से; **वाम-अधः**—नीचे के बायें हाथ; **पर्य्यन्त**—तक; **चक्र-आदि**—चक्र आदि; **अस्त्र-धारण**—अस्त्र धारण किये; **गणनार**—गिनती; **अन्त**—समाप्त।

अनुवाद

"गणना करने की विधि यह है कि निचले दायें हाथ से प्रारम्भ करके क्रमशः ऊपरी दाहिने हाथ, ऊपरी बाएँ हाथ तथा निचले बाएँ हाथ तक बढ़ें। भगवान् विष्णु का नाम उनके हाथों में धारण किये गये अस्त्रों के क्रम के अनुसार होता है।

सिद्धार्थ-संहिता करे चब्बिश मूर्ति गणन ।
तार मते कहि आगे चक्रादि-धारण ॥२२३॥

सिद्धार्थ-संहिता करे चब्बिश मूर्ति गणन ।
तार मते कहि आगे चक्रादि-धारण ॥ २२३ ॥

सिद्धार्थ-संहिता—*सिद्धार्थ संहिता* नामक शास्त्र; **करे**—करता है; **चब्बिश**—चौबीस; **मूर्ति**—रूपों की; **गणन**—गिनती; **तार मते**—*सिद्धार्थ संहिता* के विचारानुसार; **कहि**—मैं वर्णन करूँगा; **आगे**—पहले; **चक्र-आदि-धारण**—चक्र धारण करने से प्रारम्भ।

अनुवाद

"सिद्धार्थ-संहिता के अनुसार भगवान् विष्णु के चौबीस रूप हैं। सर्वप्रथम मैं उसी ग्रन्थ के अनुसार चक्र से आरम्भ करके उन अस्त्रों की स्थिति का वर्णन करूँगा।

तात्पर्य

चौबीस रूप हैं (१) वासुदेव, (२) संकर्षण, (३) प्रद्युम्न, (४) अनिरुद्ध, (५) केशव, (६) नारायण, (७) माधव, (८) गोविन्द, (९) विष्णु, (१०) मधुसूदन, (११) त्रिविक्रम, (१२) वामन, (१३) श्रीधर, (१४) हृषीकेश, (१५) पद्मनाभ, (१६) दामोदर, (१७) पुरुषोत्तम, (१८) अच्युत, (१९) नृसिंह, (२०) जनार्दन, (२१) हरि, (२२) कृष्ण, (२३) अधोक्षज तथा (२४) उपेन्द्र।

वासुदेव—गदा-शङ्ख-चक्र-पद्म-धर ।
सङ्कर्षण—गदा-शङ्ख-पद्म-चक्र-कर ॥२२४॥

वासुदेव—गदा-शङ्ख-चक्र-पद्म-धर ।
सङ्कर्षण—गदा-शङ्ख-पद्म-चक्र-कर ॥ २२४॥

वासुदेव—वासुदेव; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **चक्र**—चक्र; **पद्म**—कमल पुष्प; **धर**—धारण करते हैं; **सङ्कर्षण**—संकर्षण; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **पद्म**—कमल पुष्प; **चक्र-कर**—हाथ में चक्र।

अनुवाद

"भगवान् वासुदेव अपने निचले दाहिने हाथ में गदा, ऊपरी दाएँ हाथ में शङ्ख, ऊपरी बाएँ हाथ में चक्र तथा निचले बाएँ हाथ में कमल का फूल धारण करते हैं। संकर्षण अपने निचले दाहिने हाथ में गदा, ऊपरी दाएँ हाथ में शंख, ऊपरी बाएँ हाथ में कमल का फूल तथा निचले बाएँ हाथ में चक्र धारण करते हैं।

प्रद्युम्न—चक्र-शङ्ख-गदा-पद्म-धर ।
अनिरुद्ध—चक्र-गदा-शङ्ख-पद्म-कर ॥२२५॥

प्रद्युम्न—चक्र-शङ्ख-गदा-पद्म-धर ।
अनिरुद्ध—चक्र-गदा-शङ्ख-पद्म-कर ॥ २२५॥

प्रद्युम्न—भगवान् प्रद्युम्न; **चक्र**—चक्र; **शङ्ख**—शंख; **गदा**—गदा; **पद्म**—कमल पुष्प; **धर**—धारण करते हैं; **अनिरुद्ध**—भगवान् अनिरुद्ध; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **पद्म-कर**—हाथों में कमल पुष्प।

अनुवाद

"प्रद्युम्न चक्र, शंख, गदा तथा कमल धारण करते हैं और अनिरुद्ध चक्र, गदा, शंख तथा कमल धारण करते हैं।

परव्योमे वासुदेवादि——निज निज अस्त्र-धर ।
ताँर मत कहि, ये-सब अस्त्र-कर ॥ २२६॥

परव्योमे वासुदेवादि——निज निज अस्त्र-धर ।
ताँर मत कहि, ये-सब अस्त्र-कर ॥ २२६॥

पर-व्योमे—आध्यात्मिक आकाश में; **वासुदेव-आदि**—भगवान् वासुदेव आदि; **निज निज**—अपने-अपने; **अस्त्र-धर**—विभिन्न अस्त्र धारण करते हैं; **ताँर मत कहि**—मैं *सिद्धार्थ संहिता* का विचार कह रहा हूँ; **ये-सब**—जो सभी; **अस्त्र-कर**—भिन्न हाथों में अस्त्र।

अनुवाद

"परव्योम में वासुदेव आदि अंश अपने-अपने क्रम से अस्त्रों को धारण करते हैं। उनका वर्णन करने के लिए मैं सिद्धार्थ-संहिता के मत को दुहरा रहा हूँ।

श्री-केशव——पद्म-शङ्ख-चक्र-गदा-धर ।
नारायण——शङ्ख-पद्म-गदा-चक्र-धर ॥ २२७॥

श्री-केशव——पद्म-शङ्ख-चक्र-गदा-धर ।
नारायण——शङ्ख-पद्म-गदा-चक्र-धर ॥ २२७॥

श्री-केशव—भगवान् केशव; **पद्म**—कमल; **शङ्ख**—शंख; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **धर**—धारण करते हैं; **नारायण**—भगवान् नारायण; **शङ्ख**—शंख; **पद्म**—कमल; **गदा**—गदा; **चक्र**—चक्र; **धर**—धारण करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् केशव पद्म, शंख, चक्र तथा गदा धारण करते हैं। भगवान् नारायण शंख, पद्म, गदा तथा चक्र धारण करते हैं।

श्री-माधव——गदा-चक्र-शङ्ख-पद्म-कर ।
श्री-गोविन्द——चक्र-गदा-पद्म-शङ्ख-धर ॥ २२८॥

श्री-माधव——गदा-चक्र-शङ्ख-पद्म-कर ।
श्री-गोविन्द——चक्र-गदा-पद्म-शङ्ख-धर ॥ २२८ ॥

श्री-माधव—श्री माधव; **गदा**—गदा; **चक्र**—चक्र; **शङ्ख**—शंख; **पद्म**—कमल; **कर**—हाथों में; **श्री-गोविन्द**—भगवान् गोविन्द; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **पद्म**—कमल; **शङ्ख**—शंख; **धर**—धारण करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् माधव अपने हाथों में गदा, चक्र, शंख तथा कमल धारण करते हैं। भगवान् गोविन्द चक्र, गदा, पद्म तथा शंख धारण करते हैं।

विष्णु-मूर्ति——गदा-पद्म-शङ्ख-चक्र-कर ।
मधुसूदन——चक्र-शङ्ख-पद्म-गदा-धर ॥ २२९ ॥
विष्णु-मूर्ति——गदा-पद्म-शङ्ख-चक्र-कर ।
मधुसूदन——चक्र-शङ्ख-पद्म-गदा-धर ॥ २२९ ॥

विष्णु-मूर्ति—भगवान् विष्णु; **गदा**—गदा; **पद्म**—कमल; **शङ्ख**—शंख; **चक्र**—चक्र; **कर**—हाथों में; **मधुसूदन**—भगवान् मधुसूदन; **चक्र**—चक्र; **शङ्ख**—शंख; **पद्म**—कमल; **गदा**—गदा; **धर**—धारण करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् विष्णु अपने हाथों में गदा, पद्म, शंख तथा चक्र लिये रहते हैं। भगवान् मधुसूदन चक्र, शंख, पद्म तथा गदा धारण करते हैं।

त्रिविक्रम——पद्म-गदा-चक्र-शङ्ख-कर ।
श्री-वामन——शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म-धर ॥ २३० ॥
त्रिविक्रम——पद्म-गदा-चक्र-शङ्ख-कर ।
श्री-वामन——शङ्ख-चक्र-गदा-पद्म-धर ॥ २३० ॥

त्रिविक्रम—भगवान् त्रिविक्रम; **पद्म**—कमल; **गदा**—गदा; **चक्र**—चक्र; **शङ्ख**—शंख; **कर**—हाथों में; **श्री-वामन**—भगवान् वामन; **शङ्ख**—शंख; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **पद्म**—कमल; **धर**—धारण करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् त्रिविक्रम अपने हाथों में कमल, गदा, चक्र तथा शंख

लिये रहते हैं। भगवान् वामन शंख, चक्र, गदा तथा कमल धारण करते हैं।

श्रीधर——पद्म-चक्र-गदा-शङ्ख-कर ।
हृषीकेश——गदा-चक्र-पद्म-शङ्ख-धर ॥२३१॥
श्रीधर——पद्म-चक्र-गदा-शङ्ख-कर ।
हृषीकेश——गदा-चक्र-पद्म-शङ्ख-धर ॥ २३१ ॥

श्रीधर—भगवान् श्रीधर; **पद्म**—कमल; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **कर**—हाथों में; **हृषीकेश**—भगवान् हृषिकेश; **गदा**—गदा; **चक्र**—चक्र; **पद्म**—कमल; **शङ्ख**—शंख; **धर**—धारण करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् श्रीधर के हाथों में कमल, चक्र, गदा तथा शंख रहते हैं। भगवान् हृषीकेश अपने हाथों में गदा, चक्र, कमल तथा शंख धारण करते हैं।

पद्मनाभ——शङ्ख-पद्म-चक्र-गदा-कर ।
दामोदर——पद्म-चक्र-गदा-शङ्ख-धर ॥२३२॥
पद्मनाभ——शङ्ख-पद्म-चक्र-गदा-कर ।
दामोदर——पद्म-चक्र-गदा-शङ्ख-धर ॥ २३२ ॥

पद्मनाभ—भगवान् पद्मनाभ; **शङ्ख**—शंख; **पद्म**—कमल; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **कर**—हाथों में; **दामोदर**—भगवान् दामोदर; **पद्म**—कमल; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **धर**—धारण करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् पद्मनाभ शंख, कमल, चक्र तथा गदा लिये रहते हैं। भगवान् दामोदर कमल, चक्र, गदा तथा शंख धारण करते हैं।

पुरुषोत्तम——चक्र-पद्म-शङ्ख-गदा-धर ।
श्री-अच्युत——गदा-पद्म-चक्र-शङ्ख-धर ॥२३३॥

पुरुषोत्तम—चक्र-पद्म-शङ्ख-गदा-धर ।
श्री-अच्युत—गदा-पद्म-चक्र-शङ्ख-धर ॥ २३३ ॥

पुरुषोत्तम—भगवान् पुरुषोत्तम; **चक्र**—चक्र; **पद्म**—कमल; **शङ्ख**—शंख; **गदा**—गदा; **धर**—धारण करते हैं; **श्री-अच्युत**—भगवान् अच्युत; **गदा**—गदा; **पद्म**—कमल; **चक्र**—चक्र; **शङ्ख**—शंख; **धर**—धारण करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् पुरुषोत्तम चक्र, पद्म, शंख तथा गदा धारण करते हैं। भगवान् अच्युत गदा, कमल, चक्र तथा शंख धारण करते हैं।

শ্রী-নৃসিংহ—চক্র-পদ্ম-গদা-শঙ্খ-ধর ।
জনার্দন—পদ্ম-চক্র-শঙ্খ-গদা-কর ॥ ২৩৪ ॥

श्री-नृसिंह—चक्र-पद्म-गदा-शङ्ख-धर ।
जनार्दन—पद्म-चक्र-शङ्ख-गदा-कर ॥ २३४ ॥

श्री-नृसिंह—भगवान् नृसिंह; **चक्र**—चक्र; **पद्म**—कमल; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **धर**—धारण करते हैं; **जनार्दन**—भगवान् जनार्दन; **पद्म**—कमल; **चक्र**—चक्र; **शङ्ख**—शंख; **गदा**—गदा; **कर**—हाथों में।

अनुवाद

"भगवान् नृसिंह चक्र, पद्म, गदा तथा शंख धारण करते हैं। भगवान् जनार्दन अपने हाथों में कमल, चक्र, शंख तथा गदा लिये रहते हैं।

শ্রী-হরি—শঙ্খ-চক্র-পদ্ম-গদা-কর ।
শ্রী-কৃষ্ণ—শঙ্খ-গদা-পদ্ম-চক্র-কর ॥ ২৩৫ ॥

श्री-हरि—शङ्ख-चक्र-पद्म-गदा-कर ।
श्री-कृष्ण—शङ्ख-गदा-पद्म-चक्र-कर ॥ २३५ ॥

श्री-हरि—भगवान् हरि; **शङ्ख**—शंख; **चक्र**—चक्र; **पद्म**—कमल; **गदा**—गदा; **कर**—हाथों में; **श्री-कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **शङ्ख**—शंख; **गदा**—गदा; **पद्म**—कमल; **चक्र**—चक्र; **कर**—हाथों में।

अनुवाद

"श्री हरि अपने हाथों में शंख, चक्र, पद्म तथा गदा लिये रहते हैं।

भगवान् श्रीकृष्ण अपने हाथों में शंख, गदा, कमल तथा चक्र धारण करते हैं।

অধোক্ষজ——পদ্ম-গদা-শঙ্খ-চক্র-কর ।
উপেন্দ্র——শঙ্খ-গদা-চক্র-পদ্ম-কর ॥২৩৬॥

অধোক্ষজ——পদ্ম-গদা-শঙ্খ-চক্র-কর ।
উপেন্দ্র——শঙ্খ-গদা-চক্র-পদ্ম-কর ॥২৩৬॥

अधोक्षज—भगवान् अधोक्षज; **पद्म**—कमल; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **चक्र**—चक्र; **कर**—हाथों में; **उपेन्द्र**—भगवान् उपेन्द्र; **शङ्ख**—शंख; **गदा**—गदा; **चक्र**—चक्र; **पद्म**—कमल; **कर**—हाथों में।

अनुवाद

"भगवान् अधोक्षज अपने हाथों में कमल, गदा, शंख तथा चक्र लिये रहते हैं। भगवान् उपेन्द्र अपने हाथों में शंख, गदा, चक्र तथा कमल धारण करते हैं।

হয়শীর্ষ-পঞ্চরাত্রে কহে ষোল-জন ।
তার মতে কহি এবে চক্রাদি-ধারণ ॥২৩৭॥

হয়শীর্ষ-পঞ্চরাত্রে কহে ষোল-জন ।
তার মতে কহি এবে চক্রাদি-ধারণ ॥২৩৭॥

हयशीर्ष-पञ्चरात्रे—*हयशीर्ष पंचरात्र* नामक वैदिक ग्रन्थ; **कहे**—वर्णन करता है; **षोल-जन**—सोलह पुरुषों का; **तार मते**—इस विचार के अनुसार; **कहि**—मैं बताऊँगा; **एबे**—अब; **चक्र-आदि-धारण**—चक्र आदि अस्त्रों का धारण करना।

अनुवाद

"हयशीर्ष पंचरात्र के अनुसार सोलह पुरुष हैं। मैं अब उस मत का वर्णन करूँगा कि वे किस तरह अस्त्रों को धारण किये रहते हैं।

तात्पर्य

सोलह पुरुष इस प्रकार हैं—(१) वासुदेव, (२) संकर्षण, (३) प्रद्युम्न, (४) अनिरुद्ध, (५) केशव, (६) नारायण, (७) माधव, (८) गोविन्द,

(९) विष्णु, (१०) मधुसूदन, (११) त्रिविक्रम, (१२) वामन, (१३) श्रीधर, (१४) हृषीकेश, (१५) पद्मनाभ तथा (१६) दामोदर।

কেশব-ভেদে পদ্ম-শঙ্খ-গদা-চক্র-ধর ।
মাধব-ভেদে চক্র-গদা-শঙ্খ-পদ্ম-কর ॥২৩৮॥

केशव-भेदे पद्म-शङ्ख-गदा-चक्र-धर ।
माधव-भेदे चक्र-गदा-शङ्ख-पद्म-कर ॥ २३८ ॥

केशव-भेदे—भगवान् केशव के बारे में विभिन्न मतों के अनुसार; **पद्म**—कमल; **शङ्ख**—शंख; **गदा**—गदा; **चक्र**—तथा चक्र; **धर**—धारण करते हैं; **माधव-भेदे**—भगवान् माधव के शारीरिक लक्षणों के विषय में विभिन्न मतों के अनुसार; **चक्र**—चक्र; **गदा**—गदा; **शङ्ख**—शंख; **पद्म**—कमल; **कर**—हाथों में।

अनुवाद

"केशव को कमल, शंख, गदा तथा चक्र धारण किये भिन्न बतलाया जाता है और माधव को हाथों में चक्र, गदा, शंख तथा कमल धारण करने वाले अस्त्रों के अनुसार प्रस्तुत किया जाता है।

নারায়ণ-ভেদে নানা অস্ত্র-ভেদ-ধর ।
ইত্যাদিক ভেদ এই সব অস্ত্র-কর ॥২৩৯॥

नारायण-भेदे नाना अस्त्र-भेद-धर ।
इत्यादिक भेद एइ सब अस्त्र-कर ॥ २३९ ॥

नारायण-भेदे—भगवान् नारायण की शारीरिक भंगिमाओं के बारे में विभिन्न मतों के अनुसार; **नाना**—विभिन्न; **अस्त्र**—अस्त्रों के; **भेद-धर**—धारण करने के भेद; **इति-आदिक**—इस प्रकार; **भेद**—भिन्न; **एइ सब**—ये सभी; **अस्त्र-कर**—हाथों में अस्त्र।

अनुवाद

"हयशीर्ष पंचरात्र के अनुसार नारायण तथा अन्यों को भी विभिन्न हाथों में धारण करने वाले अस्त्रों के अनुसार प्रस्तुत किया जाता है।

'স্বয়ং ভগবান্', আর 'লীলা-পুরুষোত্তম' ।
এই দুই নাম ধরে ব্রজেন্দ্র-নন্দন ॥২৪০॥

'स्वयं भगवान्', आर 'लीला-पुरुषोत्तम' ।
एइ दुइ नाम धरे व्रजेन्द्र-नन्दन ॥ २४० ॥

स्वयम् भगवान्—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **आर**—तथा; **लीला-पुरुषोत्तम**—लीला-पुरुषोत्तम भगवान्; **एइ दुइ**—ये दोनों; **नाम**—नाम; **धरे**—रखते हैं; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—नन्द महाराज के पुत्र, कृष्ण।

अनुवाद

"आदि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण, जो महाराज नन्द के पुत्र हैं, उनके दो नाम हैं। एक है स्वयं भगवान् तथा दूसरा है लीला पुरुषोत्तम।

পুরীর আবরণ-রূপে পুরীর নব-দেশে ।
নব-ব্যূহ-রূপে নব-মূর্তি পরকাশে ॥২৪১॥

पुरीर आवरण-रूपे पुरीर नव-देशे ।
नव-व्यूह-रूपे नव-मूर्ति परकाशे ॥ २४१ ॥

पुरीर—द्वारकापुरी के; **आवरण-रूपे**—चारों दिशाओं के लिए आवरण की तरह; **पुरीर नव-देशे**—शहर के नौ भिन्न भागों में; **नव-व्यूह-रूपे**—नौ विग्रहों के रूप में; **नव-मूर्ति**—नौ रूप; **परकाशे**—प्रकाशित करते हैं।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण द्वारका पुरी को उसके रक्षक के रूप में घेरे रहते हैं। वे पुरी के नौ विभिन्न स्थानों में नौ भिन्न-भिन्न रूपों में अपना विस्तार करते हैं।

চত্বারো বাসুদেবাদ্যা নারায়ণ-নৃসিংহকৌ ।
হয়গ্রীবো মহাক্রোড়ো ব্রহ্মা চেতি নবোদিতাঃ ॥২৪২॥

चत्वारो वासुदेवाद्या नारायण-नृसिंहकौ ।
हयग्रीवो महाक्रोड़ो ब्रह्मा चेति नवोदिताः ॥ २४२ ॥

चत्वारः—चार मुख्य रक्षक; **वासुदेव-आद्याः**—वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध; **नारायण**—भगवान् नारायण सहित; **नृसिंहकौ**—तथा भगवान् नृसिंह; **हयग्रीवः**—भगवान् हयग्रीव; **महाक्रोड़ः**—भगवान् वराह; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी; **च**—तथा; **इति**—इस प्रकार; **नव-उदिताः**—नौ पुरुष।

अनुवाद

"'जिन नौ पुरुषों का उल्लेख हुआ है वे हैं—वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, नारायण, नृसिंह, हयग्रीव, वराह तथा ब्रह्मा।'

तात्पर्य

यह श्लोक *लघु भागवतामृत* (१.४५१) में पाया जाता है। यहाँ पर उल्लिखित ब्रह्मा जीव नहीं हैं। कभी-कभी जब ब्रह्मा का पद ग्रहण करने के लिए जीवों का अभाव हो जाता है, तब महाविष्णु स्वयं ब्रह्मा के रूप में विस्तार करते हैं। इस ब्रह्मा को जीव नहीं माने जाते। वे विष्णु के अंश होते हैं।

प्रकाश-विलासेर एइ कैलुँ विवरण ।
स्वांशेर भेद एबे शुन, सनातन ॥२४३॥

प्रकाश-विलासेर—लीलारूपों तथा अभिव्यक्तियों का; **एइ**—यह; **कैलुँ**—मैंने किया है; **विवरण**—वर्णन; **स्वांशेर**—निजी अंश विस्तारों के; **भेद**—भेद; **एबे**—अब; **शुन**—कृपया सुनो; **सनातन**—हे सनातन गोस्वामी।

अनुवाद

"मैं विलासों तथा प्रकाशों का वर्णन कर चुका हूँ। अब मुझसे विभिन्न स्वांशों के विषय में सुनो।

सङ्कर्षण, मत्स्यादिक,—दुइ भेद ताँर ।
सङ्कर्षण—पुरुषावतार, लीलावतार आर ॥२४४॥

सङ्कर्षण—संकर्षण; **मत्स्य-आदिक**—मत्स्य आदि अवतार; **दुइ**—दो; **भेद**—भेद हैं; **ताँर**—उनके; **सङ्कर्षण**—संकर्षण; **पुरुष-अवतार**—विष्णु के अवतार हैं; **लीला-अवतार**—लीला अवतार; **आर**—दूसरा।

अनुवाद

"प्रथम स्वांश (व्यक्तिगत विस्तार) संकर्षण हैं और अन्य सभी

अवतार हैं, मत्स्य इत्यादि। संकर्षण पुरुष अथवा विष्णु के विस्तार हैं। मत्स्य जैसे अवतार विभिन्न युगों में विशिष्ट लीलाओं के लिए प्रकट होते हैं।

तात्पर्य

पुरुष अवतार सृष्टि के स्वामी होते हैं। ये हैं—कारणोदकशायी विष्णु, गर्भोदकशायी विष्णु तथा क्षीरोदकशायी विष्णु। कुछ *लीलावतार* भी हैं जिनमें ये सब सम्मिलित हैं : (१) चतु:सन—अर्थात् चारों कुमार, (२) नारद, (३) वराह, (४) मत्स्य, (५) यज्ञ, (६) नर-नारायण, (७) कार्दमि कपिल, (८) दत्तात्रेय, (९) हयशीर्ष, (१०) हंस, (११) ध्रुवप्रिय या पृश्निगर्भ, (१२) ऋषभ, (१३) पृथु, (१४) नृसिंह, (१५) कूर्म, (१६) धन्वन्तरि, (१७) मोहिनी, (१८) वामन, (१९) भार्गव परशुराम, (२०) राघवेन्द्र, (२१) व्यास, (२२) प्रलम्बारि बलराम, (२३) कृष्ण, (२४) बुद्ध तथा (२५) कल्कि।

ये २५ पुरुष *लीलावतार* कहलाते हैं। चूँकि ये ब्रह्मा के प्रत्येक दिन या प्रत्येक *कल्प* में प्रकट होते हैं, इसलिए कभी-कभी इन्हें *कल्पावतार* भी कहा जाता है। इन अवतारों में से हंस तथा मोहिनी अत्यधिक स्थायी या विख्यात नहीं हैं, किन्तु वे *प्राभव-अवतारों* में गिने जाते हैं। कपिल, दत्तात्रेय, ऋषभ, धन्वन्तरि तथा व्यास नित्य विद्यमान हैं और अत्यधिक प्रसिद्ध हैं। इनकी गणना प्राभव-अवतारों में भी की जाती है। कूर्म, मत्स्य, नारायण, वराह, हयग्रीव, पृश्निगर्भ तथा प्रलम्बासुर का वध करने वाले बलराम *वैभव-अवतारों* में गिने जाते हैं।

अवतार हय कृष्णेर षड़्-विध प्रकार ।
पुरुषावतार एक, लीलावतार आर ॥ २४५ ॥

अवतार हय कृष्णेर षड्-विध प्रकार ।
पुरुषावतार एक, लीलावतार आर ॥ २४५ ॥

अवतार—अवतार; **हय**—हैं; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **षट्-विध प्रकार**—छः प्रकार के; **पुरुष-अवतार**—विष्णु के अवतार; **एक**—एक; **लीला-अवतार**—लीला करने वाले अवतार; **आर**—दूसरे।

अनुवाद

"कृष्ण के छह तरह के अवतार होते हैं। एक तो विष्णु के अवतार (पुरुषावतार) हैं और दूसरे अवतार विभिन्न लीलाओं को सम्पन्न करने के लिए (लीलावतार) हैं।

गुणावतार, आर मन्वन्तरावतार ।
युगावतार, आर शक्त्यावेशावतार ॥ २४६॥

गुणावतार, आर मन्वन्तरावतार ।
युगावतार, आर शक्त्यावेशावतार ॥ २४६ ॥

गुण-अवतार—भौतिक गुणों को नियन्त्रित करने वाले अवतार; **आर**—तथा; **मनु-अन्तर-अवतार**—प्रत्येक मनु के राज में प्रकट होने वाले अवतार; **युग-अवतार**—विभिन्न युगों के अनुसार अवतार; **आर**—तथा; **शक्ति-आवेश-अवतार**—शक्ति प्रदत्त अवतार।

अनुवाद

"फिर गुण-अवतार (जो भौतिक गुणों का नियन्त्रण करते हैं), मन्वन्तर-अवतार (जो प्रत्येक मनु के शासन में प्रकट होते हैं), युग-अवतार (विभिन्न युगों में अवतार लेने वाले) तथा शक्त्यावेश अवतार (शक्ति संचारित जीवों के अवतार) हैं।

तात्पर्य

गुणावतार तीन हैं—ब्रह्मा, शिव तथा विष्णु (*भागवत* १०.८८.३)। *श्रीमद्भागवत* (८.१.५, १३) में मन्वन्तर-अवतारों की सूची इस प्रकार दी गई है—(१) यज्ञ, (२) विभु, (३) सत्यसेन, (४) हरि, (५) वैकुण्ठ, (६) अजित, (७) वामन, (८) सार्वभौम, (९) ऋषभ, (१०) विष्वक्सेन, (११) धर्मसेतु, (१२) सुधामा, (१३) योगेश्वर तथा (१४) बृहद्भानु। कुल मिलाकर १४ अवतार हैं, जिनमें से यज्ञ तथा वामन की गणना लीलावतारों में भी की जाती है। ये सारे मन्वन्तर अवतार कभी-कभी *वैभव-अवतार* कहलाते हैं।

चार *युगावतार* हैं (१) सत्ययुग में शुक्ल (श्वेत) (*भागवत* ११.५.२१), (२) त्रेतायुग में *रक्त* (*भागवत* ११.५.२४), (३) द्वापर युग में श्याम (*भागवत*

११.५.२७) तथा (४) कलियुग में सामान्यतया *कृष्ण* (काला), किन्तु विशेष दशाओं में *पीतवर्ण,* यथा चैतन्य महाप्रभु (भागवत ११.५.३२ तथा १०.८.१३)।

शक्त्यावेश अवतारों की दो श्रेणियाँ हैं (१) दैवी तल्लीनता के स्वरूप (*भगवद्-आवेश*) यथा कपिलदेव या ऋषभदेव तथा (२) दैवी शक्ति-सम्पन्न रूप (*शक्त्यावेश*), जिनमें से सात प्रमुख हैं—(१) वैकुण्ठ लोक में शेषनाग, जिन्हें भगवान् की निजी सेवा करने के लिए शक्ति दी गई है (*स्वसेवनशक्ति*) (२) अनन्तदेव, जिन्हें ब्रह्माण्ड के समस्त लोकों को धारण करने की शक्ति दी गई है (*भूधारण-शक्ति*) (३) ब्रह्मा, जिन्हें सृष्टि रचने की शक्ति प्रदान की गई है (*सृष्टि-शक्ति*), (४) चतुःसन या चारों कुमार, जिन्हें दिव्य ज्ञान वितरण करने की विशेष शक्ति दी गई है (*ज्ञान-शक्ति*), (५) नारद मुनि, जिन्हें भक्ति वितरित करने की शक्ति दी गई है (*भक्ति-शक्ति*), (६) महाराज पृथु, जिन्हें जीवों पर शासन करने तथा उनका पालन करने की शक्ति दी गई है (*पालन-शक्ति*) तथा (७) परशुराम, जिन्हें धूर्तों तथा असुरों का दमन करने की शक्ति दी गई है (*दुष्टदमनशक्ति*)।

বাল্য, পৌগণ্ড হয় বিগ্রহের ধর্ম ।
এত-রূপে লীলা করেন ব্রজেন্দ্র-নন্দন ॥২৪৭॥

বাল্য, পৌগণ্ড হয় বিগ্রহের ধর্ম ।
এত-রূপে লীলা করেন ব্রজেন্দ্র-নন্দন ॥ ২৪৭॥

বাল্য—बचपन; **পৌগণ্ড**—युवावस्था; **হয়**—हैं; **বিগ্রহের**—श्रीविग्रह के; **ধর্ম**—लक्षण; **এত-রূপে**—कई रूपों में; **লীলা**—लीलाएँ; **করেন**—करते हैं; **ব্রজেন্দ্র-নন্দন**—नन्द महाराज के पुत्र, कृष्ण।

अनुवाद

"अर्चाविग्रह की विशिष्ट अवस्थाएँ हैं—बाल्य तथा पौगण्ड। महाराज नन्द के पुत्र श्रीकृष्ण ने शिशु तथा बालक के रूप में अपनी लीलाएँ सम्पन्न कीं।

অনন্ত অবতার কৃষ্ণের, নাহিক গণন ।
শাখা-চন্দ্র-ন্যায় করি দিগ্দরশন ॥২৪৮॥

अनन्त अवतार कृष्णेर, नाहिक गणन ।
शाखा-चन्द्र-न्याय करि दिग्दरशन ॥ २४८ ॥

अनन्त—असंख्य; **अवतार**—अवतार; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **नाहिक गणन**—गिनती करने की कोई सम्भावना नहीं है; **शाखा-चन्द्र-न्याय**—चन्द्रमा तथा वृक्ष की शाखा के दृष्टान्त द्वारा; **करि**—मैं करता हूँ; **दिक्-दरशन**—एक झलक मात्र।

अनुवाद

"कृष्ण के अवतार असंख्य हैं और उनकी गणना कर पाना सम्भव नहीं है। हम चन्द्रमा तथा वृक्ष की शाखाओं का उदाहरण देकर केवल उनका संकेत कर सकते हैं।

तात्पर्य

यद्यपि चन्द्रमा वृक्ष की शाखाओं में स्थित प्रतीत होता है, किन्तु वास्तव में वह बहुत दूर होता है। इसी तरह भगवान् कृष्ण का कोई भी अवतार इस भौतिक जगत् के भीतर नहीं होता है, किन्तु भगवान् की अहैतुकी कृपा से वह यहाँ दिखलाई पड़ता है। हमें उन्हें इस जगत् से सम्बन्धित नहीं मानना चाहिए। जैसाकि भगवान् कृष्ण द्वारा *भगवद्गीता* (९.११) में कहा गया है :

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्॥

"जब मैं मनुष्य रूप में अवतरित होता हूँ, तब मूर्ख लोग मेरा उपहास करते हैं। वे परम ईश्वर के रूप में मेरी दिव्य प्रकृति को नहीं जानते।"

अवतार अपनी खुद की इच्छा से अवतरित होते हैं और यद्यपि वे सामान्य मनुष्यों की तरह कर्म करते हैं, किन्तु वे इस भौतिक जगत् के नहीं होते हैं। भगवान् कृष्ण तथा उनके अवतारों को भगवत्कृपा से ही समझा जा सकता है :

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो
न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्य-
स्तस्यैष आत्माविवृणुते तनूं स्वाम्।
(*कठ उपनिषद्* १.२.२३)

"निपुण व्याख्याओं से परम भगवान् को नहीं पाये जा सकते; न ही उन्हें तीक्ष्ण

बुद्धि अथवा अत्यधिक श्रवण से पाये जा सकते हैं। उन्हें तो वही पा सकता है, जिसे वे स्वयं चुनते हैं। ऐसे व्यक्ति के समक्ष वे अपने स्वरूप को स्वयं प्रकट करते हैं।

अथापि ते देव पदाम्बुजद्वय
प्रसादलेशानुगृहीत एव हि।
जानाति तत्त्वं भगवन्महिम्नो
न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन्॥

(*भागवत* १०.१४.२९)

"हे प्रभु, यदि किसी को आपके चरणकमलों की लेशमात्र भी दया मिल जाती है, तो वह आपकी महानता को समझ सकता है। किन्तु जो आप भगवान् को समझने के लिए तर्कवितर्क में लगे रहते हैं, वे आपको जान नहीं पाते, भले ही वे वेदों का अध्ययन सालों भर करते रहें।"

अवतारा ह्यसङ्ख्येया हरेः सत्त्व-निधेर्द्विजाः ।
यथाऽविदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥ २४९॥

अवतारा ह्यसङ्ख्येया हरेः सत्त्व-निधेर्द्विजाः ।
यथाऽविदासिनः कुल्याः सरसः स्युः सहस्रशः ॥ २४९ ॥

अवताराः—अवतार; **हि**—निश्चित रूप से; **असङ्ख्येयाः**—गणना से परे; **हरेः**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के; **सत्त्व-निधेः**—जो दिव्य शक्ति के भण्डार हैं; **द्विजाः**—हे ब्राह्मणों; **यथा**—जिस प्रकार; **अविदासिनः**—जल के एक विशाल भण्डार से; **कुल्याः**—छोटे प्रवाह; **सरसः**—एक सरोवर से; **स्युः**—होते हैं; **सहस्रशः**—सैंकड़ों-हजारों गुना।

अनुवाद

"'हे विद्वान ब्राह्मणों, जिस प्रकार विशाल जलाशयों से लाखों छोटे-छोटे झरने नीकलते हैं, उसी तरह से समस्त शक्तियों के आगार पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्री हरि से असंख्य अवतार प्रकट होते हैं।

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत्* (१.३.२६) से उद्धृत है।

প্রথমেই করে কৃষ্ণ 'পুরুষাবতার' ।
সেইত পুরুষ হয় ত্রিবিধ প্রকার ॥২৫০॥

प्रथमेइ करे कृष्ण 'पुरुषावतार' ।
सेइत पुरुष हय त्रिविध प्रकार ॥ २५० ॥

प्रथमेइ—प्रारम्भ में; **करे**—करते हैं; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **पुरुष-अवतार**—तीन विष्णुओं (महाविष्णु, गर्भोदकशायी विष्णु तथा क्षीरोदकशायी विष्णु) का अवतार; **सेइत**—वही; **पुरुष**—विष्णु; **हय**—बन जाते हैं; **त्रि-विध प्रकार**—तीन विभिन्न अभिव्यक्तियाँ।

अनुवाद

"प्रारम्भ में कृष्ण स्वयं पुरुष-अवतारों अर्थात् विष्णु-अवतारों के रूप में अवतरित होते हैं। ये तीन प्रकार के हैं।

तात्पर्य

इस श्लोक तक अनेक प्रकार के विस्तारों का वर्णन हुआ है। अब भगवान् की विभिन्न शक्तियों के प्राकट्यों का वर्णन किया जायेगा।

বিষ্ণোস্তু ত্রীণি রূপাণি
পুরুষাখ্যান্যথো বিদুঃ
একং তু মহতঃ স্রষ্টৃ
দ্বিতীয়ং ত্বণ্ড-সংস্থিতম্
তৃতীয়ং সর্ব-ভূত-স্থং
তানি জ্ঞাত্বা বিমুচ্যতে

विष्णोस्तु त्रीणि रूपाणि
पुरुषाख्यान्यथो विदु:
एकं तु महत: स्त्रष्टृ
द्वितीयं त्वण्ड-संस्थितम्
तृतीयं सर्व-भूत-स्थं
तानि ज्ञात्वा विमुच्यते

विष्णो:—भगवान् विष्णु के; **तु**—लेकिन; **त्रीणि**—तीन; **रूपाणि**—रूप; **पुरुष-आख्यानि**—पुरुष नाम से विख्यात; **अथो**—किस प्रकार; **विदु:**—वे जानते हैं; **एकम्**—उनमें से एक; **तु**—परन्तु; **महत: स्त्रष्टृ**—सम्पूर्ण भौतिक शक्ति के रचनाकार; **द्वितीयम्**—दूसरा; **तु**—परन्तु; **अण्ड-संस्थितम्**—ब्रह्माण्ड के भीतर स्थित; **तृतीयम्**—तीसरा; **सर्व-भूत-स्थम्**—

सभी जीवों के हृदयों में; **तानि**—इन तीनों को; **ज्ञात्वा**—जानकर; **विमुच्यते**—मनुष्य मुक्त हो जाता है।

अनुवाद

"'विष्णु के तीन रूप हैं, जो पुरुष कहलाते हैं। प्रथम महाविष्णु हैं, जो सम्पूर्ण भौतिक शक्ति (*महत्*) के स्त्रष्टा हैं, द्वितीय गर्भोदकशायी विष्णु हैं, जो प्रत्येक ब्रह्माण्ड में स्थित हैं तथा तृतीय क्षीरोदकशायी विष्णु हैं, जो प्रत्येक प्राणी के हृदय में रहते हैं। जो इन तीनों को जान लेता है, वह माया के बन्धन से छूट जाता है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *लघु भागवतामृत* (*पूर्वखण्ड* ३३) में आया है, जिसमें इसे *सात्वत-तंत्र* से उद्धृत किया गया है।

अनन्त-शक्ति-मध्ये कृष्णेर तिन शक्ति प्रधान ।
'इच्छा-शक्ति', 'ज्ञान-शक्ति', 'क्रिया-शक्ति' नाम ॥२५२॥

अनन्त-शक्ति-मध्ये कृष्णेर तिन शक्ति प्रधान ।
'इच्छा-शक्ति', 'ज्ञान-शक्ति', 'क्रिया-शक्ति' नाम ॥ २५२ ॥

अनन्त-शक्ति—असंख्य शक्तियों; **मध्ये**—के मध्य; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **तिन**—तीन; **शक्ति**—शक्तियाँ; **प्रधान**—मुख्य हैं; **इच्छा-शक्ति**—इच्छा शक्ति; **ज्ञान-शक्ति**—ज्ञान की शक्ति; **क्रिया-शक्ति**—सृजनात्मक शक्ति; **नाम**—नामक।

अनुवाद

"कृष्ण की शक्तियाँ अनन्त हैं, जिनमें से तीन प्रमुख हैं—ये हैं इच्छाशक्ति, ज्ञानशक्ति तथा क्रियाशक्ति।

इच्छा-शक्ति-प्रधान कृष्ण—इच्छाय सर्व-कर्ता ।
ज्ञान-शक्ति-प्रधान वासुदेव अधिष्ठाता ॥२५३॥

इच्छा-शक्ति-प्रधान कृष्ण—इच्छाय सर्व-कर्ता ।
ज्ञान-शक्ति-प्रधान वासुदेव अधिष्ठाता ॥ २५३ ॥

इच्छा-शक्ति—इच्छाशक्ति के; **प्रधान**—स्वामी; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **इच्छाय**—

केवल इच्छा मात्र द्वारा; **सर्व-कर्ता**—सब वस्तुओं के सृष्टिकर्ता; **ज्ञान-शक्ति-प्रधान**—ज्ञान की शक्ति के स्वामी; **वासुदेव**—भगवान् वासुदेव; **अधिष्ठाता**—आधार।

अनुवाद

"इच्छाशक्ति के प्रधान भगवान् कृष्ण हैं, क्योंकि उनकी परम इच्छा से ही हर वस्तु का अस्तित्व है। इच्छा के लिए ज्ञान की आवश्यकता है और वह ज्ञान वासुदेव के माध्यम से व्यक्त होता है।

इच्छा-ज्ञान-क्रिया बिना ना हय सृजन ।
तिनेर तिन-शक्ति मेलि' प्रपञ्च-रचन ॥२५४॥

इच्छा-ज्ञान-क्रिया विना ना हय सृजन ।
तिनेर तिन-शक्ति मेलि' प्रपञ्च-रचन ॥ २५४॥

इच्छा-ज्ञान-क्रिया—सोचना, अनुभव करना, इच्छा करना, ज्ञान तथा क्रिया; **विना**—बिना; **ना**—नहीं; **हय**—होती है; **सृजन**—सृष्टि; **तिनेर**—तीनों की; **तिन-शक्ति**—तीन शक्तियाँ; **मेलि'**—मिलने पर; **प्रपञ्च-रचन**—भौतिक जगत् की सृष्टि होती है।

अनुवाद

"विचार, अनुभव, इच्छा, ज्ञान तथा क्रिया के बिना सृजन सम्भव नहीं है। परम इच्छा, ज्ञान और क्रिया के मेल से विराट् जगत् की रचना होती है।

क्रिया-शक्ति-प्रधान सङ्कर्षण बलराम ।
प्राकृताप्राकृत-सृष्टि करेन निर्माण ॥२५५॥

क्रिया-शक्ति-प्रधान सङ्कर्षण बलराम ।
प्राकृताप्राकृत-सृष्टि करेन निर्माण ॥ २५५॥

क्रिया-शक्ति-प्रधान—क्रियाशक्ति के स्वामी; **सङ्कर्षण**—भगवान् संकर्षण; **बलराम**—भगवान् बलराम; **प्राकृत**—भौतिक; **अप्राकृत**—आध्यात्मिक; **सृष्टि**—जगतों की; **करेन**—करते हैं; **निर्माण**—सृष्टि।

अनुवाद

"भगवान् संकर्षण बलराम हैं। वे क्रियाशक्ति के अधिष्ठाता होने के कारण भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों जगतों की सृष्टि करते हैं।

অহঙ্কারের অধিষ্ঠাতা কৃষ্ণের ইচ্ছায় ।
গোলোক, বৈকুণ্ঠ সৃজে চিচ্ছক্তি-দ্বারায় ॥ ২৫৬ ॥

অহঙ্কারের অধিষ্ঠাতা কৃষ্ণের ইচ্ছায় ।
গোলোক, বৈকুণ্ঠ সৃজে চিচ্ছক্তি-দ্বারায় ॥ ২৫৬ ॥

অহঙ্কারের—अहंकार के; **অধিষ্ঠাতা**—स्रोत या स्वामी; **কৃষ্ণের**—भगवान् कृष्ण की; **ইচ্ছায়**—इच्छा द्वारा; **গোলোক**—गोलोक नामक सर्वोपरि दिव्य आध्यात्मिक लोक; **বৈকুণ্ঠ**—वैकुण्ठ नामक अन्य निम्न लोक; **সৃজে**—रचना करते हैं; **চিৎ-শক্তি-দ্বারায়**—आध्यात्मिक शक्ति द्वारा।

अनुवाद

"आदि संकर्षण (भगवान् बलराम) भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों ही सृष्टियों के कारण हैं। वे अहंकार के अधिष्ठाता हैं। वे कृष्ण की इच्छा से तथा आध्यात्मिक शक्ति के बल पर आध्यात्मिक जगत् का सृजन करते हैं जिसमें गोलोक वृन्दावन तथा वैकुण्ठ लोक सम्मिलित हैं।

যদ্যপি অসৃজ্য নিত্য চিচ্ছক্তি-বিলাস ।
তথাপি সঙ্কর্ষণ-ইচ্ছায় তাহার প্রকাশ ॥ ২৫৭ ॥

যদ্যপি অসৃজ্য নিত্য চিচ্ছক্তি-বিলাস ।
তথাপি সঙ্কর্ষণ-ইচ্ছায় তাহার প্রকাশ ॥ ২৫৭ ॥

যদ্যপি—यद्यपि; **অসৃজ্য**—रचना करने का कोई प्रश्न नहीं है; **নিত্য**—शाश्वत; **চিৎ-শক্তি-বিলাস**—नित्य आध्यात्मिक शक्ति की लीलाएँ; **তথাপি**—फिर भी; **সঙ্কর্ষণ-ইচ্ছায়**—संकर्षण की इच्छा द्वारा; **তাহার**—आध्यात्मिक संसार का; **প্রকাশ**—प्राकट्य।

अनुवाद

"यद्यपि आध्यात्मिक जगत् के सृजन का प्रश्न नहीं उठता, तो भी आध्यात्मिक जगत् संकर्षण की परम इच्छा से ही प्रकट होता है। यह आध्यात्मिक जगत् नित्य आध्यात्मिक शक्ति के विलास का धाम है।

সহস্র-পত্রং কমলং গোকুলাখ্যং মহৎপদম্ ।
তৎকর্ণিকারং তদ্ধাম তদনন্তাংশ-সম্ভবম্ ॥ ২৫৮ ॥

सहस्र-पत्रं कमलं गोकुलाख्यं महत्पदम् ।
तत्कर्णिकारं तद्धाम तदनन्तांश-सम्भवम् ॥ २५८ ॥

सहस्र-पत्रम्—हजारों पंखुड़ियों के साथ; **कमलम्**—एक कमल पुष्प के समान; **गोकुल-आख्यम्**—गोकुल नामक; **महत् पदम्**—परम लोक; **तत्-कर्णिकारम्**—उस कमल पुष्प की कर्णिका; **तत्-धाम**—भगवत्-धाम; **तत्**—वह; **अनन्त-अंश**—अनन्त की शक्ति के विस्तार से; **सम्भवम्**—सृष्टि।

अनुवाद

"'परम धाम तथा लोक गोकुल एक हजार पंखुड़ियों वाले कमल के फूल जैसा लगता है। इस कमल की कर्णिका भगवान् कृष्ण का धाम है। यह कमल जैसे आकार वाला परम धाम भगवान् अनन्त की इच्छा से उत्पन्न होता है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *ब्रह्म-संहिता* (५.२) से लिया गया है।

মায়া-দ্বারে সৃজে তেঁহো ব্রহ্মাণ্ডের গণ ।
জড়-রূপা প্রকৃতি নহে ব্রহ্মাণ্ড-কারণ ॥২৫৯॥

माया-द्वारे सृजे तेंहो ब्रह्माण्डेर गण ।
जड़-रूपा प्रकृति नहे ब्रह्माण्ड-कारण ॥ २५९ ॥

माया-द्वारे—बहिरंगा शक्ति के द्वारा; **सृजे**—रचना करते हैं; **तेंहो**—भगवान् संकर्षण; **ब्रह्माण्डेर गण**—सभी ब्रह्माण्डों की; **जड़-रूपा**—जड़ रूप; **प्रकृति**—भौतिक प्रकृति; **नहे**—नहीं है; **ब्रह्माण्ड-कारण**—ब्रह्माण्ड की कारण।

अनुवाद

"वे ही भगवान् संकर्षण भौतिक शक्ति (माया) के द्वारा सारे ब्रह्माण्डों का सृजन करते हैं। जड़ रूप भौतिक शक्ति, जिसे आधुनिक भाषा में प्रकृति कहा जाता है, भौतिक ब्रह्माण्ड का कारण नहीं है।

জড় হৈতে সৃষ্টি নহে ঈশ্বর-শক্তি বিনে ।
তাহাতেই সঙ্কর্ষণ করে শক্তির আধানে ॥২৬০॥

जड़ हैते सृष्टि नहे ईश्वर-शक्ति विने ।
ताहातेइ सङ्कर्षण करे शक्तिर आधाने ॥ २६० ॥

जड़ हैते—जड़ भौतिक प्रकृति से; **सृष्टि नहे**—सृष्टि नहीं हो सकती; **ईश्वर-शक्ति विने**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की सहायता के बिना; **ताहातेइ**—भौतिक शक्ति में; **सङ्कर्षण**—भगवान् संकर्षण; **करे**—करते हैं; **शक्तिर**—आध्यात्मिक शक्ति; **आधाने**—संचारित।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की शक्ति के बिना जड़ पदार्थ विराट् जगत् का सृजन नहीं कर सकता। इसकी शक्ति भौतिक शक्ति से उत्पन्न नहीं होती, किन्तु संकर्षण द्वारा प्रदत्त होती है।

ঈশ্বরের শক্ত্যে সৃষ্টি করয়ে প্রকৃতি ।
লৌহ যেন অগ্নি-শক্ত্যে পায় দাহ-শক্তি ॥২৬১॥

ईश्वरेर शक्त्ये सृष्टि करये प्रकृति ।
लौह ग्रेन अग्नि-शक्त्ये पाय दाह-शक्ति ॥ २६१ ॥

ईश्वरेर शक्त्ये—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की शक्ति द्वारा; **सृष्टि**—सृष्टि; **करये**—करती है; **प्रकृति**—भौतिक प्रकृति; **लौह**—लोहा; **ग्रेन**—जिस प्रकार; **अग्नि-शक्त्ये**—अग्नि की शक्ति द्वारा; **पाय**—प्राप्त करता है; **दाह-शक्ति**—जलाने की शक्ति।

अनुवाद

"अकेला जड़ पदार्थ किसी वस्तु का सृजन नहीं कर सकता। भौतिक शक्ति पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के बल पर सृष्टि करती है। लोहे में खुद में जलाने की कोई शक्ति नहीं होती, किन्तु जब इसी लोहे को अग्नि में रखा जाता है, तब यह जलाने की शक्ति प्राप्त कर लेता है।

এতৌ হি বিশ্বস্য চ বীজ-যোনী
রামো মুকুন্দঃ পুরুষঃ প্রধানম্ ।
অন্বীয় ভূতেষু বিলক্ষণস্য
জ্ঞানস্য চেশাত ইমৌ পুরাণৌ ॥২৬২॥

एतौ हि विश्वस्य च बीज-योनी
रामो मुकुन्दः पुरुषः प्रधानम् ।
अन्वीय भूतेषु विलक्षणस्य
ज्ञानस्य चेशात इमौ पुराणौ ॥ २६२ ॥

एतौ—राम तथा कृष्ण नामक, ये दोनों; **हि**—निश्चित रूप से; **विश्वस्य**—संसार के; **च**—तथा; **बीज-योनी**—कारण तथा सामग्री दोनों; **रामः**—बलराम; **मुकुन्दः**—कृष्ण; **पुरुषः**—मूल महाविष्णु; **प्रधानम्**—भौतिक शक्ति; **अन्वीय**—प्रवेश करने के बाद; **भूतेषु**—भौतिक तत्त्वों में; **विलक्षणस्य**—विभिन्न प्रकार की अभिव्यक्तियों के; **ज्ञानस्य**—ज्ञान के; **च**—तथा; **ईशाते**—नियन्त्रण करने वाली शक्ति हैं; **इमौ**—ये दोनों; **पुराणौ**—मूल कारण हैं।

अनुवाद

"'बलराम तथा कृष्ण इस भौतिक जगत् के मूल, निमित्त एवं भौतिक कारण हैं। वे महाविष्णु तथा भौतिक शक्ति के रूप में भौतिक तत्त्वों में प्रविष्ट होते हैं और नाना शक्तियों द्वारा विविधता उत्पन्न करते हैं। इस तरह वे समस्त कारणों के कारण हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.४६.३१) से लिया गया है।

सृष्टि-हेतु येइ मूर्ति प्रपञ्चे अवतरे ।
सेइ ईश्वर-मूर्ति 'अवतार' नाम धरे ॥२६३॥

सृष्टि-हेतु येइ मूर्ति प्रपञ्चे अवतरे ।
सेइ ईश्वर-मूर्ति 'अवतार' नाम धरे ॥ २६३॥

सृष्टि-हेतु—सृष्टि करने के उद्देश्य से; **येइ मूर्ति**—भगवान् का जो रूप; **प्रपञ्चे**—भौतिक जगत् में; **अवतरे**—अवतरित होता है; **सेइ**—वही; **ईश्वर-मूर्ति**—भगवान् का रूप; **अवतार**—अवतार; **नाम धरे**—नाम प्राप्त करता है।

अनुवाद

"भगवान् का वह रूप, जो सृष्टि करने के हेतु भौतिक जगत् में अवतरित होता है, अवतार कहलाता है।

मायातीत परव्योमे सबार अवस्थान ।
विश्वे अवतरि' धरे 'अवतार' नाम ॥२६४॥

मायातीत परव्योमे सबार अवस्थान ।
विश्वे अवतरि' धरे 'अवतार' नाम ॥ २६४॥

माया-अतीत—भौतिक प्रकृति के परे; **पर-व्योमे**—आध्यात्मिक आकाश में; **सबार**—

उन सब का; **अवस्थान**—निवास; **विश्वे**—भौतिक ब्रह्माण्ड में; **अवतरि'**—अवतरित होकर; **धरे**—लेते हैं; **अवतार नाम**—अवतार नाम।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण के सारे विस्तार वास्तव में आध्यात्मिक आकाश के निवासी हैं। किन्तु जब वे भौतिक जगत् में अवतरित होते हैं, तो अवतार कहे जाते हैं।

सेई माया अवलोकिते श्री-सङ्कर्षण ।
पुरुष-रूपे अवतीर्ण हइला प्रथम ॥ २६५॥

सेइ माया अवलोकिते श्री-सङ्कर्षण ।
पुरुष-रूपे अवतीर्ण हइला प्रथम ॥ २६५॥

सेइ माया—वह भौतिक शक्ति; **अवलोकिते**—थोड़ा दृष्टिपात करने के लिए; **श्री-सङ्कर्षण**—संकर्षण; **पुरुष-रूपे**—महाविष्णु के मूल रूप में; **अवतीर्ण**—अवतरित; **हइला**—हुए; **प्रथम**—सबसे पहले।

अनुवाद

"भौतिक शक्ति (माया) पर दृष्टिपात करने तथा उसे शक्ति प्रदान करने के लिए भगवान् संकर्षण सर्वप्रथम भगवान् महाविष्णु के रूप में अवतरित होते हैं।

जगृहे पौरुषं रूपं भगवान्महदादिभिः ।
सम्भूतं षोड़श-कलमादौ लोक-सिसृक्षया ॥२६६॥

जगृहे पौरुषं रूपं भगवान्महदादिभिः ।
सम्भूतं षोड़श-कलमादौ लोक-सिसृक्षया ॥ २६६॥

जगृहे—स्वीकार किया; **पौरुषम् रूपम्**—पुरुष अवतार का रूप; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने; **महत्-आदिभिः**—भौतिक शक्ति आदि के साथ; **सम्भूतम्**—रचना की; **षोड़श**—सोलह; **कलम्**—तत्त्व; **आदौ**—सबसे पहले; **लोक**—भौतिक संसारों में; **सिसृक्षया**—सृष्टि की इच्छा के साथ।

अनुवाद

"'सृष्टि के प्रारम्भ में भगवान् ने भौतिक सृष्टि की समस्त सामग्री के

साथ अपना विस्तार पुरुष अवतार के रूप में किया। सर्वप्रथम उन्होंने सृष्टि करने के लिए सोलह प्रमुख शक्तियाँ उत्पन्न कीं। ऐसा उन्होंने भौतिक ब्रह्माण्डों को प्रकट करने के लिए किया।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१.३.१) से है। इसकी व्याख्या के लिए देखें आदिलीला ५.८४।

आद्योऽवतारः पुरुषः परस्य
कालः स्वभावः सदसन्मनश्च ।
द्रव्यं विकारो गुण इन्द्रियाणि
विराट्स्वराट्स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ॥ २६७॥

आद्योऽवतारः पुरुषः परस्य
कालः स्वभावः सदसन्मनश्च ।
द्रव्यं विकारो गुण इन्द्रियाणि
विराट्स्वराट्स्थास्नु चरिष्णु भूम्नः ॥ २६७॥

आद्यः अवतारः—मूल अवतार; **पुरुषः**—कारणाब्धिशायी विष्णु; **परस्य**—परम भगवान् के; **कालः**—समय; **स्वभावः**—आकाश; **सत्-असत्**—कार्य तथा कारण; **मनः च**—तथा मन; **द्रव्यम्**—पाँच तत्त्व; **विकारः**—परिवर्तन या मिथ्या अहंकार; **गुणः**—प्रकृति के गुण; **इन्द्रियाणि**—इन्द्रियाँ; **विराट्**—विराट् (सृष्टि) रूप; **स्वराट्**—गर्भोदकशायी विष्णु; **स्थास्नु**—अचर; **चरिष्णु**—चर; **भूम्नः**—भगवान् का।

अनुवाद

'"भगवान् के प्रथम अवतार हैं कारणाब्धिशायी विष्णु (महाविष्णु), जो सनातन काल, आकाश, कारण तथा कार्य, मन, तत्त्व, भौतिक अहंकार, प्रकृति के गुण, इन्द्रिय-समूह, भगवान् का विराट् रूप, गर्भोदकशायी विष्णु तथा सारे चर एवं अचर जीवों के स्वामी हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (२.६.४२) का है। इसकी व्याख्या के लिए देखें आदिलीला ५.८३।

सेई पुरुष विरजाते करेन शयन ।
'कारणाब्धिशायी' नाम जगत्कारण ॥ २६८ ॥

सेइ पुरुष विरजाते करेन शयन ।
'कारणाब्धिशायी' नाम जगत्कारण ॥ २६८ ॥

सेइ पुरुष—वही परम भगवान्; **विरजाते**—विरजा नामक सीमा पर; **करेन शयन**—शयन करते हैं; **कारण-अब्धि-शायी**—कारणाब्धिशायी; **नाम**—नामक; **जगत्-कारण**—भौतिक सृष्टि के मूल कारण।

अनुवाद

"वे आदि भगवान्, जिनका नाम संकर्षण है, सर्वप्रथम उस विरजा नदी में शयन करते हैं, जो भौतिक जगत् तथा आध्यात्मिक जगत् के बीच में सीमा का कार्य करती है। कारणाब्धिशायी विष्णु के रूप में वे भौतिक सृष्टि के आदि कारण हैं।

कारणाब्धि-पारे मायार नित्य अवस्थिति ।
विरजार पारे परव्योमे नाहि गति ॥ २६९ ॥

कारणाब्धि-पारे मायार नित्य अवस्थिति ।
विरजार पारे परव्योमे नाहि गति ॥ २६९ ॥

कारण-अब्धि-पारे—कारण समुद्र के किनारे पर; **मायार**—भौतिक शक्ति की; **नित्य**—शाश्वत; **अवस्थिति**—स्थिति; **विरजार पारे**—कारण समुद्र या विरजा के दूसरे छोर पर; **पर-व्योमे**—आध्यात्मिक आकाश में; **नाहि**—नहीं है; **गति**—प्रवेश।

अनुवाद

"विरजा अर्थात् कारण सागर आध्यात्मिक तथा भौतिक जगतों के बीच की सीमा है। इस सागर के एक तट पर भौतिक शक्ति (माया) स्थित है, किन्तु यह दूसरे किनारे पर प्रवेश नहीं कर सकती, जहाँ आध्यात्मिक आकाश है।

प्रवर्तते यत्र रजस्तमस्तयोः
सत्त्वं च मिश्रं न च काल-विक्रमः ।

न यत्र माया किमुतापरे हरेर्
अनुव्रता यत्र सुरासुरार्चिताः ॥ २७० ॥

प्रवर्तते यत्र रजस्तमस्तयोः
सत्त्वं च मिश्रं न च काल-विक्रमः ।
न यत्र माया किमुतापरे हरेर्
अनुव्रता यत्र सुरासुरार्चिताः ॥ २७० ॥

प्रवर्तते—रहते हैं; **यत्र**—जहाँ; **रजः**—रजोगुण; **तमः**—तमोगुण; **तयोः**—उन दोनों का; **सत्त्वम् च**—तथा सत्त्वगुण का; **मिश्रम्**—मिश्रण; **न**—नहीं; **च**—तथा; **काल-विक्रमः**—समय या प्रलय का प्रभाव; **न**—नहीं; **यत्र**—जहाँ; **माया**—बहिरंगा शक्ति; **किम्**—क्या; **उत**—कहना; **अपरे**—दूसरे; **हरेः**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के; **अनुव्रताः**—दृढ़ अनुयायी; **यत्र**—जहाँ; **सुर**—देवताओं द्वारा; **असुर**—तथा असुरों द्वारा; **अर्चिताः**—पूजे जाते हैं।

अनुवाद

'"आध्यात्मिक जगत् में न तो रजोगुण है, न तमोगुण, न ही इन दोनों का मिश्रण है। न ही वहाँ मिश्रित सत्त्व है, न काल या स्वयं माया का प्रभाव है। यहाँ केवल भगवान् के शुद्ध भक्त भगवान् के संगी बनकर रहते हैं, जिनकी पूजा देवता तथा असुर दोनों करते हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (२.९.१०) का है, जिसे श्रील शुकदेव गोस्वामी ने कहा है। वे महाराज परीक्षित के इस प्रश्न का उत्तर दे रहे थे कि जीव किस तरह भौतिक जगत् में आ गिरता है। शुकदेव गोस्वामी ने *श्रीमद्भागवत* का सार चार श्लोकों में कह सुनाया, जिसे ब्रह्मा को एक हजार दैवी वर्षों तक कठोर तपस्या करने के बाद बतलाया गया था। उस समय ब्रह्मा को आध्यात्मिक जगत् तथा उसकी दिव्य प्रकृति का दर्शन कराया गया था।

मायार ये दुई वृत्ति—'माया' आर 'प्रधान' ।
'माया' निमित्त-हेतु, विश्वेर उपादान 'प्रधान' ॥ २७१ ॥

मायार ये दुइ वृत्ति—'माया' आर 'प्रधान' ।
'माया' निमित्त-हेतु, विश्वेर उपादान 'प्रधान' ॥ २७१ ॥

मायार—भौतिक प्रकृति की; **ये**—जो; **दुइ**—दो; **वृत्ति**—क्रियाएँ; **माया**—माया नामक;

आर—तथा; **प्रधान**—प्रधान; **माया**—माया शब्द; **निमित्त-हेतु**—निमित्त कारण; **विश्वेर**—भौतिक संसार का; **उपादान**—पदार्थ; **प्रधान**—प्रधान कहलाती हैं।

अनुवाद

"माया के दो कार्य हैं। इनमें से एक माया कहलाता है और दूसरा प्रधान। माया सूचक है निमित्त कारण की और प्रधान उन उपादानों (सामग्री) का सूचक है, जिनसे विराट् जगत् की सृष्टि होती है।

तात्पर्य

इसकी अतिरिक्त व्याख्या के लिए देखें आदिलीला ५.५८।

सेइ पुरुष माया-पाने करे अवधान ।
प्रकृति क्षोभित करि' करे वीर्येर आधान ॥२७२॥

सेइ पुरुष माया-पाने करे अवधान ।
प्रकृति क्षोभित करि' करे वीर्येर आधान ॥ २७२ ॥

सेइ पुरुष—वही पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **माया-पाने**—माया की ओर; **करे अवधान**—दृष्टिपात करके; **प्रकृति**—भौतिक प्रकृति को; **क्षोभित करि'**—विचलित करके; **करे**—करते हैं; **वीर्येर**—वीर्य का; **आधान**—संचार।

अनुवाद

"जब पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् भौतिक शक्ति पर दृष्टि डालते हैं, तो वह क्षुब्ध हो जाती है। उस समय भगवान् उसमें जीव रूपी अपना मूल वीर्य प्रविष्ट कर देते हैं।

तात्पर्य

भगवद्गीता (७.१०) में कृष्ण कहते हैं—*बीजं मां सर्वभूतानाम्*—"मैं समस्त जीवों का मूल बीज हूँ।" इसकी पुष्टि एक अन्य श्लोक (१४.४) द्वारा भी हुई है :

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः ।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥

"हे कुन्ती-पुत्र, यह समझ लो कि इस भौतिक प्रकृति में सारी योनियाँ जन्म लेने के कारण ही सम्भव हुई हैं और मैं वीर्य देने वाला पिता हूँ।"

अधिक व्याख्या के लिए देखें *ब्रह्म-संहिता* ५.१०-१३। *ब्रह्म-संहिता* (५.५१) में यह भी कहा गया है कि :

अग्निर्महो गगनमम्बु मरुद्दिशश्च
कालस्तथात्ममनसीति जगत् त्रयाणि।
यस्माद् भवन्ति विभवन्ति विशन्ति यं च
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि॥

पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से सारे भौतिक तत्त्व तथा आध्यात्मिक स्फुलिंग (आत्मा) उद्भूत हो रहे हैं। इसकी पुष्टि *वेदान्त-सूत्र* (१.१) से भी होती है—*जन्माद्यस्य यतः*—"परम सत्य वे हैं, जिनसे हर वस्तु उद्भूत होती है।" वे परम सत्य है—*सत्यं परं धीमहि* (*भागवत* १.१.१)। परम सत्य तो कृष्ण हैं। *ओम् नमो भगवते वासुदेवाय। जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्*—"परम सत्य एक पुरुष है, जो सम्पूर्ण जगत् से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अवगत है। (*भागवत* १.१.१)

परम सत्य या पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने ब्रह्मा को हृदय से शिक्षा दी (*भागवत* १.१.१)—*तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये।* अतएव परम सत्य जड़ पदार्थ नहीं हो सकता। परम सत्य को साक्षात् परम पुरुष होना चाहिए। *सेइ पुरुष माया-पाने करे अवधान।* उनके दृष्टिपात से ही भौतिक प्रकृति सारे जीवों से गर्भित हो जाती है। वे अपने अपने कर्म के अनुसार विभिन्न शरीरों में उत्पन्न होते हैं। *भगवद्गीता* (२.१३) ने यही व्याख्या दी है :

देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥

"जिस तरह देहधारी आत्मा इस शरीर में बालपन से युवावस्था और फिर बुढ़ापे को प्राप्त होता है, उसी तरह आत्मा मृत्यु के समय दूसरे शरीर में चला जाता है। आत्मज्ञानी व्यक्ति ऐसे परिवर्तन से मोहित नहीं होता।"

स्वाङ्ग-विशेषाभास-रूपे प्रकृति-स्पर्शन ।
जीव-रूप 'बीज' ताते कैला समर्पण ॥२७३॥

स्वाङ्ग-विशेषाभास-रूपे प्रकृति-स्पर्शन ।
जीव-रूप 'बीज' ताते कैला समर्पण ॥ २७३ ॥

स्व-अङ्ग-विशेष-आभास-रूपे—अपने शरीर से एक विशिष्ट परछाई के रूप में; **प्रकृति-स्पर्शन**—भगवान् भौतिक प्रकृति पर दृष्टिपात् करते हैं; **जीव-रूप**—अंशभूत स्फुलिंग जैसे जीवात्माओं के रूप में; **बीज**—वीर्य; **ताते**—भौतिक प्रकृति में; **कैला समर्पण**—गर्भाधान कर देते हैं।

अनुवाद

"जीवरूपी बीजों से गर्भित करने के लिए भगवान् भौतिक शक्ति का प्रत्यक्ष स्पर्श नहीं करते, अपितु वे अपने विशेष कार्यकारी विस्तार द्वारा भौतिक प्रकृति का स्पर्श करते हैं। इस तरह सारे जीव, जो उनके अंश रूप हैं, भौतिक प्रकृति में गर्भित हो जाते हैं।

तात्पर्य

भगवद्गीता (१५.७) में भगवान् कृष्ण के अनुसार :

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥

"इस भौतिक जगत् में सारे जीव मेरे सनातन सूक्ष्म अंश हैं। बद्ध होने के कारण वे मन समेत छहों इन्द्रियों द्वारा अत्यधिक संघर्ष कर रहे हैं।"

चैतन्य-चरितामृत में *प्रकृति-स्पर्शन* शब्द की व्याख्या जड़ पदार्थ के साथ जीवों के सम्पर्क के प्रसंग में की गई है। यह दृष्टिपात महाविष्णु द्वारा होता है—*स ऐक्षत लोकान्नु सृजा इति।* (*ऐतरेय उपनिषद्* १.१.१) बद्ध अवस्था में हम देह रचना के अनुसार मैथुन द्वारा गर्भ स्थापित करते हैं, किन्तु परमेश्वर को ऐसे मैथुन की आवश्यकता नहीं पड़ती। वे तो केवल दृष्टिपात द्वारा गर्भ स्थापित करते हैं। *ब्रह्म-संहिता* (५.३२) में भी यही बात कही गई है :

अङ्गानि यस्य सकलेन्द्रियवृत्तिमन्ति
पश्यन्ति पान्ति कलयन्ति चिरं जगन्ति ।
आनन्द-चिन्मयसदुज्ज्वल विग्रहस्य
गोविन्दमादिपुरुषं तमहं भजामि ॥

गोविन्द मात्र दृष्टिपात द्वारा गर्भाधान कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में, उनकी

आँखें जननेन्द्रिय का काम कर सकती हैं। उन्हें सन्तान उत्पन्न करने के लिए जननेन्द्रियों की आवश्यकता नहीं पड़ती। निस्सन्देह, कृष्ण अपने शरीर के किसी भी अंग से किसी भी जीव को उत्पन्न कर सकते हैं।

यहाँ *स्वांग-विशेषाभास-रूपे* अर्थात् जिस रूप से भगवान् इस भौतिक जगत् में जीवों को उत्पन्न करते हैं, उसकी व्याख्या की गई है। उनका यह रूप शिवजी का है। *ब्रह्म-संहिता* में कहा गया है कि महाविष्णु का अन्य रूप शिवजी दही के समान है। दही दूध ही है, फिर भी दूध नहीं है। इसी तरह शिवजी इस ब्रह्माण्ड के पिता माने जाते हैं और भौतिक प्रकृति माता मानी जाती है। शिव तथा दुर्गा पिता तथा माता माने जाते हैं। शिव तथा दुर्गा की जननेन्द्रियाँ एकसाथ *शिवलिंग* के रूप में पूजी जाती हैं। यह भौतिक सृष्टि का उद्गम है। इस तरह शिवजी की स्थिति यह है कि वे जीव तथा परमेश्वर के बीच स्थित हैं। दूसरे शब्दों में, शिवजी न तो जीव हैं, न परमेश्वर। वे वह रूप हैं, जिसके माध्यम से परमेश्वर इस भौतिक जगत् में जीवों को उत्पन्न करते हैं। जिस तरह दूध में जामन मिलाने पर दही बनता है, उसी तरह जब पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् भौतिक प्रकृति के सम्पर्क में आते हैं, तब वे शिव के रूप का विस्तार करते हैं। पिता शिवजी द्वारा भौतिक प्रकृति का गर्भित होना अद्भुत है, क्योंकि एकसाथ असंख्य जीव उत्पन्न होते हैं। *भागो जीवः स विज्ञेयः स चानन्त्याय कल्पते* (*श्वेताश्वतर उपनिषद्* ५.९)। ये जीव अत्यन्त सूक्ष्म होते हैं :

केशाग्र-शत-भागस्य शतांशसदृशात्मकः।
जीवः सूक्ष्मस्वरूपोऽयं सङ्ख्यातीतो हि चित्कणः॥

"यदि हम एक बाल के सिरे को सौ भागों में बाँटें और फिर पुनः एक भाग के सौ भाग करें, तो जो अति सूक्ष्म आकार होगा, वही आकार असंख्य जीवों में से एक जीव का होगा। वे सभी *चित्कण,* अर्थात् आत्मा के कण हैं, पदार्थ नहीं हैं।"

असंख्य ब्रह्माण्डों की उत्पत्ति भगवान् के शरीर के रोमकूपों से होती है और असंख्य जीव भी उन्हीं भगवान् के दिव्य शरीर के कूपों से निकलते हैं। यही भौतिक सृजन की प्रक्रिया है। जीव के बिना यह भौतिक प्रकृति मूल्यहीन है। दोनों ही महाविष्णु के दिव्य शरीर के रोमकूपों से निकलते हैं। वे विभिन्न

शक्तियाँ हैं। इसे *भगवद्गीता* (७.४) में कृष्ण द्वारा इस प्रकार बतलाया गया है :

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥

"भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि तथा अहंकार—ये आठ मिलकर मेरी भिन्न भौतिक शक्तियों का निर्माण करते हैं।" इस तरह भौतिक तत्त्व भी पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के शरीर से उत्पन्न होते हैं, किन्तु वे जीवों से भिन्न प्रकार की शक्ति हैं। यद्यपि जीव भी भगवान् के शरीर से उत्पन्न होते हैं, किन्तु उन्हें श्रेष्ठ (परा) शक्ति के रूप में परिगणित किया जाता है :

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्॥

"हे महाबाहु अर्जुन, इस कनिष्ठ (अपरा) प्रकृति के अतिरिक्त मेरी एक उत्कृष्ट परा शक्ति भी है, जो भौतिक प्रकृति के संसाधनों को दोहन करने वाले जीवों से बनी है।" (*भगवद्गीता* ७.५) निकृष्ट शक्ति (पदार्थ) उत्कृष्ट परा शक्ति के बिना कार्य नहीं कर सकती। इन सबका वेदों में स्पष्ट रूप से वर्णन किया गया है। यह भौतिकतावादी सिद्धान्त कि जीवन पदार्थ से उत्पन्न होता है, गलत है। जीवन तथा पदार्थ दोनों ही परम पुरुष से उत्पन्न हुए हैं, इसीलिए इन दोनों का उद्गम होने के कारण उन परम पुरुष कृष्ण को *वेदान्त-सूत्र* (१.१) में *जन्माद्यस्य यतः* अथवा *सर्वकारणकारणं* कहा गया है। अगले श्लोक में इसकी अधिक व्याख्या की गई है।

दैवाच्क्षुभित-धर्मिण्याः स्वस्याः योनौ परः पुमान् ।
आधत्त वीर्यं सासूत महत्तत्त्वं हिरण्मयम् ॥२७४॥

दैवात्क्षुभित-धर्मिण्यां स्वस्यां य्रोनौ परः पुमान् ।
आधत्त वीर्य्यं सासूत महत्तत्त्वं हिरण्मयम् ॥ २७४॥

दैवात्—स्मरण से परे के समय में; **क्षुभित-धर्मिण्याम्**—क्षुब्ध होने वाली भौतिक प्रकृति; **स्वस्याम्**—जो परम भगवान् की शक्तियों में से एक है; **य्रोनौ**—योनि में, जिससे सभी जीवात्माएँ जन्म लेते हैं; **परः पुमान्**—परम ब्रह्म, परम भगवान्; **आधत्त**—गर्भस्थ किया;

वीर्य्यम्—वीर्य; **सा**—उस भौतिक प्रकृति ने; **असूत**—उत्पन्न किया; **महत्-तत्त्वम्**—सम्पूर्ण भौतिक शक्ति; **हिरण्मयम्**—विविध रूप के भौतिक पदार्थों के प्राकट्य का मूल स्रोत।

अनुवाद

"'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने अनन्तकाल में तीन गुणों वाली भौतिक प्रकृति को उत्तेजित करके उसके गर्भ में असंख्य जीवों के रूप में अपना वीर्य स्थापित किया। इस तरह भौतिक प्रकृति ने सम्पूर्ण भौतिक शक्ति को जन्म दिया, जो हिरण्मय महत् तत्त्व के नाम से जानी जाती है, जिसका अर्थ है, विश्व-सृष्टि का मूल प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (३.२६.१९) से है। इसमें भगवान् कपिल अपनी माता को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् तथा भौतिक प्रकृति के पारस्परिक सम्बन्ध के विषय में बतला रहे हैं। वे बता रहे हैं कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् किस तरह उन जीवों के मूल कारण हैं, जो भौतिक प्रकृति द्वारा बद्ध हैं। भौतिक सृष्टि के २८ तत्त्वों के भी ऊपर समस्त कारणों के कारण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं। जीवन का उदय पदार्थ से नहीं, अपितु जीवन से होता है। वेदों में (*कठ उपनिषद्* २.२.१३ में) बतलाया गया है—*नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्।* भगवान् जीवन के मूल उद्गम हैं।

काल-वृत्त्या तु मायायाꣳ गुण-मय्यामधोक्षजः ।
पूरुषेणात्म-भूतेन वीर्यमाधत्त वीर्यवान् ॥२७५॥

काल-वृत्त्या तु मायायां गुण-मय्यामधोक्षजः ।
पुरुषेणात्म-भूतेन वीर्य्यमाधत्त वीर्य्यवान् ॥ २७५ ॥

काल-वृत्त्या—कुछ समय के बाद, सृष्टि के निमित्त कारण रूप में; **तु**—किन्तु; **मायायाम्**—भौतिक प्रकृति में; **गुण-मय्याम्**—भौतिक प्रकृति के तीनों गुणों (सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण) से पूर्ण; **अधोक्षजः**—पूर्ण पुरुषोत्तम पुरूषोत्तम भगवान् द्वारा, जो भौतिक अवधारणाओं से परे हैं; **पुरुषेण**—भौतिक प्रकृति के भोक्ता द्वारा; **आत्म-भूतेन**—जो उनके स्वांश विस्तार हैं; **वीर्य्यम्**—वीर्य; **आधत्त**—स्थापित किया; **वीर्य्यवान्**—वीर्यवान।

अनुवाद

"'कालक्रम में पूर्ण पुरूषोत्तम भगवान् (महावैकुण्ठनाथ) ने अपने

स्वांश विस्तार (महाविष्णु) द्वारा भौतिक प्रकृति के गर्भ के भीतर जीवरूपी वीर्य स्थापित किया।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (३.५.२६) का है। इस श्लोक में बतलाया गया है कि जीव किस तरह भौतिक प्रकृति के सम्पर्क में आते हैं। जिस प्रकार स्त्री पुरुष के संसर्ग के बिना सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकती, उसी तरह भौतिक प्रकृति भी पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से संयोग किये बिना जीवों को जन्म नहीं दे सकती। भगवान् किस तरह सारे जीवों के पिता हैं, इसका भी इतिहास है। प्रत्येक धर्म में ईश्वर को सारे जीवों के परम पिता माने जाते हैं। ईसाई धर्मानुसार परम पिता ईश्वर जीवों को सारी आवश्यक वस्तुएँ प्रदान करते हैं। इसीलिए वे प्रार्थना करते हैं, "हमें हमारी आज की रोटी दें।" जो धर्म परमेश्वर को परम पिता नहीं मानता, वह *कैतव धर्म* अर्थात् ठगने वाला धर्म कहलाता है। *श्रीमद्भागवत* (१.१.२) में ऐसे धर्मों को अस्वीकार किया गया है— *धर्म प्रोज्झित कैतवोऽत्र।* केवल नास्तिक ही सर्वशक्तिमान परम पिता को नहीं मानता। जो सर्वशक्तिमान परम पिता को स्वीकार करता है, वह उनके आदेशों का पालन करता है और धार्मिक व्यक्ति बन जाता है।

तबे महत्तत्त्व हैते त्रिविध अहङ्कार ।
याहा हैते देवतेन्द्रिय-भूतेर प्रचार ॥ २७६॥

तबे महत्तत्त्व हैते त्रिविध अहङ्कार ।
ग्राहा हैते देवतेन्द्रिय-भूतेर प्रचार ॥ २७६॥

तबे—फिर; **महत्-तत्त्व हैते**—सम्पूर्ण भौतिक शक्ति (महत् तत्त्व) से; **त्रि-विध**—तीन प्रकार के; **अहङ्कार**—अहंकार; **ग्राहा हैते**—जिससे; **देवता**—अधिष्ठाता देव; **इन्द्रिय**—इन्द्रियों के; **भूतेर**—तथा भौतिक तत्त्वों के; **प्रचार**—विस्तार।

अनुवाद

"सर्वप्रथम समग्र भौतिक शक्ति (महत् तत्त्व) प्रकट होती है, जिससे तीन प्रकार के अहंकार प्रकट होते हैं और ये ही वे मूल स्त्रोत हैं, जिनसे सभी देवता (नियन्त्रण करने वाले अधिष्ठाता), इन्द्रियाँ तथा भौतिक तत्त्व विस्तार करते हैं।

तात्पर्य

अहंकार तीन प्रकार के हैं— *वैकारिक, तैजस* तथा *तामस।* महत् तत्त्व तो हृदय अथवा चित्त के भीतर स्थित है—और महत् तत्त्व के अधिष्ठाता हैं भगवान् वासुदेव (*भागवत* ३.२६.२१)। महत् तत्त्व के तीन विभाग हो जाते हैं (१) *वैकारिक* (*सात्त्विक अहङ्कार*), जिससे ग्यारहवीं इन्द्रिय अर्थात् मन प्रकट होता है और जिसके अधिष्ठाता अनिरुद्ध हैं (*भागवत* ३.२६.२७-२८); (२) *तैजस* (*राजस अहङ्कार*) जिससे इन्द्रियाँ तथा बुद्धि प्रकट होते हैं और जिसके अधिष्ठाता प्रद्युम्न हैं (*भागवत* ३.२६.२९-३१); तथा (३) *तामस* जिससे शब्द ध्वनि (*शब्द तन्मात्र*) का विस्तार होता है। इस शब्द ध्वनि से *आकाश* प्रकट होता है और कान आदि इन्द्रियाँ भी प्रकट होती हैं (*भागवत* ३.२६-३२)। इन तीनों अहंकारों के अधिष्ठाता भगवान् संकर्षण हैं। तत्त्वज्ञान विषयक चर्चा *सांख्यकारिका* में बतलाया गया है— *सात्त्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकृताद् अहङ्कारात्— भूतादेस्तन्मात्रं तामस तैजसाद्युभयम्।*

সর্ব তত্ত্ব মিলি' সৃজিল ব্রহ্মাণ্ডের গণ ।
অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড, তার নাহিক গণন ॥২৭৭॥

सर्व तत्त्व मिलि' सृजिल ब्रह्माण्डेर गण ।
अनन्त ब्रह्माण्ड, तार नाहिक गणन ॥ २७७॥

सर्व तत्त्व—सभी भिन्न तत्त्व; **मिलि'**—मिलकर; **सृजिल**—रचना करते हैं; **ब्रह्माण्डेर गण**—सभी ब्रह्माण्ड; **अनन्त ब्रह्माण्ड**—वे ब्रह्माण्ड असंख्य हैं; **तार नाहिक गणन**—उनकी गिनती करना सम्भव नहीं है।

अनुवाद

"विभिन्न तत्त्वों को मिलाकर भगवान् ने सारे ब्रह्माण्डों का सृजन किया। इन ब्रह्माण्डों की संख्या अनन्त है, उन्हें गिन पाना सम्भव नहीं है।

ইঁহো মহত্স্রষ্টা পুরুষ—'মহা-বিষ্ণু' নাম ।
অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড তাঁর লোম-কূপে ধাম ॥২৭৮॥

इँहो महत्स्रष्टा पुरुष—'महा-विष्णु' नाम ।
अनन्त ब्रह्माण्ड ताँर लोम-कूपे धाम ॥ २७८॥

इँहो—वे; **महत्-स्रष्टा**—महत्-तत्त्व या सम्पूर्ण भौतिक शक्ति के सृष्टिकर्ता; **पुरुष**—पुरुष; **महा-विष्णु नाम**—भगवान् महाविष्णु नामक; **अनन्त**—असंख्य; **ब्रह्माण्ड**—ब्रह्माण्ड; **ताँर**—उनके शरीर के; **लोम-कूपे**—रोम-छिद्रों में; **धाम**—स्थित हैं।

अनुवाद

"भगवान् विष्णु का प्रथम रूप महाविष्णु कहलाता है। वे ही समग्र भौतिक शक्ति महत् तत्त्व के आदि स्त्रष्टा हैं। अनन्त ब्रह्माण्ड उनके शरीर के रोमकूपों से उत्पन्न होते हैं।

गवाक्षे उड़िया यैछे रेणु आसे याय ।
पुरुष-निश्वास-सह ब्रह्माण्ड बाहिराय ॥२७९॥
पुनरपि निश्वास-सह याय अभ्यन्तर ।
अनन्त ऐश्वर्य ताँर, सब——माया-पार ॥२८०॥

गवाक्षे उड़िया ग्रैछे रेणु आसे ग्राय ।
पुरुष-निश्वास-सह ब्रह्माण्ड बाहिराय ॥ २७९ ॥
पुनरपि निश्वास-सह ग्राय अभ्यन्तर ।
अनन्त ऐश्वर्य्य ताँर, सब——माया-पार ॥ २८० ॥

गवाक्षे—एक खिड़की के ऊपर के एक छिद्र से; **उड़िया**—उड़कर; **ग्रैछे**—जैसे; **रेणु**—अणु कण; **आसे ग्राय**—आते-जाते हैं; **पुरुष-निश्वास-सह**—महाविष्णु के श्वास के साथ; **ब्रह्माण्ड**—ब्रह्माण्ड; **बाहिराय**—बाहर आते हैं; **पुनरपि**—फिर; **निश्वास-सह**—श्वास के साथ; **ग्राय**—जाते हैं; **अभ्यन्तर**—अन्दर; **अनन्त**—असंख्य; **ऐश्वर्य्य**—ऐश्वर्य; **ताँर**—उनका; **सब**—सब कुछ; **माया-पार**—भौतिक धारणा से परे।

अनुवाद

"जब महाविष्णु श्वास छोड़ते हैं, तो ये सारे ब्रह्माण्ड उस वायु में तैरते माने जाते हैं। ये उन सूक्ष्म कणों की भाँति हैं, जो सूर्य-प्रकाश में तैरते हैं और परदे के छेदों से होकर आते-जाते रहते हैं। इस तरह ये सारे ब्रह्माण्ड महाविष्णु के उच्छ्वास से उत्पन्न होते हैं और जब महाविष्णु श्वास लेते हैं, तो वे सब पुनः उनके शरीर के भीतर चले जाते हैं। महाविष्णु का असीम ऐश्वर्य पूर्णतया भौतिक धारणा के परे है।

यस्यैक-निश्वसित-कालमथावलम्ब्य
जीवन्ति लोम-विल-जा जगदण्ड-नाथाः ।
विष्णुर्महान्स इह यस्य कला-विशेषो
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥२८१॥

यस्य—जिनके; **एक**—एक; **निश्वसित**—श्वास से; **कालम्**—समय; **अथ**—अतः; **अवलम्ब्य**—शरण लेकर; **जीवन्ति**—जीते हैं; **लोम-विल-जाः**—रोम-छिद्रों से उत्पन्न; **जगत्-अण्ड-नाथाः**—ब्रह्माण्डों के स्वामी (ब्रह्मागण); **विष्णुः महान्**—महाविष्णु; **सः**—वे; **इह**—यहाँ; **यस्य**—जिनके; **कला-विशेषः**—विशिष्ट पूर्ण अंश या विस्तार; **गोविन्दम्**—भगवान् गोविन्द की; **आदि-पुरुषम्**—आदि पुरुष की; **तम्**—उनकी; **अहम्**—मैं; **भजामि**—उपासना करता हूँ।

अनुवाद

"'सारे ब्रह्मा तथा भौतिक संसार के अन्य स्वामी महाविष्णु के रोमकूपों से प्रकट होते हैं और उनके एक निश्वास की अवधि तक जीवित रहते हैं। मैं उन आदि भगवान् गोविन्द की पूजा करता हूँ, क्योंकि महाविष्णु उनके पूर्ण अंश (स्वांश) के अंश हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *ब्रह्म-संहिता* (५.४८) का है। व्याख्या के लिए आदि लीला, अध्याय ५, श्लोक ७१ देखिए।

समस्त ब्रह्माण्ड-गणेर ईंहो अन्तर्यामी ।
कारणाब्धिशायी——सब जगतेर स्वामी ॥२८२॥

समस्त ब्रह्माण्ड-गणेर ईंहो अन्तर्यामी ।
कारणाब्धिशायी——सब जगतेर स्वामी ॥२८२॥

समस्त ब्रह्माण्ड-गणेर—सभी ब्रह्माण्डों के; **ईंहो**—भगवान् महाविष्णु; **अन्तर्यामी**—परमात्मा; **कारण-अब्धि-शायी**—भगवान् महाविष्णु, कारण समुद्र में लेटते हैं; **सब जगतेर**—सभी ब्रह्माण्डों के; **स्वामी**—परम भगवान्।

अनुवाद

"महाविष्णु सारे ब्रह्माण्डों के परमात्मा हैं। कारण सागर में शयन करने वाले वे सारे भौतिक जगतों के स्वामी हैं।

এইত কহিলুঁ প্রথম পুরুষের তত্ত্ব ।
দ্বিতীয় পুরুষের এবে শুনহ মহত্ত্ব ॥২৮৩॥

এइত কহিলুঁ প্রথম পুরুষের তত্ত্ব ।
দ্বিতীয় পুরুষের এবে শুনহ মহত্ত্ব ॥ ২৮৩ ॥

এइত—इस प्रकार; **কহিলুঁ**—मैंने वर्णन किया है; **প্রথম পুরুষের**—भगवान् के प्रथम अवतार का; **তত্ত্ব**—तत्त्व; **দ্বিতীয় পুরুষের**—भगवान् के दूसरे अवतार का; **এবে**—अब; **শুনহ**—सुनो; **মহত্ত্ব**—महिमा।

अनुवाद

"इस प्रकार मैंने प्रथम पुरुष, महाविष्णु की व्याख्या की है। अब मैं द्वितीय पुरुष की महिमा का वर्णन करूँगा।

সেই পুরুষ অনন্ত-কোটি ব্রহ্মাণ্ড সৃজিয়া ।
একৈক-মূর্ত্যে প্রবেশিলা বহু মূর্তি হঞা ॥২৮৪॥

সেই পুরুষ অনন্ত-কোটি ব্রহ্মাণ্ড সৃজিয়া ।
একৈক-মূর্ত্যে প্রবেশিলা বহু মূর্তি হঞা ॥ ২৮৪ ॥

সেই পুরুষ—वही परम भगवान्, महाविष्णु; **অনন্ত-কোটি ব্রহ্মাণ্ড**—लाखों-करोड़ों ब्रह्माण्डों की; **সৃজিয়া**—रचना करके; **এক-এক**—उनमें से प्रत्येक में; **মূর্ত্যে**—एक रूप में; **প্রবেশিলা**—प्रवेश कर गये; **বহু মূর্তি হঞা**—अनेक रूप होकर।

अनुवाद

"अनन्त ब्रह्माण्डों की सृष्टि करने के बाद महाविष्णु ने अपना विस्तार असंख्य रूपों में कर लिया और उनमें से हर एक में प्रवेश किया।

প্রবেশ করিয়া দেখে, সব——অন্ধকার ।
রহিতে নাহিক স্থান, করিলা বিচার ॥২৮৫॥

प्रवेश करिया देखे, सब—अन्धकार ।
रहिते नाहिक स्थान, करिला विचार ॥ २८५ ॥

प्रवेश करिया—प्रवेश करके; **देखे**—उन्होंने देखा; **सब**—सब जगह; **अन्धकार**—पूरा अँधेरा; **रहिते**—वहाँ रहने के लिए; **नाहिक स्थान**—कोई स्थान नहीं था; **करिला विचार**—तब उन्होंने विचार किया।

अनुवाद

"जब महाविष्णु अनन्त ब्रह्माण्डों में से हर एक में प्रविष्ट हो गये, तो उन्होंने देखा कि वहाँ चारों ओर अँधेरा ही अँधेरा है और रहने के लिए कोई स्थान नहीं है। अतः वे इस स्थिति पर विचार करने लगे।

নিজাঙ্গ-স্বেদ-জলে ব্রহ্মাণ্ডার্ধ ভরিল ।
সেই জলে শেষ-শয্যায় শয়ন করিল ॥ ২৮৬ ॥

নিজাঙ্গ-স্বেদ-জলে ব্রহ্মাণ্ডার্ধ ভরিল ।
সেই জলে শেষ-শয্যায় শয়ন করিল ॥ ২৮৬ ॥

নিজ-অঙ্গ—अपने शरीर से; **স্বেদ-জলে**—पसीने का जल निकालकर; **ব্রহ্মাণ্ড-অর্ধ**—आधे ब्रह्माण्ड को; **ভরিল**—भर दिया; **সেই জলে**—उस जल से; **শেষ-শয্যায়**—भगवान् शेष की शय्या पर; **শয়ন করিল**—लेट गये।

अनुवाद

"तब भगवान् ने अपने शरीर से पसीना उत्पन्न किया, जिसके जल से आधे ब्रह्माण्ड को भर दिया। तब वे उस जल में भगवान् शेष की शय्या पर लेट गये।

তাঁর নাভি-পদ্ম হৈতে উঠিল এক পদ্ম ।
সেই পদ্মে হইল ব্রহ্মার জন্ম-সদ্ম ॥ ২৮৭ ॥
তাঁর নাভি-পদ্ম হৈতে উঠিল এক পদ্ম ।
সেই পদ্মে হইল ব্রহ্মার জন্ম-সদ্ম ॥ ২৮৭ ॥

তাঁর নাভি-পদ্ম হৈতে—उनके नाभिकमल से; **উঠিল**—उत्पन्न हुआ; **এক**—एक; **পদ্ম**—कमल पुष्प; **সেই পদ্মে**—उस कमल पुष्प पर; **হইল**—हुआ; **ব্রহ্মার**—ब्रह्माजी का; **জন্ম-সদ্ম**—जन्म स्थान।

अनुवाद

"तब उन गर्भोदकशायी विष्णु की नाभि से एक कमल का फूल निकल आया और वही फूल ब्रह्मा का जन्मस्थान बना।

सेइ पद्म-नाले हइल चौद्द भुवन ।
तेँहो 'ब्रह्मा' हञा सृष्टि करिल सृजन ॥ २८८ ॥

सेइ पद्म-नाले हइल चौद्द भुवन ।
तेंहो 'ब्रह्मा' हञा सृष्टि करिल सृजन ॥ २८८ ॥

सेइ पद्म-नाले—उस कमल के डंठल में; **हइल**—उत्पन्न हुए; **चौद्द**—चौदह; **भुवन**—लोक; **तेंहो**—उन; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी ने; **हञा**—होकर; **सृष्टि**—भौतिक सृष्टि; **करिल सृजन**—रचना की।

अनुवाद

"उस कमल फूल के डंठल से चौदह लोक उत्पन्न हुए। तब वे ब्रह्मा बने और उन्होंने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना की।

'विष्णु'-रूप हञा करे जगत्पालने ।
गुणातीत विष्णु——स्पर्श नाहि माया-सने ॥ २८९ ॥

'विष्णु'-रूप हञा करे जगत्पालने ।
गुणातीत विष्णु——स्पर्श नाहि माया-सने ॥ २८९ ॥

विष्णु-रूप—विष्णु रूप में भगवान् कृष्ण; **हञा**—होकर; **करे**—करते हैं; **जगत् पालने**—भौतिक जगत् का पालन; **गुण-अतीत**—भौतिक गुणों से परे, दिव्य; **विष्णु**—भगवान् विष्णु; **स्पर्श**—स्पर्श करते; **नाहि**—नहीं; **माया-सने**—बब शक्ति माया के साथ।

अनुवाद

"इस प्रकार अपने विष्णु रूप से पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सम्पूर्ण भौतिक जगत् का पालन करते हैं। चूँकि वे सदैव भौतिक गुणों से परे हैं, अतः भौतिक प्रकृति (माया) कभी-भी उनका स्पर्श नहीं कर सकती।

तात्पर्य

जिस तरह माया ब्रह्मा तथा शिव का स्पर्श करती है, उस तरह वह विष्णु का स्पर्श नहीं कर सकती। इसीलिए कहा गया है कि भगवान् विष्णु भौतिक

गुणों से परे हैं। भौतिक गुणों के अवतार—ब्रह्माजी तथा शिवजी—बहिरंगा शक्ति (माया) के अन्तर्गत आते हैं। किन्तु भगवान् विष्णु अलग हैं। *ऋग्वेद* के मन्त्रों में कहा गया है—*ॐ तद् विष्णोः परमं पदम्* (*ऋग्वेद संहिता* १.२२.२०)। *परमं पदम्* शब्द सूचित करते हैं कि वे भौतिक गुणों से परे हैं। चूँकि भगवान् विष्णु भौतिक गुणों के अधिकार क्षेत्र के भीतर नहीं आते, अतएव वे उन जीवों से सदैव श्रेष्ठ हैं, जो भौतिक शक्ति (माया) द्वारा नियन्त्रित होते हैं। परम भगवान् तथा जीवों के बीच के अन्तरों में से यह एक है। ब्रह्माजी अत्यन्त शक्तिमान जीव हैं और शिवजी उनसे भी बढ़कर शक्तिशाली हैं। इसलिए शिवजी को जीव नहीं माना जाता, किन्तु साथ ही साथ उन्हें विष्णु के समान पद पर भी नहीं माना जाता।

'रुद्र'-रूप धरि करे जगत्संहार ।
सृष्टि, स्थिति, प्रलय हय इच्छाय याँहार ॥२९०॥

'रुद्र'-रूप धरि करे जगत्संहार ।
सृष्टि, स्थिति, प्रलय हय इच्छाय याँहार ॥ २९० ॥

रुद्र-रूप धरि—शिवजी का रूप स्वीकार करके; **करे**—करते हैं; **जगत् संहार**—ब्रह्माण्डों की सृष्टि का नाश; **सृष्टि**—सृजन; **स्थिति**—पालन; **प्रलय**—तथा विनाश; **हय**—होते हैं; **इच्छाय**—इच्छा से; **याँहार**—जिनकी।

अनुवाद

"वे अपने रुद्र (शिव) रूप में इस भौतिक जगत् का संहार करते हैं। दूसरे शब्दों में, उनकी इच्छा से ही सम्पूर्ण जगत् का सृजन, पालन और संहार होता है।

ब्रह्मा, विष्णु, शिव——ताँर गुण-अवतार ।
सृष्टि-स्थिति-प्रलयेर तिनेर अधिकार ॥२९१॥

ब्रह्मा, विष्णु, शिव——ताँर गुण-अवतार ।
सृष्टि-स्थिति-प्रलयेर तिनेर अधिकार ॥ २९१ ॥

ब्रह्मा—ब्रह्माजी; **विष्णु**—भगवान् विष्णु; **शिव**—शिवजी; **ताँर**—गर्भोदकशायी विष्णु

के; **गुण-अवतार**—भौतिक गुणों के अवतार; **सृष्टि-स्थिति-प्रलयेर**—सृष्टि, पालन, तथा प्रलय नामक तीनों कार्यों का; **तिनेर अधिकार**—तीनों देवों (ब्रह्माजी, भगवान् विष्णु तथा शिवजी) द्वारा नियंत्रण होता है।

अनुवाद

"ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव—ये तीनों उनके भौतिक गुणों के अवतार हैं। क्रमशः सृष्टि, पालन और संहार इन तीनों पुरुषों के अधिकार में है।

हिरण्यगर्भ-अन्तर्यामी—गर्भोदकशायी ।
'सहस्र-शीर्षादि' करि' वेदे याँरे गाइ ॥ २९२॥

हिरण्यगर्भ-अन्तर्यामी—गर्भोदकशायी ।
'सहस्र-शीर्षादि' करि' वेदे याँरे गाइ ॥ २९२॥

हिरण्यगर्भ—हिरण्यगर्भ नामक; **अन्तर्यामी**—परमात्मा; **गर्भ-उदक-शायी**—भगवान् गर्भोदकशायी विष्णु; **सहस्र-शीर्षा-आदि करि'**—सहस्र शीर्षा (ऋगवेद संहिता १०.९०.१) आदि वैदिक छंदों द्वारा; **वेदे याँरे गाइ**—वेद जिनकी स्तुति करते हैं।

अनुवाद

"गर्भोदकशायी विष्णु, जो कि इस ब्रह्माण्ड में हिरण्यगर्भ तथा अन्तर्यामी—अर्थात् परमात्मा के नाम से जाने जाते हैं, उनकी महिमा का गायन वेदों में 'सहस्रशीर्षा' शब्द से प्रारम्भ होने वाले स्तोत्र द्वारा किया जाता है।

एइ त' द्वितीय-पुरुष—ब्रह्माण्डेर ईश्वर ।
मायार 'आश्रय' हय, तबु माया-पार ॥२९३॥

एइ त' द्वितीय-पुरुष—ब्रह्माण्डेर ईश्वर ।
मायार 'आश्रय' हय, तबु माया-पार ॥ २९३॥

एइ त'—इस प्रकार; **द्वितीय-पुरुष**—द्वितीय भगवान्; **ब्रह्माण्डेर ईश्वर**—ब्रह्माण्डों के स्वामी; **मायार**—भौतिक बहिरंगा शक्ति के; **आश्रय हय**—आश्रय बनकर; **तबु**—फिर भी; **माया-पार**—भौतिक शक्ति के स्पर्श से परे हैं।

अनुवाद

"द्वितीय पुरुष गर्भोदकशायी विष्णु प्रत्येक ब्रह्माण्ड के स्वामी हैं

और बहिरंगा शक्ति (माया) के आश्रय हैं। तो भी वे माया के स्पर्श से परे रहते हैं।

তৃতীয়-পুরুষ বিষ্ণু——'গুণ-অবতার' ।
দুই অবতার-ভিতর গণনা তাঁহার ॥২৯৪॥
তৃতীয়-পুরুষ বিষ্ণু——'গুণ-অবতার' ।
দুই অবতার-ভিতর গণনা তাঁহার ॥ ২৯৪॥

তৃতীয়-পুরুষ—तीसरे पुरुष; **বিষ্ণু**—भगवान् विष्णु; **গুণ-অবতার**—सतोगुण के अवतार; **দুই অবতার-ভিতর**—दो अवतारों के बीच; **গণনা তাঁহার**—उनकी गिनती।

अनुवाद

"विष्णु के तृतीय अंश क्षीरोदकशायी विष्णु हैं, जो सत्त्वगुण के अवतार हैं। इनकी गणना दो प्रकार के अवतारों (पुरुष-अवतार तथा गुणावतार) में की जाती है।

বিরাট্‌ব্যষ্টি-জীবের তেঁহো অন্তর্যামী ।
ক্ষীরোদকশায়ী তেঁহো——পালন-কর্তা, স্বামী ॥২৯৫॥
বিরাট্‌ব্যষ্টি-জীবের তেঁহো অন্তর্যামী ।
ক্ষীরোদকশায়ী তেঁহো——পালন-কর্তা, স্বামী ॥ ২৯৫॥

বিরাট্—विराट् रूप; **ব্যষ্টি-জীবের**—अन्य जीवात्माओं के; **তেঁহো**—वे; **অন্তর্যামী**—परमात्मा; **ক্ষীর-উদক-শায়ী**—दूध के सागर में शयन करने वाले भगवान् विष्णु; **তেঁহো**—वे; **পালন-কর্তা**—पालन करने वाले; **স্বামী**—स्वामी।

अनुवाद

"ये क्षीरोदकशायी विष्णु भगवान् के विराट् रूप हैं और प्रत्येक जीव के भीतर के परमात्मा हैं। वे क्षीरोदकशायी कहलाते हैं, क्योंकि वे क्षीरसागर में शयन करते हैं। वे ब्रह्माण्ड के पालक तथा स्वामी हैं।

পুরুষাবতারের এই কৈলুঁ নিরূপণ ।
লীলাবতার এবে শুন, সনাতন ॥২৯৬॥

पुरुषावतारेर एइ कैलुँ निरूपण ।
लीलावतार एबे शुन, सनातन ॥ २९६॥

पुरुष-अवतारेर—सभी पुरुष अवतारों का; **एइ**—यह; **कैलुँ निरूपण**—मैंने वर्णन किया है; **लीला-अवतार**—लीला अवतारों का; **एबे**—अब; **शुन**—सुनो; **सनातन**—हे सनातन।

अनुवाद

"हे सनातन, मैं विष्णु के तीन पुरुष अवतारों का स्पष्ट वर्णन कर चुका हूँ। अब मुझसे लीलावतारों के विषय में सुनो।

लीलावतार कृष्णेर ना याय गणन ।
प्रधान करिया कहि दिग्दरशन ॥ २९७॥

लीलावतार कृष्णेर ना य्राय गणन ।
प्रधान करिया कहि दिग्दरशन ॥ २९७॥

लीला-अवतार—लीला अवतारों की; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **ना य्राय गणन**—गिनती नहीं की जा सकती; **प्रधान करिया**—मुख्यतः; **कहि**—मैं वर्णन करता हूँ; **दिक्-दरशन**—एक झलक द्वारा।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण के असंख्य लीलावतारों की गणना कोई भी नहीं कर सकता, किन्तु मैं मुख्य-मुख्य अवतारों का वर्णन करूँगा।

मत्स्य, कूर्म, रघुनाथ, नृसिंह, वामन ।
वराहादि—लेखा याँर ना याय गणन ॥२९८॥

मत्स्य, कूर्म, रघुनाथ, नृसिंह, वामन ।
वराहादि—लेखा य्राँर ना य्राय गणन ॥ २९८॥

मत्स्य—मत्स्य अवतार; **कूर्म**—कच्छप अवतार; **रघुनाथ**—भगवान् रामचन्द्र; **नृसिंह**—नृसिंह अवतार; **वामन**—वामन अवतार; **वराह-आदि**—वराह अवतार तथा अन्य; **लेखा**—वर्णन करते हुए; **य्राँर**—जिन अवतारों की; **ना य्राय गणन**—गिनती नहीं की जा सकती।

अनुवाद

"कुछ लीलावतार इस प्रकार हैं—मत्स्यावतार, कूर्मावतार, भगवान्

रामचन्द्र, भगवान् नृसिंह, भगवान् वामन तथा भगवान् वराह। इनका कोई अन्त नहीं है।

मत्स्याश्व-कच्छप-नृसिंह-वराह-हंस-
राजन्य-विप्र-विबुधेषु कृतावतारः ।
त्वं पासि नस्त्रि-भुवनं च तथाधुनेश
भारं भुवो हर यदूत्तम वन्दनं ते ॥२९९॥

मत्स्याश्व-कच्छप-नृसिंह-वराह-हंस-
राजन्य-विप्र-विबुधेषु कृतावतारः ।
त्वं पासि नस्त्रि-भुवनं च तथाधुनेश
भारं भुवो हर यदूत्तम वन्दनं ते ॥ २९९ ॥

मत्स्य—एक मछली के रूप में; **अश्व**—एक अश्व के रूप में; **कच्छप**—एक कछुए के रूप में; **नृसिंह**—भगवान् नृसिंह के रूप में; **वराह**—एक वराह के रूप में; **हंस**—एक हंस के रूप में; **राजन्य**—भगवान् रामचन्द्र के रूप में; **विप्र**—भगवान् परशुराम के रूप में; **विबुधेषु**—तथा भगवान् वामदेव के रूप में; **कृत-अवतारः**—जिन्होंने अवतार लिया है; **त्वम्**—आप; **पासि**—कृपया रक्षा करें; **नः**—हम देवताओं की; **त्रि-भुवनम् च**—तथा तीनों लोकों की; **तथा**—तथा; **अधुना**—अब; **ईश**—हे भगवान्; **भारम्**—भार; **भुवः**—सृष्टि के; **हर**—कृपया हर लीजिये; **यदु-उत्तम**—हे यदुकुल के श्रेष्ठ; **वन्दनम् ते**—हम आपकी वन्दना करते हैं।

अनुवाद

"'हे ब्रह्माण्ड के स्वामी, हे यदुकुल श्रेष्ठ, हम आपसे ब्रह्माण्ड के भारी भार को कम करने के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। आपने पूर्वकाल में मत्स्य, अश्व (हयग्रीव), कच्छप, सिंह (नृसिंह), शूकर (वराह) तथा हंस के रूप में भी अवतरित होकर इस भार को कम किया है। आप भगवान् रामचन्द्र, परशुराम तथा वामन के रूप में भी अवतरित हुए हैं। आपने सदैव इस तरह से हम देवताओं तथा ब्रह्माण्ड की रक्षा की है। कृपया अब भी वैसा ही करते रहें।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१०.२.४०) का है।

লীলাবতারের কৈলুঁ দিগ্দরশন ।
গুণাবতারের এবে শুন বিবরণ ॥৩০০॥

लीलावतारेर कैलुँ दिग्दरशन ।
गुणावतारेर एबे शुन विवरण ॥ ३००॥

लीला-अवतारेर—लीला अवतारों का; **कैलुँ**—मैंने किया है; **दिक्-दरशन**—संकेत मात्र; **गुण-अवतारेर**—भौतिक गुणों के अवतारों का; **एबे**—अब; **शुन विवरण**—वर्णन सुनो।

अनुवाद

"मैंने लीलावतारों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। अब मैं गुणावतारों का वर्णन करूँगा। कृपया सुनें।

ব্রহ্মা, বিষ্ণু, শিব,—তিন গুণ অবতার ।
ত্রি-গুণ অঙ্গীকরি' করে সৃষ্ট্যাদি-ব্যবহার ॥৩০১॥

ब्रह्मा, विष्णु, शिव,—तिन गुण अवतार ।
त्रि-गुण अङ्गीकरि' करे सृष्ट्यादि-व्यवहार ॥ ३०१॥

ब्रह्मा, विष्णु, शिव—ब्रह्माजी, विष्णु तथा शिव; **तिन**—तीनों; **गुण अवतार**—भौतिक गुणों के अवतार; **त्रि-गुण**—भौतिक प्रकृति के तीन गुण; **अङ्गीकरि'**—स्वीकार; **करे**—करते हैं; **सृष्टि-आदि-व्यवहार**—सृष्टि, पालन तथा विनाश कार्यों के लिए।

अनुवाद

"इस भौतिक जगत् में तीन प्रकार के कार्य हैं। इसमें हर वस्तु उत्पन्न होती है, वह कुछ काल तक रहती है और अन्त में नष्ट हो जाती है। अतएव भगवान् तीनों गुणों—सतो, रजो तथा तमो गुणों के नियन्ता के रूप में अवतरित होते हैं और इस तरह इस भौतिक जगत् का व्यवहार चलता रहता है।

ভক্তি-মিশ্র-কৃত-পুণ্যে কোন জীবোত্তম ।
রজো-গুণে বিভাবিত করি' তাঁর মন ॥৩০২॥

भक्ति-मिश्र-कृत-पुण्ये कोन जीवोत्तम ।
रजो-गुणे विभावित करि' ताँर मन ॥ ३०२॥

भक्ति-मिश्र-कृत-पुण्ये—भक्ति से मिश्रित पुण्य कर्मों के कारण; **कोन**—कोई; **जीव-उत्तम**—उत्तम जीव; **रजः-गुणे**—रजोगुण द्वारा; **विभावित**—प्रभावित; **करि'**—करता है; **ताँर**—उसका; **मन**—मन।

अनुवाद

"भक्ति-मिश्रित पूर्व पुण्यकर्मों के फलस्वरूप उत्तम जीव अपने चित्त में रजोगुण से प्रभावित होता है।

गर्भोदकशायि-द्वारा शक्ति सञ्चारि' ।
व्यष्टि सृष्टि करे कृष्ण ब्रह्मा-रूप धरि' ॥ ३०३ ॥

गर्भोदकशायि-द्वारा शक्ति सञ्चारि' ।
व्यष्टि सृष्टि करे कृष्ण ब्रह्मा-रूप धरि' ॥ ३०३ ॥

गर्भ-उदक-शायि-द्वारा—भगवान् गर्भोदकशायी विष्णु द्वारा; **शक्ति सञ्चारि'**—उसे विशेष शक्ति देकर; **व्यष्टि**—सम्पूर्ण; **सृष्टि**—सृष्टि; **करे**—करते हैं; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **ब्रह्मा-रूप धरि'**—ब्रह्माजी का रूप लेकर।

अनुवाद

"ऐसे भक्त को गर्भोदकशायी विष्णु शक्ति प्रदान करते हैं। इस तरह ब्रह्मा के रूप में कृष्ण का अवतार, पूरे ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण रचना करता है।

तात्पर्य

भगवान् विष्णु के पुरुष अवतार, गर्भोदकशायी विष्णु, भौतिक गुणों—सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण का स्वीकार करते हैं और भगवान् विष्णु, ब्रह्मा तथा शिव के रूप में अवतार लेते हैं। ये भौतिक गुणों के अवतार हैं। पुण्यकर्मों से तथा भक्ति से युक्त अनेक उत्तम जीवों में से ब्रह्मा कहलाने वाला एक जीव गर्भोदकशायी विष्णु की इच्छा से रजोगुण से प्रभावित होता है। इस तरह ब्रह्माजी भगवान् की सर्जक शक्ति के अवतार बनते हैं।

भास्वान् यथाश्म-सकलेषु निजेषु तेजः
स्वीयं किय्त्प्रकटयत्यपि तद्वदत्र ।

ব্রহ্মা য এষ জগদণ্ড-বিধান-কর্তা
গোবিন্দমাদি-পুরুষং তমহং ভজামি ॥৩০৪॥

भास्वान् यथाश्म-सकलेषु निजेषु तेजः
स्वीयं कियत्प्रकटयत्यपि तद्वदत्र ।
ब्रह्मा य एष जगदण्ड-विधान-कर्ता
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ३०४॥

भास्वान्—प्रज्वलित सूर्य; **यथा**—जिस प्रकार; **अश्म-सकलेषु**—विभिन्न मूल्यवान रत्नों में; **निजेषु**—अपने; **तेजः**—तेज; **स्वीयम्**—अपना; **कियत्**—कुछ मात्रा में; **प्रकटयति**—प्रकट करता है; **अपि**—भी; **तद्वत्**—इसी प्रकार; **अत्र**—यहाँ; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी; **यः**—जो हैं; **एषः**—भगवान्; **जगत्-अण्ड-विधान-कर्ता**—ब्रह्माण्ड के प्रधान बन जाते हैं; **गोविन्दम् आदि-पुरुषम्**—गोविन्द, आदि पुरुष की; **तम्**—उनकी; **अहम्**—मैं; **भजामि**—भक्ति करता हूँ।

अनुवाद

"'सूर्य अपना तेज रत्न में प्रकट करता है, यद्यपि रत्न पत्थर होता है। इसी प्रकार भगवान् गोविन्द पुण्यात्मा जीव में अपनी विशेष शक्ति प्रकट करते हैं। इस तरह वह जीव ब्रह्मा बनता है और ब्रह्माण्ड के कार्य को सँभालता है। मैं उन आदि भगवान् गोविन्द की पूजा करता हूँ।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *ब्रह्म-संहिता* (५.४९) का है।

কোন কল্পে যদি যোগ্য জীব নাহি পায় ।
আপনে ঈশ্বর তবে অংশে 'ব্রহ্মা' হয় ॥৩০৫॥

कोन कल्पे यदि योग्य जीव नाहि पाय ।
आपने ईश्वर तबे अंशे 'ब्रह्मा' हय ॥ ३०५॥

कोन कल्पे—किसी ब्रह्मा के जीवन काल में; **यदि**—यदि; **योग्य**—उचित; **जीव**—जीवात्मा; **नाहि**—नहीं; **पाय**—मिलता; **आपने**—स्वयं; **ईश्वर**—परम भगवान्; **तबे**—तब; **अंशे**—अपने पूर्ण अंश द्वारा; **ब्रह्मा हय**—ब्रह्मा बन जाते हैं।

अनुवाद

"यदि किसी एक कल्प में उपयुक्त जीव ब्रह्मा का पद-भार सँभालने

के लिए उपलब्ध नहीं होता, तो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् स्वयं अपना विस्तार करके ब्रह्मा बन जाते हैं।

तात्पर्य

ब्रह्मा के एक दिन में एक हजार चतुर्युग अर्थात् ४,३२,००,००,००० सौर वर्ष होते हैं और इतने ही वर्षों की रात होती है। ब्रह्मा के जीवन का एक वर्ष ३६० ऐसे दिनों तथा रातों का होता है और ब्रह्मा ऐसे १०० वर्षों तक जीवित रहते हैं। ब्रह्मा का जीवन ऐसा होता है।

यस्याङ्घ्रि-पङ्कज-रजोऽखिल-लोक-पालैर्
मौल्युत्तमैर्धृतमुपासित-तीर्थ-तीर्थम् ।
ब्रह्मा भवोऽहमपि यस्य कलाः कलायाः
श्रीश्चोद्वहेम चिरमस्य नृपासनं क्व ॥ ३०६ ॥

यस्याङ्घ्रि-पङ्कज-रजोऽखिल-लोक-पालैर्
मौल्युत्तमैर्धृतमुपासित-तीर्थ-तीर्थम् ।
ब्रह्मा भवोऽहमपि यस्य कलाः कलायाः
श्रीश्चोद्वहेम चिरमस्य नृपासनं क्व ॥ ३०६ ॥

यस्य—जिनके; **अङ्घ्रि-पङ्कज**—चरणकमलों की; **रजः**—धूलि; **अखिल-लोक**—ब्रह्माण्ड के समस्त लोकों के; **पालैः**—पालकों द्वारा; **मौलि-उत्तमैः**—जिनके सिरों पर मूल्यवान मुकुट होते हैं; **धृतम्**—स्वीकार की जाती हैं; **उपासित**—पूजित होती है; **तीर्थ-तीर्थम्**—तीर्थस्थानों को पवित्र करने वाली; **ब्रह्मा**—ब्रह्माजी; **भवः**—शिवजी; **अहम् अपि**—मैं भी; **यस्य**—जिनकी; **कलाः**—अंश; **कलायाः**—अंश का; **श्रीः**—लक्ष्मी देवी; **च**—भी; **उद्वहेम**—हम धारण करते हैं; **चिरम्**—नित्य; **अस्य**—इनके; **नृप-आसनम्**—सिंहासन को; **क्व**—कहाँ।

अनुवाद

'"भगवान् कृष्ण के लिए सिंहासन का क्या मूल्य है? उनके चरणकमलों की धूलि को विभिन्न लोकों के स्वामी अपने मुकुट-युक्त सिरों पर धारण करते हैं। वह धूलि तीर्थस्थानों को पवित्र बनाती है और कृष्ण के स्वांश के अंशरूप, ब्रह्मा, शिव, लक्ष्मी तथा मैं स्वयं, उस धूलि को नित्य अपने सिरों पर धारण करते हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.६८.३७) का है। जब कौरव श्री बलदेव से चिकनी-चुपड़ी बातें करके उन्हें अपनी ओर मिलाना चाह रहे थे और श्रीकृष्ण के विषय में भला-बुरा कह रहे थे, तब भगवान् बलदेव नाराज हो गये थे और उन्होंने यह श्लोक कहा था।

निजाংশ-কলায় কৃষ্ণ তমো-গুণ অঙ্গীকরি' ।
সংহারার্থে মায়া-সঙ্গে রুদ্র-রূপ ধরি ॥৩০৭॥

निजांश-कलाय कृष्ण तमो-गुण अङ्गीकरि' ।
संहारार्थे माया-सङ्गे रुद्र-रूप धरि ॥ ३०७॥

निज-अंश—अपने पूर्ण विस्तार के; **कलाय**—कला नामक विस्तार द्वारा; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **तमः-गुण**—तमोगुण; **अङ्गीकरि'**—स्वीकार करके; **संहार-अर्थे**—प्रलय के उद्देश्य से; **माया-सङ्गे**—बहिरंगा शक्ति के साथ मिलकर; **रुद्र-रूप**—रूद्र का रूप; **धरि**—ग्रहण करते हैं।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण अपने एक पूर्ण अंश का विस्तार करते हैं और तमोगुण को स्वीकार करते हुए इस जगत् का संहार करने के लिए रुद्र-रूप धारण करते हैं।

तात्पर्य

यह रुद्र-रूप का वर्णन है, जो कृष्ण का अन्य विस्तार है। केवल *विष्णु-मूर्तियाँ* ही कृष्ण के स्वांश एवं कलाएँ हैं। महाविष्णु, जो कारण सागर में शयन करते हैं, वे संकर्षण के विस्तार हैं। जब गर्भोदकशायी विष्णु विराट् जगत् का संहार करने के लिए भौतिक प्रकृति के गुणों को स्वीकार करते हैं, तब उनका रूप रुद्र कहलाता है। जैसाकि पहले कहा जा चुका है, भगवान् विष्णु माया के नियन्ता हैं। तो फिर भला वे माया का संग कैसे कर सकते हैं? निष्कर्ष यह है कि शिवजी या ब्रह्माजी का अवतार विष्णु की परम शक्ति की अनुपस्थिति का सूचक है। जब परम शक्ति नहीं रहती, तो बहिरंगा शक्ति माया का संग सम्भव हो जाता है। ब्रह्माजी तथा शिवजी को माया की ही सृष्टियाँ माना जाता है।

মায়া-সঙ্গ-বিকারী রুদ্র——ভিন্নাভিন্ন রূপ ।
জীব-তত্ত্ব নহে, নহে কৃষ্ণের 'স্বরূপ' ॥৩০৮॥

माया-सङ्ग-विकारी रुद्र——भिन्नाभिन्न रूप ।
जीव-तत्त्व नहे, नहे कृष्णेर 'स्वरूप' ॥ ३०८ ॥

माया-सङ्ग—माया के संग द्वारा; **विकारी**—विकृत; **रुद्र**—रूद्र का रूप; **भिन्न-अभिन्न रूप**—विभिन्न प्रकार के रूप; **जीव-तत्त्व नहे**—फिर भी वे जीव तत्त्व नहीं कहलाते; **नहे**—नहीं; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **स्वरूप**—स्वरूप (विस्तार)।

अनुवाद

"रुद्र, शिवजी के विविध रूप हैं, जो माया की संगति से उत्पन्न रूपान्तर हैं। यद्यपि रुद्र जीव-तत्त्व नहीं हैं, फिर भी उन्हें कृष्ण का स्वांश नहीं माना जा सकता।

तात्पर्य

रुद्र एक ही साथ *विष्णु-तत्त्व* से अभिन्न तथा भिन्न हैं। उनकी माया की संगति के कारण वे विष्णु-तत्त्व से भिन्न हैं, किन्तु साथ ही साथ वे कृष्ण के विस्तार हैं। यह स्थिति *भेदाभेद-तत्त्व* या *अचिन्त्य भेदाभेद-तत्त्व* अर्थात् एक साथ भिन्न तथा अभिन्न होना कहलाती है।

দুগ্ধ যেন অম্ল-যোগে দধি-রূপ ধরে ।
দুগ্ধান্তর বস্তু নহে, দুগ্ধ হৈতে নারে ॥৩০৯॥

दुग्ध ग्रेन अम्ल-ग्रोगे दधि-रूप धरे ।
दुग्धान्तर वस्तु नहे, दुग्ध हैते नारे ॥ ३०९ ॥

दुग्ध—दूध; **ग्रेन**—जिस प्रकार; **अम्ल-ग्रोगे**—खट्टा पदार्थ मिलाने से; **दधि-रूप**—दही का रूप; **धरे**—लेता है; **दुग्ध-अन्तर**—दूध से कुछ अलग; **वस्तु**—वस्तु; **नहे**—नहीं होता; **दुग्ध**—दूध; **हैते**—से; **नारे**—नहीं होता।

अनुवाद

"जब दूध में जामन डाल दिया जाता है, तो वह दही में परिवर्तित हो जाता है। इस तरह दही दूध ही है, किन्तु फिर भी वह दूध नहीं है।

तात्पर्य

ब्रह्माण्ड के सृजन, पालन तथा संहार के अधीक्षक तीन देवों में से भगवान्

विष्णु कभी भी आदि विष्णु से भिन्न नहीं होते। किन्तु ब्रह्मा तथा शिव माया के उनके सान्निध्य के कारण विष्णु से भिन्न हैं। विष्णु को किसी भौतिक शक्ति में रूपान्तरित नहीं किये जा सकते। जब भी कोई पुरुष माया की संगति में होता है, तो वह भगवान् विष्णु से भिन्न होता है। इसलिए शिवजी तथा ब्रह्माजी *गुणावतार* कहलाते हैं, क्योंकि वे भौतिक गुणों का संग करते हैं। निष्कर्ष यह है कि रुद्र विष्णु के रूपान्तर हैं, किन्तु एकदम विष्णु नहीं हैं। अतएव उनकी गणना *विष्णु तत्त्वों* में नहीं की जाती। इस तरह वे अचिन्त्य रूप से विष्णु से अभिन्न हैं और भिन्न भी हैं। इस श्लोक में दिया गया दृष्टान्त अत्यन्त स्पष्ट है। दूध की उपमा विष्णु से दी गई है। ज्योंही दूध किसी खट्टी वस्तु के सम्पर्क में आता है, वह दही बन जाता है, अर्थात् शिव बन जाता है। इस तरह दही वैधानिक रूप से दूध ही होता है, फिर भी वह दूध का स्थान नहीं ले सकता।

क्षीरं यथा दधि विकार-विशेष-योगात्
सञ्जायते न हि ततः पृथगस्ति हेतोः ।
यः शम्भुतामपि तथा समुपैति कार्यात्
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ३१० ॥

क्षीरं यथा दधि विकार-विशेष-योगात्
सञ्जायते न हि ततः पृथगस्ति हेतोः ।
यः शम्भुतामपि तथा समुपैति कार्यात्
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ३१० ॥

क्षीरम्—दूध; **यथा**—जिस प्रकार; **दधि**—दही; **विकार-विशेष**—जामन (खट्टे) आदि विशेष विकार से; **योगात्**—मिलने पर; **सञ्जायते**—बदल जाता है; **न**—नहीं; **हि**—अवश्य; **ततः**—उससे (दूध से); **पृथक्**—अलग; **अस्ति**—है; **हेतोः**—कारण; **यः**—जो; **शम्भुताम्**—शिवजी के स्वभाव को; **अपि**—तथापि; **तथा**—जैसे; **समुपैति**—स्वीकार करते हैं; **कार्यात्**—कुछ विशेष उद्देश्य से; **गोविन्दम्**—भगवान् गोविन्द को; **आदि-पुरुषम्**—आदि पुरुष को; **तम्**—उन; **अहम्**—मैं; **भजामि**—सादर प्रणाम करता हूँ।

अनुवाद

"'जामन मिलाने से दूध दही में बदल जाता है, किन्तु वास्तव में वैधानिक दृष्टि से वह दूध के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। इसी तरह पूर्ण

पुरुषोत्तम भगवान् गोविन्द भौतिक व्यवहार हेतु शिव (शम्भु) का रूप धारण करते हैं। मैं उन भगवान् के चरणकमलों की वन्दना करता हूँ।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *ब्रह्म-संहिता* (५.४५) का है।

'শিব'——মায়া-শক্তি-সঙ্গী, তমো-গুণাবেশ ।
মায়াতীত, গুণাতীত 'বিষ্ণু'——পরমেশ ॥৩১১॥

'शिव'——माया-शक्ति-सङ्गी, तमो-गुणावेश ।
मायातीत, गुणातीत 'विष्णु'——परमेश ॥ ३११ ॥

शिव—शिवजी; **माया-शक्ति-सङ्गी**—बहिरंगा शक्ति के संगी; **तमः-गुण-आवेश**—तमोगुण में डूबे हुए; **माया-अतीत**—बहिरंगा शक्ति से परे; **गुण-अतीत**—भौतिक गुणों से परे; **विष्णु**—विष्णु; **परम-ईश**—परम भगवान्।

अनुवाद

"शिवजी माया के संगी हैं, इसलिए वे तमोगुण में डूबे रहते हैं। किन्तु भगवान् विष्णु माया से तथा माया के गुणों से परे हैं। इसलिए वे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं।

तात्पर्य

विष्णु इस भौतिक जगत् की परिधि से परे हैं और माया के वशीभूत नहीं हैं। वे परम स्वतन्त्र भगवान् हैं। इसे शंकराचार्य तक ने स्वीकार किया है—*नारायणः परोऽव्यक्तात्* (*गीता-भाष्य*)। शिवजी अपने वैधानिक रूप में *महाभागवत* हैं, अर्थात् भगवान् के सर्वोच्च भक्त हैं, किन्तु चूँकि वे माया का संग, विशेषतया तमोगुण को स्वीकार करते हैं, अतएव वे माया के प्रभाव से मुक्त नहीं होते। किन्तु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु में ऐसी घनिष्ठ संगति नहीं देखी जाती। शिवजी माया को स्वीकार करते हैं, किन्तु भगवान् विष्णु की उपस्थिति में माया विद्यमान नहीं रहती। फलस्वरूप शिव को माया के उत्पाद माने जाते हैं। जब शिवजी माया के प्रभाव से मुक्त हो जाते हैं, तब वे महाभागवत की स्थिति में रहते हैं। *वैष्णवानां यथा शम्भुः।*

शिवः शक्ति-युक्तः शश्वत्त्रि-लिङ्गो गुण-संवृतः ।
वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेत्यहं त्रिधा ॥३१२॥

शिवः शक्ति-युक्तः शश्वत् त्रि -लिङ्गो गुण-संवृतः ।
वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेत्यहं त्रिधा ॥३१२॥

शिवः—शिवजी; **शक्ति-युक्तः**—भौतिक प्रकृति से युक्त; **शश्वत्**—नित्य रूप से; **त्रि-लिङ्गः**—तीन रूपों में; **गुण-संवृतः**—प्रकृति के गुणों द्वारा आवृत; **वैकारिकः**—*वैकारिक* नामक; **तैजसः च**—*तैजस* नामक; **तामसः च**—तथा *तामस* नामक; **इति**—ये; **अहम्**—अहंकार; **त्रि-धा**—तीन प्रकार के।

अनुवाद

"'शिवजी के विषय में सच बात तो यह है कि वे सदैव तीन भौतिक आवरणों—वैकारिक, तैजस तथा तामस—से आवृत रहते हैं। भौतिक प्रकृति के इन तीनों गुणों के कारण वे बहिरंगा शक्ति माया तथा अहंकार का सदैव संग करते हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१०.८८.३) का है।

हरिर्हि निर्गुणः साक्षात्पूरुषः प्रकृतेः परः ।
स सर्व-दृगुपद्रष्टा तं भजन्निर्गुणो भवेत् ॥३१३॥

हरिः हि निर्गुणः साक्षात्पुरुषः प्रकृतेः परः ।
स सर्व-दृगुपद्रष्टा तं भजन्निर्गुणो भवेत् ॥३१३॥

हरिः—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु; **हि**—निश्चित रूप से; **निर्गुणः**—सभी भौतिक गुणों से परे; **साक्षात्**—प्रत्यक्ष; **पुरुषः**—परम भोक्ता; **प्रकृतेः**—भौतिक प्रकृति; **परः**—परे; **सः**—वे; **सर्व-दृक्**—सब कुछ देखने वाले; **उपद्रष्टा**—सबको देखने वाले; **तम्**—उनकी; **भजन्**—सेवा द्वारा; **निर्गुणः**—भौतिक गुणों से परे; **भवेत्**—बन जाता है।

अनुवाद

"'श्री हरि अर्थात् पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् भौतिक प्रकृति की पहुँच के बाहर स्थित हैं, अतएव वे दिव्य परम पुरुष हैं। वे सारी वस्तुओं के बाहर और भीतर देख सकते हैं, अतएव वे सभी जीवों के परम द्रष्टा हैं। जो

व्यक्ति उनके चरणकमलों की शरण में जाता है और उनकी पूजा करता है, उसे भी दिव्य पद प्राप्त होता है।'

तात्पर्य

यह उद्धरण भी *श्रीमद्भागवत* (१०.८८.५) का है।

पालनार्थ स्वांश विष्णु-रूपे अवतार ।
सत्व-गुण द्रष्टा, ताते गुण-माया-पार ॥३१४॥

पालनार्थ स्वांश विष्णु-रूपे अवतार ।
सत्त्व-गुण द्रष्टा, ताते गुण-माया-पार ॥ ३१४॥

पालन-अर्थ—पालन करने के लिए; **स्वांश**—अपने पूर्ण विस्तार; **विष्णु-रूपे**—भगवान् विष्णु के रूप में; **अवतार**—अवतार; **सत्त्व-गुण**—सत्त्वगुण के; **द्रष्टा**—निर्देशक; **ताते**—इसलिए; **गुण-माया-पार**—भौतिक प्रकृति के गुणों से परे।

अनुवाद

"ब्रह्माण्ड का पालन करने हेतु भगवान् कृष्ण अपने स्वांश विष्णु रूप में अवतरित होते हैं। वे सतोगुण के निर्देशक हैं, अतएव वे भौतिक शक्ति से परे हैं।

स्वरूप—ऐश्वर्य-पूर्ण, कृष्ण-सम प्राय ।
कृष्ण अंशी, तेँहो अंश, वेदे हेन गाय ॥३१५॥

स्वरूप—ऐश्वर्य-पूर्ण, कृष्ण-सम प्राय ।
कृष्ण अंशी, तेंहो अंश, वेदे हेन गाय ॥ ३१५॥

स्वरूप—स्वरूप; **ऐश्वर्य-पूर्ण**—सर्व ऐश्वर्यों से पूर्ण; **कृष्ण-सम**—कृष्ण के समान; **प्राय**—लगभग; **कृष्ण अंशी**—कृष्ण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं; **तेंहो**—वे, भगवान् विष्णु; **अंश**—अंश विस्तार; **वेदे**—वेद; **हेन**—ऐसा; **गाय**—गाते हैं।

अनुवाद

"भगवान् विष्णु स्वांश श्रेणी में आते हैं, क्योंकि उनमें कृष्ण जैसे ही ऐश्वर्य होते हैं। कृष्ण आदि पुरुष हैं और भगवान् विष्णु उनके स्वांश हैं। समस्त वेदों का यही मत है।

तात्पर्य

भौतिक शक्ति के अवतार होने पर भी ब्रह्माजी रजोगुण के अधीक्षक हैं। इसी प्रकार यद्यपि शिवजी भगवान् कृष्ण से अभिन्न तथा भिन्न हैं, फिर भी वे तमोगुण के अवतार हैं। किन्तु भगवान् विष्णु कृष्ण के स्वांश (निजी विस्तार) हैं, अतएव वे सत्त्वगुण के अधीक्षक हैं और सदैव दिव्य रूप से अवस्थित रहते हैं और भौतिक प्रकृति के गुणों के अधिकार क्षेत्र के बाहर रहते हैं। भगवान् विष्णु कृष्ण के आदि स्वांश विस्तार हैं और कृष्ण समस्त अवतारों के मूल स्रोत हैं। जहाँ तक शक्ति का सम्बन्ध है, भगवान् विष्णु भगवान् कृष्ण के ही समान शक्तिशाली हैं, क्योंकि उनमें सारे ऐश्वर्य होते हैं।

दीपार्चिरेव हि दशान्तरमभ्युपेत्य
दीपायते विवृत-हेतु-समान-धर्मा ।
यस्तादृगेव हि च विष्णुतया विभाति
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥३१६॥

दीपार्चिरेव हि दशान्तरमभ्युपेत्य
दीपायते विवृत-हेतु-समान-धर्मा ।
यस्तादृगेव हि च विष्णुतया विभाति
गोविन्दमादि-पुरुषं तमहं भजामि ॥ ३१६ ॥

दीप-अर्चिः—दीपक की लौ; **एव**—जैसे; **हि**—अवश्य; **दशा-अन्तरम्**—दूसरा दीप; **अभ्युपेत्य**—विस्तार करके; **दीपायते**—आलोकित करता है; **विवृत-हेतु**—अपने विस्तारित कारण के साथ; **समान-धर्मा**—उतना ही प्रभावशाली; **यः**—जो; **तादृक्**—उसी प्रकार; **एव**—अवश्य; **हि**—ही; **च**—भी; **विष्णुतया**—भगवान् विष्णु के रूप द्वारा; **विभाति**—आलोकित करते हैं; **गोविन्दम्**—भगवान् कृष्ण को; **आदि-पुरुषम्**—आदि पुरुष को; **तम्**—उन; **अहम्**—मैं; **भजामि**—भजता हूँ।

अनुवाद

"'जब एक दीपक अपनी लौ का विस्तार दूसरे दीपक में करता है, और फिर उसे भिन्न स्थान में रख दिया जाता है, तब वह अलग से जलता है और इसका प्रकाश मूल दीपक जैसा ही शक्तिमान होता है। इसी तरह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् गोविन्द अपना विस्तार विभिन्न विष्णु रूपों में

करते हैं, जो समान रूप से प्रकाशमान, शक्तिमान तथा ऐश्वर्यवान होते हैं। मैं उन पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् गोविन्द की पूजा करता हूँ।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *ब्रह्म-संहिता* (५.४६) से लिया गया है।

ब्रह्मा, शिव——आज्ञा-कारी भक्त-अवतार ।
पालनार्थे विष्णु——कृष्णेर स्वरूप-आकार ॥ ३१७॥

ब्रह्मा, शिव——आज्ञा-कारी भक्त-अवतार ।
पालनार्थे विष्णु——कृष्णेर स्वरूप-आकार ॥ ३१७॥

ब्रह्मा—ब्रह्माजी; **शिव**—शिवजी; **आज्ञा-कारी**—आदेश पालन करने वाले; **भक्त-अवतार**—भक्तों के अवतार; **पालन-अर्थे**—पालन करने के लिए; **विष्णु**—भगवान् विष्णु; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **स्वरूप-आकार**—स्वरूप के ही प्रतिरूप हैं।

अनुवाद

"निष्कर्ष यह है कि ब्रह्माजी तथा शिवजी भक्त अवतार हैं, जो आदेशों का पालन करते हैं। किन्तु भगवान् विष्णु पालक हैं और वे भगवान् कृष्ण के निजी स्वरूप हैं।

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः ।
विश्वं पुरुष-रूपेण परिपाति त्रि-शक्ति-धृक् ॥ ३१८॥

सृजामि तन्नियुक्तोऽहं हरो हरति तद्वशः ।
विश्वं पुरुष-रूपेण परिपाति त्रि-शक्ति-धृक् ॥ ३१८॥

सृजामि—रचना करता हूँ; **तत्-नियुक्तः**—उनके द्वारा नियुक्त किया हुआ; **अहम्**—मैं; **हरः**—शिवजी; **हरति**—विनाश करते हैं; **तत्-वशः**—उनके नियन्त्रण में; **विश्वम्**—सम्पूर्ण विश्व को; **पुरुष-रूपेण**—भगवान् विष्णु के रूप में; **परिपाति**—पालन करते हैं; **त्रि-शक्ति-धृक्**—भौतिक प्रकृति के तीन गुणों के स्वामी।

अनुवाद

"[ब्रह्माजी ने कहा :] 'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने मुझे सृजन करने के लिए नियुक्त किया है। शिवजी उनके आदेशों का पालन करते हुए हर वस्तु का संहार करते हैं। क्षीरोदकशायी विष्णु के रूप में पूर्ण पुरुषोत्तम

भगवान् प्रकृति के सारे कार्यों को चलाते हैं। इस तरह भौतिक प्रकृति के तीनों गुणों के अधीक्षक भगवान् विष्णु हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (२.६.३२) का है। यह जानकारी ब्रह्मा ने देवर्षि नारद को तब दी थी, जब वे ब्रह्माजी से परमात्मा के विषय में ज्ञान प्राप्त कर रहे थे। भगवान् के विराट् रूप का वर्णन करने के बाद ब्रह्माजी ने बतलाया कि उनका पद तथा शिवजी का पद भगवान् विष्णु के नियन्त्रण में है।

মন্বন্তরাবতার এবে শুন, সনাতন ।
অসঙ্খ্য গণন তাঁর, শুনহ কারণ ॥৩১৯॥

मन्वन्तरावतार एबे शुन, सनातन ।
असङ्ख्य गणन ताँर, शुनह कारण ॥ ३१९॥

मनु-अन्तर-अवतार—प्रत्येक मनु के राज में प्रकट होने वाले अवतार; **एबे**—अब; **शुन**—सुनो; **सनातन**—हे सनातन गोस्वामी; **असङ्ख्य**—अनन्त; **गणन**—गिनती; **ताँर**—उनकी; **शुनह**—जरा सुनो; **कारण**—कारण।

अनुवाद

"हे सनातन, अब मन्वन्तर अवतारों के बारे में सुनो। वे असंख्य हैं और उनकी गणना कोई नहीं कर सकता। जरा, उनके स्त्रोत के विषय में सुनो।

ব্রহ্মার এক-দিনে হয় চৌদ্দ মন্বন্তর ।
চৌদ্দ অবতার তাহাঁ করেন ঈশ্বর ॥৩২০॥

ब्रह्मार एक-दिने हय चौद्द मन्वन्तर ।
चौद्द अवतार ताहाँ करेन ईश्वर ॥ ३२०॥

ब्रह्मार एक-दिने—ब्रह्मा के एक दिन में; **हय**—होते हैं; **चौद्द**—चौदह; **मनु-अन्तर**—मनु परिवर्तन; **चौद्द**—चौदह; **अवतार**—अवतार; **ताहाँ**—उस समय; **करेन**—लेते हैं; **ईश्वर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्।

अनुवाद

"ब्रह्मा के एक दिन में चौदह मनु बदलते हैं और इनमें से प्रत्येक मनु

के शासनकाल में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का एक अवतार प्रकट होता है।

तात्पर्य

इस श्लोक से यह गणना की जा सकती है कि ब्रह्मा के एक मास (३० दिनों) में ४२० मन्वन्तर-अवतार होते हैं। ब्रह्मा की आयु के एक वर्ष (३६० दिनों) में ५,०४० मन्वन्तर अवतार होते हैं। इस तरह ब्रह्मा की सौ वर्ष की आयु में कुल ५,०४,००० मन्वन्तर अवतार होते हैं। इसके अतिरिक्त, मनुओं को भी पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के अंश-अवतार माना जाता है।

चौद्द एक दिने, मासे चारि-शत विश ।
ब्रह्मार वत्सरे पञ्च-सहस्र चल्लिश ॥ ३२१॥

चौद्द एक दिने, मासे चारि-शत बिश ।
ब्रह्मार वत्सरे पञ्च-सहस्र चल्लिश ॥ ३२१॥

चौद्द—१४; **एक दिने**—एक दिन में; **मासे**—एक महीने में; **चारि-शत बिश**—४२०; **ब्रह्मार वत्सरे**—ब्रह्मा के एक वर्ष में; **पञ्च-सहस्र चल्लिश**—५,०४० अवतार।

अनुवाद

ब्रह्मा के एक दिन में १४ मन्वन्तर अवतार होते हैं, अर्थात् एक मास में ४२० और एक वर्ष में ५०४० अवतार होते हैं।

शतेक वत्सर हय 'जीवन' ब्रह्मार ।
पञ्च-लक्ष चारि-सहस्र मन्वन्तरावतार ॥ ३२२॥

शतेक वत्सर हय 'जीवन' ब्रह्मार ।
पञ्च-लक्ष चारि-सहस्र मन्वन्तरावतार ॥ ३२२॥

शतेक वत्सर हय—१०० साल होती है; **जीवन**—जीवन की अवधि; **ब्रह्मार**—ब्रह्मा की; **पञ्च-लक्ष**—५,००,०००; **चारि-सहस्र**—४,०००; **मनु-अन्तर-अवतार**—प्रत्येक मनु के जीवन काल में अवतार।

अनुवाद

"ब्रह्मा के एक सौ वर्ष के जीवन में कुल ५,०४,००० मन्वन्तर-अवतार होते हैं।

অনন্ত ব্রহ্মাণ্ডে ঐছে করহ গণন ।
মহা-বিষ্ণু এক-শ্বাসে ব্রহ্মার জীবন ॥৩২৩॥

অনন্ত ব্রহ্মাণ্ডে ঐছে করহ গণন ।
মহা-বিষ্ণু এক-শ্বাসে ব্রহ্মার জীবন ॥ ৩২৩ ॥

অনন্ত ব্রহ্মাণ্ডে—भगवान् महाविष्णु के; **ऐछे**—इस प्रकार; **करह गणन**—गिनने का प्रयास करो; **महा-विष्णु**—भगवान् महाविष्णु; **एक-श्वासे**—एक श्वास में; **ब्रह्मार जीवन**—एक ब्रह्मा की आयु।

अनुवाद

"यहाँ पर केवल एक ब्रह्माण्ड के मन्वन्तर अवतारों की संख्या दी गई है। अतः असंख्य ब्रह्माण्डों में कितने मन्वन्तर अवतार होंगे, इसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है। इतने सारे ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्मा महाविष्णु के एक श्वास-काल तक ही विद्यमान रहते हैं।

মহা-বিষ্ণুর নিশ্বাসের নাহিক পর্যন্ত ।
এক মন্বন্তরাবতারের দেখ লেখার অন্ত ॥৩২৪॥

মহা-বিষ্ণুর নিশ্বাসের নাহিক পর্য্যন্ত ।
এক মন্বন্তরাবতারের দেখ লেখার অন্ত ॥ ৩২৪ ॥

মহা-বিষ্ণুর—भगवान् महाविष्णु के; **निश्वासेर**—निःश्वास की; **नाहिक पर्य्यन्त**—सीमा नहीं है; **एक मन्वन्तर-अवतारेर**—मन्वन्तर अवतार नामक भगवान् के केवल एक ही लक्षण का; **देख**—जरा देखो; **लेखार अन्त**—लिखने की शक्ति से परे है।

अनुवाद

"महाविष्णु के निश्वासों की कोई सीमा नहीं है। जरा देखो न, केवल मन्वन्तर अवतारों को बतलाना या लिखना कितना दुष्कर है!

স্বায়ংভুবে 'যজ্ঞ', স্বারোচিষে 'বিভু' নাম ।
ঔত্তমে 'সত্যসেন', তামসে 'হরি' অভিধান ॥৩২৫॥

স্বায়ংভুবে 'য়জ্ঞ', স্বারোচিষে 'বিভু' নাম ।
ঔত্তমে 'সত্যসেন', তামসে 'হরি' অভিধান ॥ ৩২৫ ॥

স্বায়ংভুবে—स्वायंभुव मन्वन्तर में; **য়জ্ঞ**—यज्ञ नामक अवतार; **स्वारोचिषे**—स्वारोचिष

मनवन्तर में; **विभु**—विभु अवतार; **नाम**—नामक; **औत्तमे**—औत्तम मन्वन्तर में; **सत्यसेन**—सत्यसेन नामक अवतार; **तामसे**—तामस मन्वन्तर में; **हरि**—हरि; **अभिधान**—नामक।

अनुवाद

"स्वायंभुव मन्वन्तर में अवतार का नाम यज्ञ है। स्वारोचिष मन्वन्तर में उनका नाम विभु है। औत्तम मन्वन्तर में उनका नाम सत्यसेन है तथा तामस मन्वन्तर में उनका नाम हरि है।

रैवते 'वैकुण्ठ', चाक्षुषे 'अजित', वैवस्वते 'वामन' ।
सावर्ण्ये 'सार्वभौम', दक्ष-सावर्ण्ये 'ऋषभ' गणन ॥ ३२६॥

रैवते 'वैकुण्ठ', चाक्षुषे 'अजित', वैवस्वते 'वामन' ।
सावर्ण्ये 'सार्वभौम', दक्ष-सावर्ण्ये 'ऋषभ' गणन ॥ ३२६॥

रैवते—रैवत मन्वन्तर में; **वैकुण्ठ**—वैकुण्ठ नामक अवतार; **चाक्षुषे**—चाक्षुष मन्वन्तर में; **अजित**—अजित नामक अवतार; **वैवस्वते**—वैवस्वत मन्वन्तर में; **वामन**—वामन नामक अवतार; **सावर्ण्ये**—सावर्ण्य मन्वन्तर में; **सार्वभौम**—सार्वभौम नामक अवतार; **दक्ष-सावर्ण्ये**—दक्षसावर्णय मन्वन्तर में; **ऋषभ**—ऋषभ नामक अवतार; **गणन**—नामक।

अनुवाद

"रैवत मन्वन्तर में अवतार का नाम वैकुण्ठ है और चाक्षुष मन्वन्तर में उनका नाम अजित है। वैवस्वत मन्वन्तर में उसका नाम वामन है और सावर्ण्य मन्वन्तर में उनका नाम सार्वभौम तथा दक्षसावर्ण्य मन्वन्तर में उनका नाम ऋषभ है।

ब्रह्म-सावर्ण्ये 'विष्वक्सेन', 'धर्मसेतु' धर्म-सावर्ण्ये ।
रुद्र-सावर्ण्ये 'सुधामा', 'योगेश्वर' देव-सावर्ण्ये ॥ ३२७॥

ब्रह्म-सावर्ण्ये 'विष्वक्सेन', 'धर्मसेतु' धर्म-सावर्ण्ये ।
रुद्र-सावर्ण्ये 'सुधामा', 'योगेश्वर' देव-सावर्ण्ये ॥ ३२७॥

ब्रह्म-सावर्ण्ये—ब्रह्म सावर्ण्य मन्वन्तर में; **विष्वक्सेन**—विष्वक्सेन नामक अवतार; **धर्मसेतु**—धर्मसेतु नामक अवतार; **धर्म-सावर्ण्ये**—धर्मसावर्ण्य मन्वन्तर में; **रुद्र-सावर्ण्ये**—रूद्रसावर्ण्य मन्वन्तर में; **सुधामा**—सुधामा नामक अवतार; **योगेश्वर**—योगेश्वर नामक अवतार; **देव-सावर्ण्ये**—देवसावर्ण्य मन्वन्तर में।

अनुवाद

"ब्रह्म सावर्ण्य मन्वन्तर में अवतार का नाम विष्वक्सेन है, धर्म सावर्ण्य मन्वन्तर में धर्मसेतु, रुद्रसावर्ण्य मन्वन्तर में सुधामा तथा देवसावर्ण्य में उनका नाम योगेश्वर है।

ইন্দ্র-সাবর্ণ্যে 'বৃহদ্ভানু' অভিধান ।
এই চৌদ্দ মন্বন্তরে চৌদ্দ 'অবতার' নাম ॥৩২৮॥

इन्द्र-सावर्ण्ये 'बृहद्भानु' अभिधान ।
एइ चौद्द मन्वन्तरे चौद्द 'अवतार' नाम ॥ ३२८॥

इन्द्र-सावर्ण्ये—इन्द्र सावर्ण्य मन्वन्तर में; **बृहद्भानु**—बृहद्भानु नामक अवतार; **अभिधान**—नाम के; **एइ चौद्द मन्वन्तरे**—इन चौदह मन्वन्तरो में; **चौद्द**—चौदह; **अवतार**—अवतारों के; **नाम**—विभिन्न नाम।

अनुवाद

"इन्द्रसावर्ण्य मन्वन्तर में अवतार का नाम बृहद्भानु है। इन चौदह मन्वन्तरों में चौदह अवतारों के ये ही नाम हैं।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने अपने *अनुभाष्य* में मनुओं तथा उनके पिताओं के नामों की सूची दी है—(१) ब्रह्मापुत्र स्वायम्भुव मनु; (२) स्वरोचिष अर्थात् अग्नि का पुत्र स्वारोचिष; (३) राजा प्रियव्रत का पुत्र उत्तम; (४) उत्तम का भाई तामस; (५) तामस का जुड़वा भाई रैवत; (६) चक्षुष देवता का पुत्र चाक्षुष; (७) विवस्वान अर्थात् सूर्य का पुत्र वैवस्वत (इसका उल्लेख *भगवद्गीता* ४.१ में भी हुआ है); (८) सूर्यदेव तथा उनकी पत्नी छाया का पुत्र सावर्णि; (९) वरुण-पुत्र दक्ष सावर्णि; (१०) उपश्लोक पुत्र ब्रह्म सावर्णि; (११-१४) रुद्र, रुचि, सत्यसहा तथा भूति के पुत्र क्रमशः रुद्रसावर्णि, धर्मसावर्णि, देवसावर्णि तथा इन्द्रसावर्णि।

যুগাবতার এবে শুন, সনাতন ।
সত্য-ত্রেতা-দ্বাপর-কলি-যুগের গণন ॥৩২৯॥

युगावतार एबे शुन, सनातन ।
सत्य-त्रेता-द्वापर-कलि-युगेर गणन ॥ ३२९॥

युग-अवतार—युगों के अवतार; **एबे**—अब; **शुन**—सुनो; **सनातन**—हे सनातन गोस्वामी; **सत्य-त्रेता-द्वापर-कलि-युगेर**—सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलियुग के; **गणन**—क्रमपूर्वक।

अनुवाद

"हे सनातन, अब मुझसे युग-अवतारों के विषय में सुनो। सर्वप्रथम युग चार हैं—सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलियुग।

शुक्ल-रक्त-कृष्ण-पीत—क्रमे चारि वर्ण ।
चारि वर्ण धरि' कृष्ण करेन युग-धर्म ॥ ३३०॥

शुक्ल-रक्त-कृष्ण-पीत—क्रमे चारि वर्ण ।
चारि वर्ण धरि' कृष्ण करेन युग-धर्म ॥ ३३०॥

शुक्ल—श्वेत; **रक्त**—लाल; **कृष्ण**—काला; **पीत**—पीला; **क्रमे**—एक के बाद दूसरा; **चारि वर्ण**—चार रंग; **चारि वर्ण धरि'**—ये चार रंग धारण करके; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **करेन युग-धर्म**—विभिन्न युगों में अपनी लीलाएँ करते हैं।

अनुवाद

"चारों युगों—सत्य, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग—में भगवान् चार रंगों में अवतरित होते हैं। ये रंग क्रमशः श्वेत, लाल, काले तथा पीले हैं। ये रंग विभिन्न युगों में अवतारों के हैं।

आसन्वर्णास्त्रयो ह्यस्य गृह्णतोऽनु-युगं तनूः ।
शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णतां गतः ॥ ३३१॥

आसन्वर्णास्त्रयो ह्यस्य गृह्णतोऽनु-युगं तनूः ।
शुक्लो रक्तस्तथा पीत इदानीं कृष्णतां गतः ॥ ३३१॥

आसन्—थे; **वर्णाः**—रंग; **त्रयः**—तीन; **हि**—निश्चित रूप से; **अस्य**—आपके पुत्र के; **गृह्णतः**—स्वीकार करके; **अनु-युगम्**—युग के अनुसार; **तनूः**—शरीर; **शुक्लः**—श्वेत; **रक्तः**—लाल; **तथा**—तथा; **पीतः**—पीला; **इदानीम्**—अब; **कृष्णताम् गतः**—इन्होंने काला रूप स्वीकार किया है।

अनुवाद

"'इस बालक के पहले तीन रंग रह चुके हैं, जो विभिन्न युगों के लिए संस्तुत रंगों के अनुसार थे। पहले वह श्वेत, लाल तथा पीला था, किन्तु अब उसने श्याम रंग धारण किया है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.८.१३) का है, जिसे गर्गमुनि ने नन्द महाराज के घर में कृष्ण के नामकरण संस्कार के अवसर पर कहा था। अगले दो श्लोक भी *श्रीमद्भागवत* (११.५.२१, २४) से लिये गये हैं।

कृते शुक्लश्चतुर्बाहुर्जटिलो वल्कलाम्बरः ।
कृष्णाजिनोपवीताक्षान्बिभ्रद्दण्ड-कमण्डलू ॥ ३३२॥

कृते शुक्लश्चतुर्बाहुर्जटिलो वल्कलाम्बरः ।
कृष्णाजिनोपवीताक्षान्बिभ्रद्दण्ड-कमण्डलू ॥ ३३२ ॥

कृते—सत्ययुग में; **शुक्लः**—श्वेत रंग से युक्त तथा शुक्ल नाम के; **चतुः-बाहुः**—चार भुजाओं वाले; **जटिलः**—जटाओं से युक्त; **वल्कल-अम्बरः**—वृक्ष की छाल के वस्त्र पहनकर; **कृष्ण-अजिन**—काले रंग के हिरण की चर्म; **उपवीत**—जनेऊ; **अक्षान्**—जप के मनकों की माला; **बिभ्रत्**—धारण करके; **दण्ड-कमण्डलू**—दण्ड तथा कमंडल।

अनुवाद

"'सत्ययुग में भगवान् का शरीर श्वेत रंग का था, उनके चार हाथ थे तथा सिर पर जटाजूट था। वे वृक्ष की छाल पहने थे और काला मृगचर्म धारण किये थे। वे उपवीत (जनेऊ) पहने थे और गले में रुद्राक्ष की माला धारण किये थे। वे दण्ड तथा कमण्डलु लिये थे और ब्रह्मचारी थे।'

त्रेतायां रक्त-वर्णोऽसौ चतुर्बाहुस्त्रि-मेखलः ।
हिरण्य-केशस्त्रय्यात्मा स्रुक्स्रुवाद्युपलक्षणः ॥ ३३३॥

त्रेतायां रक्त-वर्णोऽसौ चतुर्बाहुस्त्रि-मेखलः ।
हिरण्य-केशस्त्रय्यात्मा स्रुक्स्रुवाद्युपलक्षणः ॥ ३३३ ॥

त्रेतायाम्—त्रेतायुग में; **रक्त-वर्णः**—लाल रंग के; **असौ**—वे; **चतुः-बाहुः**—चार भुजाओं वाले; **त्रि-मेखलः**—उदर में तीन वृताकर रेखाओं से युक्त; **हिरण्य-केशः**—सुनहरे बालों से युक्त; **त्रयी-आत्मा**—जिनके स्वरूप से वेद प्रकट होते हैं; **स्रुक्-स्रुव-आदि-उपलक्षणः**—स्रुक् तथा स्रुवा नामक यज्ञ के चम्मच ।

अनुवाद

"'त्रेतायुग में भगवान् का शरीर रक्त-वर्ण का था और उनकी चार भुजाएँ थीं। उनके उदर में तीन विशिष्ट रेखाएँ थीं और उनके केश सुनहरे थे। उनका स्वरूप वैदिक ज्ञान को प्रकट करने वाला था और वे यज्ञ के चम्मच स्रुक्-स्रुवा आदि चिह्नों को धारण किये हुए थे।'

সত্য-যুগে ধর্ম-ধ্যান করায় 'শুক্ল'-মূর্তি ধরি' ।
কর্দমকে বর দিলা যেঁহো কৃপা করি' ॥৩৩৪॥

সত্য-যুগে ধর্ম-ধ্যান করায় 'শুক্ল'-মূর্তি ধরি' ।
কর্দমকে বর দিলা যেঁহো কৃপা করি' ॥ ৩৩৪॥

সত্য-যুগে—সত্যযুগ में; **ধর্ম-ধ্যান**—धार्मिक नियम तथा ध्यान; **করায়**—करवाते हैं; **শুক্ল**—श्वेत; **মূর্তি**—रूप; **ধরি'**—स्वीकार करके; **কর্দমকে**—कर्दम मुनि को; **বর দিলা**—वरदान दिया; **যেঁহো**—जिन्होंने; **কৃপা করি'**—अहैतुकी कृपापूर्वक।

अनुवाद

"शुक्ल अवतार के रूप में भगवान् ने धर्म तथा ध्यान की शिक्षा दी। उन्होंने कर्दम मुनि को आशीर्वाद दिया और इस तरह उन्होंने अपनी अहैतुकी कृपा प्रदर्शित की।

तात्पर्य

कर्दम मुनि प्रजापतियों में से एक थे। उन्होंने मनु की पुत्री देवहूति के साथ विवाह किया और उनके पुत्र कपिलदेव हुए। कर्दम मुनि की तपस्या से भगवान् अत्यधिक प्रसन्न हुए और वे उनके समक्ष श्वेत रूप में प्रकट हुए। यह घटना सत्ययुग की है, जब लोग ध्यान करने के अभ्यस्त थे।

কৃষ্ণ-'ধ্যান' করে লোক জ্ঞান-অধিকারী ।
ত্রেতার ধর্ম 'যজ্ঞ' করায় 'রক্ত'-বর্ণ ধরি' ॥৩৩৫॥

कृष्ण-'ध्यान' करे लोक ज्ञान-अधिकारी ।
त्रेतार धर्म 'यज्ञ' कराय 'रक्त'-वर्ण धरि' ॥ ३३५ ॥

कृष्ण-ध्यान—कृष्ण का ध्यान; **करे**—करते हैं; **लोक**—लोग; **ज्ञान-अधिकारी**—जो आध्यात्मिक ज्ञान में उन्नत हैं; **त्रेतार**—त्रेतायुग में; **धर्म**—नियत कर्म; **यज्ञ**—यज्ञों का अनुष्ठान; **कराय**—करवाते हैं; **रक्त-वर्ण धरि'**—लाल रंग धारण करके।

अनुवाद

"सत्ययुग में लोग सामान्यतया आध्यात्मिक ज्ञान में अग्रसर होते थे और कृष्ण का सहज ही ध्यान कर सकते थे। त्रेतायुग में लोगों का वृत्तिपरक कार्य बड़े-बड़े यज्ञ को सम्पन्न करना था। भगवान् ने रक्त-वर्ण धारण करके इसे प्रोत्साहित किया।

'कृष्ण-पदार्চন' হয় দ্বাপরের ধর্ম ।
'কৃষ্ণ'-বর্ণে করায় লোকে কৃষ্ণার্চন-কর্ম ॥৩৩৬॥

'कृष्ण-पदार्चन' हय द्वापरेर धर्म ।
'कृष्ण'-वर्णे कराय लोके कृष्णार्चन-कर्म ॥ ३३६ ॥

कृष्ण-पद-अर्चन—कृष्ण के चरणकमलों की उपासना; **हय**—है; **द्वापरेर**—द्वापरयुग का; **धर्म**—निर्धारित कर्तव्य; **कृष्ण-वर्णे**—काले रंग में; **कराय**—करवाते हैं; **लोके**—लोगों को; **कृष्ण-अर्चन-कर्म**—भगवान् कृष्ण की पूजा के कार्य।

अनुवाद

"द्वापर युग में लोगों का वृत्तिपरक कार्य कृष्ण के चरणकमलों का पूजन करना था। अतएव भगवान् कृष्ण ने श्याम वर्ण धारण करके लोगों को प्रोत्साहित किया कि वे उनकी पूजा करें।

দ্বাপরে ভগবান্শ্যামঃ পীত-বাসা নিজায়ুধঃ ।
শ্রী-বত্সাদিভিরঙ্কৈশ্চ লক্ষণৈরুপলক্ষিতঃ ॥৩৩৭॥

द्वापरे भगवान्श्यामः पीत-वासा निजायुधः ।
श्री-वत्सादिभिरङ्कैश्च लक्षणैरुपलक्षितः ॥ ३३७ ॥

द्वापरे—द्वापर युग में; **भगवान्**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; **श्यामः**—काला; **पीत-वासाः**—पीले वस्त्र धारण करके; **निज**—अपने; **आयुधः**—अस्त्र लेकर; **श्री-वत्स-**

आदिभिः—श्रीवत्स आदि; **अङ्कैः**—चिह्नों से; **च**—तथा; **लक्षणैः**—कौस्तुभ मणि जैसे बाहरी लक्षणों द्वारा; **उपलक्षितः**—सुशोभित।

अनुवाद

"'द्वापर युग में भगवान् श्याम-वर्ण के साथ प्रकट होते हैं। वे पीताम्बर धारण किये रहते हैं। वे अपने आयुध लिये रहते हैं तथा कौस्तुभ मणि एवं श्रीवत्स चिह्न से सुशोभित रहते हैं। उनके लक्षणों का वर्णन इस रूप में किया जाता है।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (११.५.२७) का है। श्याम रंग एकदम काला नहीं होता। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर इसकी तुलना अतसी फूल से करते हैं। ऐसा नहीं है कि समस्त द्वापर युगों में भगवान् कृष्ण श्याम रंग में ही प्रकट होते हों। कृष्ण के आविर्भाव के पूर्व अन्य द्वापर युगों में भगवान् अपने निजी विस्तारों के रूप में हरित वर्ण में प्रकट हुए। इसका उल्लेख *विष्णु पुराण, हरिवंश* तथा *महाभारत* में हुआ है।

नमस्ते वासुदेवाय नमः सङ्कर्षणाय च ।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय तुभ्यं भगवते नमः ॥३७८॥

नमस्ते वासुदेवाय नमः सङ्कर्षणाय च ।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय तुभ्यं भगवते नमः ॥ ३३८ ॥

नमः—मैं प्रणाम करता हूँ; **ते**—आपको; **वासुदेवाय**—भगवान् वासुदेव को; **नमः**—सादर प्रणाम; **सङ्कर्षणाय च**—तथा भगवान् संकर्षण को; **प्रद्युम्नाय**—भगवान् प्रद्युम्न को; **अनिरुद्धाय**—अनिरुद्ध को; **तुभ्यम्**—आपको; **भगवते**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को; **नमः**—मैं प्रणाम करता हूँ।

अनुवाद

"'मैं उन पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को सादर नमस्कार करता हूँ, जिन्होंने वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध रूप में अपना विस्तार किया।'

तात्पर्य

यह स्तुति *श्रीमद्भागवत* (११.५.२९) से ली गई है, जिसे करभाजन मुनि ने तब की थी, जब विदेहराज महाराज निमि ने उनसे विशिष्ट युगों के अवतारों

तथा उनकी पूजा-विधि के बारे में पूछा था। करभाजन मुनि नौ योगेन्द्रों में से एक थे और उन्होंने राजा से मिलकर उसे भावी अवतारों के विषय में बतलाया था।

এই মন্ত্রে দ্বাপরে করে কৃষ্ণার্চন ।
'কৃষ্ণ-নাম-সঙ্কীর্তন'—কলি-যুগের ধর্ম ॥ ৩৩৯॥

এइ मन्त्रे द्वापरे करे कृष्णार्चन ।
'कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन'—कलि-युगेर धर्म ॥ ३३९॥

एइ मन्त्रे—इस मंत्र द्वारा; **द्वापरे**—द्वापर युग में; **करे**—करते हैं; **कृष्ण-अर्चन**—भगवान् कृष्ण की पूजा; **कृष्ण-नाम-सङ्कीर्तन**—भगवान् कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन; **कलि-युगेर धर्म**—कलियुग का धर्म है।

अनुवाद

"इस मन्त्र से लोग द्वापर युग में कृष्ण की पूजा करते हैं। कलियुग में लोगों का वृत्तिपरक कर्म है कृष्ण के पवित्र नाम का सामूहिक कीर्तन करना।

तात्पर्य

जैसाकि *श्रीमद्भागवत* में कहा गया है (१२.३.५१) :

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबन्धः परं व्रजेत्॥

हे राजन्, यद्यपि कलियुग दोषों से भरा पड़ा है, फिर भी इस युग में एक सद्गुण है। वह यह है कि मात्र हरे कृष्ण महामन्त्र का कीर्तन करने से मनुष्य भौतिक बन्धन से छूट सकता है और आध्यात्मिक जगत् तक उन्नत हो सकता है।" इस तरह कलियुग में हरे कृष्ण मन्त्र के कीर्तन द्वारा भगवान् कृष्ण की पूजा की जाती है : *हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे / हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे।* इस आन्दोलन का प्रसार करने के लिए भगवान् कृष्ण साक्षात् चैतन्य महाप्रभु के रूप में प्रकट हुए। इसका वर्णन अगले श्लोक में हुआ है।

'पीत'-वर्ण धरि' तबे कैला प्रवर्तन ।
प्रेम-भक्ति दिला लोके लञा भक्त-गण ॥ ७४० ॥

'पीत'-वर्ण धरि' तबे कैला प्रवर्तन ।
प्रेम-भक्ति दिला लोके लञा भक्त-गण ॥ ३४० ॥

पीत-वर्ण धरि'—पीला रंग धारण करके; **तबे**—फिर; **कैला प्रवर्तन**—संकीर्तन आन्दोलन का प्रारम्भ किया; **प्रेम-भक्ति दिला**—उन्होंने कृष्ण-प्रेम दिया; **लोके**—सामान्य लोगों को; **लञा भक्त-गण**—अपने भक्तों को साथ लेकर।

अनुवाद

"अपने निजी भक्तों के साथ पीत (सुनहला) वर्ण धारण करके भगवान् कृष्ण कलियुग में हरिनाम-संकीर्तन अर्थात् हरे कृष्ण मन्त्र के कीर्तन का प्रचार करते हैं। इस तरह वे सामान्य जनता को कृष्ण-प्रेम लाकर देते हैं।

धर्म प्रवर्तन करे व्रजेन्द्र-नन्दन ।
प्रेमे गाय नाचे लोक करे सङ्कीर्तन ॥ ७४१ ॥

धर्म प्रवर्तन करे व्रजेन्द्र-नन्दन ।
प्रेमे गाय नाचे लोक करे सङ्कीर्तन ॥ ३४१ ॥

धर्म प्रवर्तन करे—एक विशिष्ट प्रकार के धर्मकृत्य का प्रचार करते हैं; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—स्वयं कृष्ण; **प्रेमे**—प्रेम में; **गाय**—गाते हैं; **नाचे**—नाचते हैं; **लोक**—सभी लोग; **करे**—करते हैं; **सङ्कीर्तन**—संकीर्तन।

अनुवाद

"नन्द महाराज के पुत्र भगवान् कृष्ण ने कलियुग के वृत्तिपरक कार्य (धर्म) का स्वयं प्रवर्तन किया। वे कीर्तन करते हैं, भावावेश में नाचते हैं और इस तरह समस्त जगत् सामूहिक संकीर्तन करता है।

कृष्ण-वर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्र-पार्षदम् ।
यज्ञैः सङ्कीर्तन-प्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥ ७४२ ॥

कृष्ण-वर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्र-पार्षदम् ।
यज्ञैः सङ्कीर्तन-प्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥ ३४२ ॥

कृष्ण-वर्णम्—*कृष्-ण* वर्णों का उच्चारण करते हुए; **त्विषा**—कांति से युक्त; **अकृष्णम्**—जो काली नहीं है (सुनहरी); **स-अङ्ग**—संगियों के साथ; **उप-अङ्ग**—सेवक; **अस्त्र**—अस्त्र; **पार्षदम्**—अन्तरंग संगी; **यज्ञैः**—यज्ञ द्वारा; **सङ्कीर्तन-प्रायैः**—मुख्यतः संकीर्तन; **यजन्ति**—वे उपासना करते हैं; **हि**—निश्चित रूप से; **सु-मेधसः**—बुद्धिमान लोग।

अनुवाद

"'कलियुग में बुद्धिमान व्यक्ति कृष्ण-नाम का निरन्तर गान करने वाले भगवान् के अवतार की पूजा करने के लिए संकीर्तन करते हैं। यद्यपि उनका वर्ण श्याम नहीं है, किन्तु वे साक्षात् कृष्ण हैं। उनके साथ उनके पार्षद, सेवक, अस्त्र तथा विश्वस्त संगी रहते हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (११.५.३२) का है। देखें आदिलीला ३.५२।

আর তিন-যুগে ধ্যানাদিতে যেই ফল হয় ।
কলি-যুগে কৃষ্ণ-নামে সেই ফল পায় ॥৩৪৩॥

আর তিন-য়ুগে ধ্যানাদিতে য়েই ফল হয় ।
কলি-য়ুগে কৃষ্ণ-নামে সেই ফল পায় ॥ ৩৪৩ ॥

आर तिन-य़ुगे—अन्य तीन युगों में; **ध्यान-आदिते**—ध्यान आदि प्रक्रियाओं द्वारा; **य़ेइ**—जो भी; **फल**—परिणाम; **हय**—होता है; **कलि-य़ुगे**—इस कलियुग में; **कृष्ण-नामे**—हरे कृष्ण महामन्त्र के जप द्वारा; **सेइ फल पाय**—समान लाभ मिलता है।

अनुवाद

"अन्य तीन युगों में सत्य, त्रेता तथा द्वापर में लोग विभिन्न प्रकार के आध्यात्मिक कार्य करते हैं। इस प्रकार से उन्हें जो फल मिलता है, उसे कलियुग में वे केवल हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन करके प्राप्त कर सकते हैं।

কলের্দোষ-নিধে রাজন্নস্তি হ্যেকো মহান্গুণঃ ।
কীর্তনাদেব কৃষ্ণস্য মুক্ত-বন্ধঃ পরং ব্রজেৎ ॥৩৪৪॥

কলের্দোষ-নিধে রাজন্নস্তি হ্যেকো মহান্গুণঃ ।
কীর্তনাদেব কৃষ্ণস্য মুক্ত-বন্ধঃ পরং ব্রজেৎ ॥ ৩৪৪ ॥

कलेः—कलियुग के; **दोष-निधे**—दोषों के समुद्र में; **राजन्**—हे राजन्; **अस्ति**—है; **हि**—निश्चित रूप से; **एकः**—एक; **महान्**—महान्; **गुणः**—गुण; **कीर्तनात्**—कीर्तन द्वारा; **एव**—निश्चित ही; **कृष्णस्य**—भगवान् कृष्ण के पवित्र नाम के; **मुक्त-बन्धः**—भौतिक बन्धन से मुक्त; **परम्**—आध्यात्मिक जगत् में; **व्रजेत्**—जा सकता है।

अनुवाद

"'हे राजन्, यद्यपि कलियुग दोषों से भरा है, किन्तु फिर भी इस युग में एक उत्तम गुण है। वह यह है कि हरे कृष्ण महामन्त्र के कीर्तन मात्र से मनुष्य भवबन्धन से मुक्त हो सकता है और दिव्य धाम को प्राप्त कर सकता है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१२.३.५१) का है।

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरि-कीर्तनात् ॥ ३४५ ॥

कृते यद्ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरि-कीर्तनात् ॥ ३४५ ॥

कृते—सत्ययुग में; **यत्**—जो; **ध्यायतः**—ध्यान करके; **विष्णुम्**—भगवान् विष्णु पर; **त्रेतायाम्**—त्रेतायुग में; **यजतः**—पूजा करके; **मखैः**—यज्ञों द्वारा; **द्वापरे**—द्वापर युग में; **परिचर्यायाम्**—कृष्ण के चरणकमल की पूजा करके; **कलौ**—कलियुग में; **तत्**—वहीं समान फल (प्राप्त किया जा सकता है); **हरि-कीर्तनात्**—केवल हरे कृष्ण महामन्त्र के कीर्तन द्वारा।

अनुवाद

"'सत्ययुग में विष्णु का ध्यान करने से, त्रेतायुग में यज्ञ करने से तथा द्वापर युग में भगवान् के चरणकमलों की सेवा करने से जो फल प्राप्त होता है, उसे कलियुग में हरे कृष्ण महामन्त्र के कीर्तन द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१२.३.५२) से लिया गया है। आजकल कलियुग में अनेक छद्म ध्यानी हैं, जो कुछ काल्पनिक रूप बना लेते हैं और उसका ध्यान करने का प्रयास करते हैं। अब तो ध्यान करना फैशन बन चुका

है, किन्तु लोगों को ध्यान के उद्देश्य के बारे में कुछ भी पता नहीं है। इसीकी व्याख्या यहाँ की गई है। *यद् ध्यायतो विष्णुम्।* मनुष्य को भगवान् विष्णु या भगवान् कृष्ण का ध्यान करना होता है। किन्तु तथाकथित ध्यानी शास्त्रों का सन्दर्भ लिये बिना निर्विशेष वस्तुओं को लक्ष्य बनाते हैं। भगवान् कृष्ण ने *भगवद्गीता* (१२.५) में ऐसे लोगों की भर्त्सना की है :

क्लेशोऽधिकतरस्तेषाम् अव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते॥

"जिनके मन भगवान् के अव्यक्त निर्विशेष पहलू के प्रति आसक्त हैं, उनके लिए प्रगति कर पाना अत्यन्त दुःखदायी है। देहधारियों के लिए उस स्थिति में प्रगति करना सदैव कठिन है।" ध्यान करना न जानने के कारण मूर्ख लोग दुःख उठाते हैं और उनके आध्यात्मिक कार्यों से उन्हें कोई लाभ नहीं मिल पाता।

विष्णु पुराण (६.२.१७), *पद्म पुराण* (उत्तर खण्ड ७२.२५) तथा *बृहन्नारदीय पुराण* (३८.९७) में प्राप्त निम्नलिखित श्लोक में यही निर्देश प्राप्त होता है।

ध्यायन्कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन् ।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ सङ्कीर्त्य केशवम् ॥३४६॥

ध्यायन्कृते यजन् यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन् ।
यदाप्नोति तदाप्नोति कलौ सङ्कीर्त्य केशवम् ॥ ३४६ ॥

ध्यायन्—ध्यान करके; **कृते**—सत्ययुग में; **यजन्**—पूजा करके; **यज्ञैः**—बड़े यज्ञों के अनुष्ठान द्वारा; **त्रेतायाम्**—त्रेतायुग में; **द्वापरे**—द्वापरयुग में; **अर्चयन्**—चरणकमलों की पूजा करके; **यत्**—जो; **आप्नोति**—प्राप्त होता है; **तत्**—वह; **आप्नोति**—प्राप्त होता है; **कलौ**—कलियुग में; **सङ्कीर्त्य**—मात्र कीर्तन द्वारा; **केशवम्**—भगवान् केशव की लीलाओं तथा गुणों के।

अनुवाद

"'सत्ययुग में ध्यान करने से, त्रेतायुग में यज्ञ करने से या द्वापर युग में कृष्ण के चरणकमलों की पूजा करने से जो फल प्राप्त होता है, उसे कलियुग में केवल केशव के गुणगान द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।'

কলিং সভাজয়ন্ত্যার্যা গুণ-জ্ঞাঃ সার-ভাগিনঃ ।
যত্র সঙ্কীর্তনেনৈব সর্ব-স্বার্থোঽভিলভ্যতে ॥৩৪৭॥

কলিং সভাজয়ন্ত্যার্য্যা গুণ-জ্ঞাঃ সার-ভাগিনঃ ।
য়ত্র সঙ্কীর্তনেনৈব সর্ব-স্বার্থোঽভিলভ্যতে ॥ ৩৪৭॥

কলিম্—কলিযুগ का; **সভাজয়ন্তি**—पूजते हैं; **আর্য্যাঃ**—उन्नत लोग; **গুণ-জ্ঞাঃ**—कलियुग के इस सद्गुण को जानने वाले; **সার-ভাগিনঃ**—जो लोग सार तत्त्व को ग्रहण करते हैं; **য়ত্র**—जिस युग में; **সঙ্কীর্তনেন**—मात्र हरे कृष्ण महामन्त्र के जप रूपी संकीर्तन यज्ञ द्वारा; **এব**—निश्चित रूप से; **সর্ব-স্ব-অর্থঃ**—जीवन के सभी स्वार्थ; **অভিলভ্যতে**—प्राप्त हो जाते हैं।

অনুবাদ

"'जो लोग उन्नत और अत्यन्त योग्य हैं तथा जीवन के सार में रुचि रखते हैं, वे कलियुग के सद्गुणों को जानते हैं। ऐसे लोग कलियुग की पूजा करते हैं, क्योंकि इस युग में हरे कृष्ण महामन्त्र के कीर्तन मात्र से मनुष्य आत्म-ज्ञान में प्रगति कर सकता है और जीवन का लक्ष्य प्राप्त कर सकता है।'

তাৎপর্য

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (११.५.३६) से है, जिसे नौ योगेन्द्रों में से एक ऐसे करभाजन ऋषि ने कहा था। वे महाराज निमि को विभिन्न युगों में विभिन्न विधियों द्वारा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की पूजा करने के लिए मनुष्यों का धर्म बतला रहे थे।

পূর্ববত্লিখি যবে গুণাবতার-গণ ।
অসঙ্খ্য সঙ্খ্যা তাঁর, না হয় গণন ॥৩৪৮॥

পূর্ববত্ লিখি য়বে গুণাবতার-গণ ।
অসঙ্খ্য সঙ্খ্যা তাঁর, না হয় গণন ॥ ৩৪৮॥

পূর্ব-বত্—पहले ही; **লিখি**—मैंने लिखा; **য়বে**—जब; **গুণ-অবতার-গণ**—भौतिक प्रकृति के गुणों के अवतार; **অসঙ্খ্য**—असंख्य; **সঙ্খ্য**—गणना; **তাঁর**—उनकी; **না হয় গণন**—गिनती नहीं की जा सकती।

अनुवाद

"जैसाकि मैंने गुणावतारों का वर्णन करते हुए बतलाया था, उसी तरह इन अवतारों को भी असंख्य समझना चाहिए, क्योंकि किसी के भी द्वारा इनकी गणना नहीं की जा सकती।

चारि-युगावतारे एई त' गणन ।
शुनि' भङ्गि करि' ताँरे पूछे सनातन ॥ ३४९ ॥

चारि-युगावतारे एइ त' गणन ।
शुनि' भङ्गि करि' ताँरे पुछे सनातन ॥ ३४९ ॥

चारि-युग-अवतारे—चार भिन्न युगों में अवतारों की; **एइ त' गणन**—ऐसी गिनती; **शुनि'**—सुनकर; **भङ्गि करि'**—बहाने से; **ताँरे**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु को; **पुछे**—पूछा; **सनातन**—सनातन गोस्वामी।

अनुवाद

"इस तरह मैंने चारों युगों के अवतारों का विवरण प्रस्तुत किया है।" यह सब सुनकर सनातन गोस्वामी ने महाप्रभु को अप्रत्यक्ष रूप से इंगित किया।

राज-मन्त्री सनातन—बुद्ध्ये बृहस्पति ।
प्रभुर कृपाते पूछे असङ्कोच-मति ॥ ३५० ॥

राज-मन्त्री सनातन—बुद्ध्ये बृहस्पति ।
प्रभुर कृपाते पुछे असङ्कोच-मति ॥ ३५० ॥

राज-मन्त्री सनातन—पहले सनातन गोस्वामी नवाब हुसेन शाह के एक बुद्धिमान मन्त्री थे; **बुद्ध्ये**—बुद्धि में; **बृहस्पति**—देव लोकों के पुरोहित बृहस्पति के समान; **प्रभुर कृपाते**—भगवान् की असीम कृपा के कारण; **पुछे**—पूछते हैं; **असङ्कोच-मति**—बिना संकोच किये।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी नवाब हुसेन शाह के अधीन एक मन्त्री थे और वे निस्सन्देह स्वर्ग के प्रमुख पुरोहित बृहस्पति जैसे ही बुद्धिमान थे। भगवान् की असीम कृपा के फलस्वरूप सनातन गोस्वामी ने बिना किसी संकोच के महाप्रभु से पूछा।

'अति क्षुद्र जीव मुञि नीच, नीचाचार ।
केमने जानिव कलिते कोनवतार?' ॥३५१॥

'अति क्षुद्र जीव मुञि नीच, नीचाचार ।
केमने जानिब कलिते कोनवतार?' ॥ ३५१ ॥

अति—बहुत; **क्षुद्र**—तुच्छ; **जीव**—जीव; **मुञि**—मैं; **नीच**—नीच; **नीच-आचार**—अति दुराचारी; **केमने**—किस प्रकार; **जानिब**—मैं जानुँगा; **कलिते**—इस युग में; **कोन् अवतार**—कौन अवतार है।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने कहा : "मैं अत्यन्त क्षुद्र जीव हूँ। मैं नीच हूँ और मेरा आचरण नीच है। भला मैं कैसे जान सकता हूँ कि कलियुग में कौन अवतार है?"

तात्पर्य

ईश्वर के अवतारों के सन्दर्भ में यह श्लोक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आजकल भारत में ऐसे अनेक धूर्त हैं, जो अपने आपको ईश्वर या देवी का अवतार बतलाते हैं। इस तरह वे मूर्ख जनता को धोखा दे रहे हैं। सनातन गोस्वामी ने सामान्य जनता की ओर से अपने आपको मूर्ख एवं नीच आचरण वाले व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया, यद्यपि वे अत्यन्त उन्नत व्यक्ति थे। निम्न लोग वास्तविक ईश्वर को नहीं मानते, फिर भी वे मूर्ख लोगों को धोखा देने वाले बनावटी ईश्वर को मानने के लिए उत्सुक रहते हैं। इस कलियुग में यही सब चल रहा है। ऐसे मूर्ख लोगों का मार्गदर्शन करने के लिए ही श्री चैतन्य महाप्रभु प्रश्न का निम्नलिखित उत्तर दे रहे हैं।

प्रभु कहे,—"अन्यावतार शास्त्र-द्वारे जानि ।
कलिते अवतार तैछे शास्त्र-वाक्ये मानि ॥३५२॥

प्रभु कहे,—"अन्यावतार शास्त्र-द्वारे जानि ।
कलिते अवतार तैछे शास्त्र-वाक्ये मानि ॥ ३५२ ॥

प्रभु कहे—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा; **अन्य-अवतार**—अन्य युगों में अवतार; **शास्त्र-द्वारे जानि**—शास्त्रों के निर्देशानुसार स्वीकार किये जाते हैं; **कलिते**—इस कलियुग में;

अवतार—अवतार; **तैछे**—उसी प्रकार ही; **शास्त्र-वाक्ये मानि**—प्रामाणिक शास्त्रों के वर्णन के अनुसार स्वीकार करने होंगे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "जिस तरह अन्य युगों के अवतार को शास्त्रों के आदेशानुसार स्वीकार किया जाता है, इस कलियुग में ईश्वर के अवतार को उसी तरह स्वीकार किया जाना चाहिए।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु के अनुसार अवतार को स्वीकार करने की यही विधि है। श्रील नरोत्तम दास ठाकुर कहते हैं—*साधु-शास्त्र-गुरु-वाक्य, चित्तेते करिया ऐक्य* । मनुष्य को साधु पुरुषों, गुरु तथा शास्त्र के वचनों का अध्ययन करके ही किसी वस्तु की यथार्थता का स्वीकार करना चाहिए। वास्तविक केन्द्रबिन्दु प्रामाणिक शास्त्र हैं। यदि गुरु प्रामाणिक शास्त्र के अनुसार प्रवचन नहीं करता, तो उसे स्वीकार नहीं करना चाहिए। इसी तरह, यदि कोई साधु शास्त्र के अनुसार नहीं कहता, तो वह साधु पुरुष नहीं है। शास्त्र सबके लिए केन्द्रबिन्दु है। दुर्भाग्यवश, इस समय लोग शास्त्रों का सन्दर्भ नहीं लेते, इसलिए वे धूर्तों को अवतार मान लेते हैं। यही कारण है कि अवतार इतने सस्ते हो गये हैं। जो बुद्धिमान लोग श्री चैतन्य महाप्रभु के उपदेशों तथा प्रामाणिक आचार्य के उपदेशों का पालन करते हैं, वे ढोंगी व्यक्ति को अवतार नहीं मानते। कलियुग में श्री चैतन्य महाप्रभु ही एकमात्र अवतार हैं। नकली अवतार श्री चैतन्य महाप्रभु का लाभ उठाते हैं। महाप्रभु गत ५०० वर्ष पूर्व प्रकट हुए, वे नदिया के ब्राह्मण के पुत्र थे और उन्होंने संकीर्तन-आन्दोलन का प्रवर्तन किया था। धूर्त लोग श्री चैतन्य महाप्रभु की नकल करके तथा शास्त्रों की उपेक्षा करते हुए अपने आपको अवतार बतलाते हैं और अपनी मूर्खतापूर्ण विधि को धार्मिक विधि के रूप में दाखिल करते हैं। जैसाकि हम बारम्बार कह चुके हैं, धर्म का प्रवर्तन तो केवल पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् द्वारा ही किया जा सकता है। *चैतन्य-चरितामृत* की चर्चा से हम समझ सकते हैं कि विभिन्न युगों में भगवान् विभिन्न प्रणालियों तथा विभिन्न धर्मों का प्रवर्तन करते हैं। इस कलियुग में, कृष्ण के एकमात्र अवतार श्री चैतन्य महाप्रभु हैं, जिन्होंने कलियुग के धर्म—हरे कृष्ण

महामंत्र के कीर्तन का प्रवर्तन किया : हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण, हरे हरे / हरे राम, हरे राम, राम राम, हरे हरे।

सर्वज्ञ मुनिर वाक्य—शास्त्र-'परमाण' ।
आमा-सवा जीवेर हय शास्त्र-द्वारा 'ज्ञान' ॥३५३॥

सर्वज्ञ मुनिर वाक्य—शास्त्र-'परमाण' ।
आमा-सबा जीवेर हय शास्त्र-द्वारा 'ज्ञान' ॥ ३५३ ॥

सर्व-ज्ञ मुनिर वाक्य—सर्वज्ञ मुनि (व्यासदेव) के वचन; **शास्त्र-परमाण**—प्रामाणिक शास्त्रों के प्रमाण हैं; **आमा-सबा**—हम सभी; **जीवेर**—बद्ध जीवों का; **हय**—होता है; **शास्त्र-द्वारा**—प्रामाणिक शास्त्रों के माध्यम से; **ज्ञान**—ज्ञान।

अनुवाद

"सर्वज्ञ महामुनि व्यासदेव द्वारा रचित वैदिक ग्रन्थ सारे आध्यात्मिक अस्तित्व के प्रमाण हैं। इन्हीं प्रामाणिक शास्त्रों के द्वारा सारे बद्धजीव ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

तात्पर्य

मूर्ख लोग उनके दिमाग में कुछ गढ़ करके ज्ञान की कल्पना करने का प्रयास करते हैं। किन्तु यह ज्ञान की सही विधि नहीं है। ज्ञान तो *शब्द प्रमाण* होता है—वैदिक साहित्य से प्राप्त प्रमाण होता है। श्रील व्यासदेव महामुनि कहलाते हैं। वे वेदव्यास भी कहलाते हैं, क्योंकि उन्होंने अनेक शास्त्रों की रचना की है। उन्होंने वेदों के चार विभाग किये—*साम, ऋग्, यजुर्* तथा *अथर्व*। उन्होंने वेदों का विस्तार अठारह पुराणों में किया है और वैदिक ज्ञान का सार *वेदान्त-सूत्र* में दिया है। उन्होंने *महाभारत* की भी रचना की, जिसे पंचम वेद कहा जाता है। महाभारत में ही *भगवद्गीता* निहित है। इसलिए *भगवद्गीता* भी वैदिक ग्रन्थ (*स्मृति*) है। कुछ वैदिक ग्रन्थ *श्रुति* कहलाते हैं और कुछ *स्मृतियाँ* कहलाते हैं। श्रील रूप गोस्वामी ने *भक्तिरसामृतसिन्धु* (१.२.१०१) में संस्तुति की है :

श्रुति-स्मृति-पुराणादिपञ्चरात्रविधिं विना।
ऐकान्तिकी हरेर्भक्तिरुत्पातायैव कल्पते॥

शास्त्रों (श्रुति, स्मृति तथा पुराणादि) का निर्देश किये बिना मनुष्य का आध्यात्मिक कार्य समाज को केवल विचलित करने वाला है। चूँकि लोगों को रोकने वाला न कोई राजा है, न सरकार, इसलिए आध्यात्मिक ज्ञान के मामले में समाज में विषम स्थिति उत्पन्न हो चुकी है। इस विषम स्थिति का लाभ उठाते हुए अनेक धूर्त प्रकट हो गये हैं, जो अपने आपको ईश्वर का अवतार घोषित करते हैं। फलस्वरूप सारे लोग पापमय कार्यों में यथा अवैध सम्बन्ध, नशा, जुआ खेलने तथा मांसाहार में लिप्त रहते हैं। ऐसे अनेक पापियों में से अनेक तथाकथित ईश्वर के अवतार प्रकट हो रहे हैं। यह अत्यन्त शोचनीय स्थिति है, विशेषतया भारत में।

अवतार नाहि कहे—'आमि अवतार' ।
मुनि सब जानि' करे लक्षण-विचार ॥ ३५४॥

अवतार नाहि कहे—'आमि अवतार' ।
मुनि सब जानि' करे लक्षण-विचार ॥ ३५४॥

अवतार—भगवान् का वास्तविक अवतार; **नाहि**—कभी नहीं; **कहे**—कहता है; **आमि अवतार**—मैं अवतार हूँ; **मुनि**—महान् सन्त महामुनि व्यासदेव; **सब जानि'**—सब (भूत, वर्तमान, तथा भविष्य) जानकर; **करे लक्षण-विचार**—अवतारों के लक्षण बताते हैं।

अनुवाद

"ईश्वर का वास्तविक अवतार यह कभी नहीं कहता कि, 'मैं ईश्वर हूँ' या 'मैं ईश्वर का अवतार हूँ।' महामुनि व्यासदेव ने यह सब जानते हुए पहले से शास्त्रों में अवतारों के लक्षण अंकित कर दिये हैं।

तात्पर्य

इस श्लोक में स्पष्ट कहा गया है कि ईश्वर का सच्चा अवतार अपने आपको वास्तविक अवतार कभी नहीं कहता। शास्त्र में वर्णित लक्षणों के अनुसार ही यह जाना जा सकता है कि कौन अवतार है और कौन नहीं है।

यस्यावतारा ज्ञायन्ते शरीरेष्वशरीरिणः ।
तैस्तैरतुल्यातिशयैर्वीर्यैर्देहिष्वसङ्गतैः ॥ ३५५॥

यस्यावतारा ज्ञायन्ते शरीरेष्वशरीरिणः ।
तैस्तैरतुल्यातिशयैर्वीर्यैर्देहिष्वसङ्गतैः ॥ ३५५ ॥

यस्य—जिनके; **अवतारा:**—अवतार; **ज्ञायन्ते**—जाने जा सकते हैं; **शरीरिषु**—जीवों के बीच; **अशरीरिणः**—भौतिक देह रहित परम भगवान् के; **तैः तैः**—उन सभी; **अतुल्य**—अतुलनीय; **अतिशयैः**—असाधारण; **वीर्यैः**—तेज द्वारा; **देहिषु**—जीवों के बीच; **असङ्गतैः**—असम्भव।

अनुवाद

"'भगवान् का शरीर भौतिक नहीं होता, फिर भी वे अपने दिव्य शरीर में अवतार के रूप में मनुष्यों के बीच आते हैं। अतः यह समझना अत्यन्त कठिन है कि कौन अवतार है। वे कुछ तो अपने अद्वितीय शौर्य से तथा कुछ उन असाधारण कार्यों से, जो देहधारी जीवों के लिए असम्भव हैं, जाने जाते हैं कि वे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के अवतार हैं।'

तात्पर्य

यह उद्धरण *श्रीमद्भागवत* (१०.१०.३४) का है।

'स्वरूप'-लक्षण, आर 'तटस्थ-लक्षण' ।
एइ दुइ लक्षणे 'वस्तु' जाने मुनि-गण ॥ ३५६ ॥

'स्वरूप'-लक्षण, आर 'तटस्थ-लक्षण' ।
एइ दुइ लक्षणे 'वस्तु' जाने मुनि-गण ॥ ३५६ ॥

स्वरूप-लक्षण—स्वरूप लक्षण; **आर**—तथा; **तटस्थ-लक्षण**—तटस्थ लक्षण; **एइ दुइ लक्षणे**—इन दो लक्षणों द्वारा; **वस्तु**—वस्तु; **जाने**—एक वस्तु को जानते हैं; **मुनि-गण**—मुनिजन।

अनुवाद

"बड़े-बड़े मुनि किसी वस्तु को दो लक्षणों से जान पाते हैं—स्वरूप-लक्षणों तथा तटस्थ लक्षणों से।

आकृति, प्रकृति, स्वरूप,——स्वरूप-लक्षण ।
कार्य-द्वारा ज्ञान,——एई तटस्थ-लक्षण ॥ ३५७ ॥

आकृति, प्रकृति, स्वरूप,—स्वरूप-लक्षण ।
कार्य्य-द्वारा ज्ञान,—एइ तटस्थ-लक्षण ॥ ३५७॥

आकृति—शरीर का आकार; **प्रकृति**—स्वभाव; **स्वरूप**—रूप; **स्वरूप-लक्षण**—स्वरूप लक्षण; **कार्य्य-द्वारा**—कार्यों द्वारा; **ज्ञान**—ज्ञान होता है; **एइ**—यह; **तटस्थ-लक्षण**—तटस्थ लक्षण है।

अनुवाद

"आकृति (शारीरिक लक्षण), प्रकृति (स्वभाव) तथा रूप—ये निजी लक्षण हैं। प्रभु के कार्यकलापों का ज्ञान तटस्थ लक्षण प्रस्तुत करता है।

ভাগবতারম্ভে ব্যাস মঙ্গলাচরণে ।
'পরমেশ্বর' নিরূপিল এই দুই লক্ষণে ॥ ৩৫৮॥

भागवतारम्भे व्यास मङ्गलाचरणे ।
'परमेश्वर' निरूपिल एइ दुइ लक्षणे ॥ ३५८॥

भागवत-आरम्भे—*श्रीमद्भागवत* के प्रारम्भ में; **व्यास**—महान् लेखक व्यासदेव ने; **मङ्गल-आचरणे**—मंगलाचरण में; **परम-ईश्वर**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का; **निरूपिल**—वर्णन किया है; **एइ दुइ लक्षणे**—स्वरूप तथा तटस्थ नामक दो लक्षणों द्वारा।

अनुवाद

"श्रीमद्भागवत के मंगलाचरण में श्रील वेदव्यास ने पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का वर्णन इन्हीं लक्षणों द्वारा किया है।

জন্মাদ্যস্য যতোঽন্বয়াদিতরতশ্চার্থেষ্বভিজ্ঞঃ স্বরাট্
তেনে ব্রহ্ম হৃদা য আদি-কবয়ে মুহ্যন্তি যৎসূরয়ঃ ।
তেজো-বারি-মৃদাং যথা বিনিময়ো যত্র ত্রিসর্গোঽমৃষা
ধাম্না স্বেন সদা নিরস্ত-কুহকং সত্যং পরং ধীমহি ॥ ৩৫৯॥

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्
तेने ब्रह्म हृदा य आदि-कवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ।
तेजो-वारि-मृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा
धाम्ना स्वेन सदा निरस्त-कुहकं सत्यं परं धीमहि ॥ ३५९॥

जन्म-आदि—सृष्टि, पालन तथा विनाश; **अस्य**—इसके (जगत् के); **यतः**—जिनसे; **अन्वयात्**—आध्यात्मिक सम्बन्ध द्वारा प्रत्यक्ष रूप से; **इतरतः**—अप्रत्यक्ष रूप से, भौतिक सम्पर्क के अभाव से; **च**—तथा; **अर्थेषु**—सभी उद्देश्यों में; **अभिज्ञः**—पूर्ण रूप से अवगत; **स्व-राट्**—पूर्ण रूप से स्वतन्त्र; **तेने**—प्रदान किया; **ब्रह्म**—परम सत्य; **हृदा**—हृदय के माध्यम से; **यः**—जो; **आदि-कवये**—ब्रह्माजी को; **मुह्यन्ति**—मोहित होते हैं; **यत्**—जिनके विषय में; **सूरयः**—ब्रह्मा जैसे महापुरुष तथा अन्य देवता या महान् ब्राह्मण; **तेजः-वारि-मृदाम्**—अग्नि, जल, पृथ्वी; **यथा**—जिस प्रकार; **विनिमयः**—क्रिया-प्रतिक्रिया; **यत्र**—जहाँ पर; **त्रिसर्गः**—सृष्टि के तीन गुण, सृष्टिकारी शक्तियाँ; **अमृषा**—वास्तविक; **धाम्ना**—समस्त दिव्य सामग्री के साथ; **स्वेन**—स्वयं से; **सदा**—सदैव; **निरस्त-कुहकम्**—समस्त मोह से रहित; **सत्यम्**—सत्य को; **परम्**—परम; **धीमहि**—मैं ध्यान करता हूँ।

अनुवाद

'"हे प्रभु, हे वसुदेव-पुत्र श्रीकृष्ण, हे सर्वव्यापी भगवान्, मैं आपको सादर नमस्कार करता हूँ। मैं भगवान् श्रीकृष्ण का ध्यान करता हूँ, क्योंकि वे परम सत्य हैं और व्यक्त ब्रह्माण्डों की उत्पत्ति, पालन तथा संहार के समस्त कारणों के आदि कारण हैं। वे प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से सारे प्राकट्यों से अवगत रहते हैं और वे परम स्वतन्त्र हैं, क्योंकि उनसे परे अन्य कोई कारण है ही नहीं। उन्होंने ही सर्वप्रथम आदि जीव ब्रह्माजी के हृदय में वैदिक ज्ञान प्रदान किया। उन्हीं के कारण बड़े-बड़े मुनि तथा देवता उसी तरह मोह में पड़ जाते हैं, जिस प्रकार अग्नि में जल या जल में स्थल देखकर कोई माया के द्वारा मोहग्रस्त हो जाता है। उन्हीं के कारण ये सारे भौतिक ब्रह्माण्ड, जो प्रकृति के तीन गुणों की प्रतिक्रिया के कारण अस्थायी रूप से प्रकट होते हैं, वास्तविक लगते हैं जबकि ये अवास्तविक होते हैं। अतः मैं उन भगवान् श्रीकृष्ण का ध्यान करता हूँ, जो भौतिक जगत के भ्रामक रूपों से सर्वथा मुक्त अपने दिव्य धाम में निरन्तर वास करते हैं। मैं उनका ध्यान करता हूँ, क्योंकि वे ही परम सत्य हैं।'

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१.१.१) से लिया गया है। यह *श्रीमद्भागवत* को *जन्माद्यस्य यतः* शब्दों के द्वारा *वेदान्त-सूत्र* से जोड़ने वाला है। इसमें

बतलाया गया है कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् वासुदेव भौतिक सृष्टि से परे परम सत्य हैं। इसे सारे आचार्यों ने स्वीकार किया है। यहाँ तक कि सर्वोच्च निर्विशेषवादी शंकराचार्य ने *भगवद्गीता* के भाष्य में कहा है : *नारायण: परोऽव्यक्तात्।* जब यह भौतिक सृष्टि महत् तत्त्व से प्रकट नहीं हुई रहती, तब *अव्यक्त* कहलाती है और जब यह समग्र शक्ति से प्रदर्शित होती है, तो *व्यक्त* कहलाती है। पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् नारायण इस *व्यक्त-अव्यक्त* से परे हैं। जब पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कोई विशेष अवतार धारण करते हैं, तो यही उनका प्रधान गुण होता है। कृष्ण अर्जुन को बतलाते हैं कि यद्यपि वे दोनों इसके पूर्व अनेक बार जन्म ले चुके हैं, किन्तु कृष्ण को अपने पूर्वजन्मों का स्मरण है, जबकि अर्जुन को कुछ भी स्मरण नहीं है। चूँकि कृष्ण इस विराट् सृष्टि से परे हैं, अतएव उन्हें भूतकाल की सारी बातें स्मरण हैं। इस विराट् सृष्टि में हर एक को भौतिक शरीर मिला होता है, किन्तु कृष्ण भौतिक सृष्टि से पर होने के कारण उनका शरीर सदैव आध्यात्मिक होता है। उन्होंने ब्रह्मा के हृदय में वैदिक ज्ञान प्रदान किया। यद्यपि ब्रह्मा इस ब्रह्माण्ड के भीतर सबसे महत्त्वपूर्ण और उन्नत पुरुष हैं, किन्तु उन्हें इसका स्मरण नहीं था कि अपने विगत जीवन में उन्होंने क्या-क्या किया। अत: कृष्ण को उनके हृदय के भीतर से स्मरण दिलाना पड़ा। इस तरह प्रेरित होकर ब्रह्मा ने अखिल ब्रह्माण्ड की रचना की। भूतकाल के विषय में हर बात स्मरण रखना तथा सृष्टि करने के लिए ब्रह्मा को प्रेरित करना ये *स्वरूप-लक्षण* तथा *तटस्थ-लक्षण* के ज्वलन्त उदाहरण हैं।

এই শ্লোকে 'পরং'-শব্দে 'কৃষ্ণ'-নিরূপণ ।
'সত্যং' শব্দে কহে তাঁর স্বরূপ-লক্ষণ ॥৩৬০॥

एइ श्लोके 'परं'-शब्दे 'कृष्ण'-निरूपण ।
'सत्यं' शब्दे कहे ताँर स्वरूप-लक्षण ॥ ३६० ॥

एइ श्लोके—इस श्लोक में; **परम्-शब्दे**—*परम* शब्द द्वारा; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण का; **निरूपण**—वर्णन किया गया है; **सत्यम् शब्दे**—*सत्यम्* शब्द द्वारा; **कहे**—प्रदर्शित है; **ताँर**—उनका; **स्वरूप-लक्षण**—स्वरूप लक्षण।

अनुवाद

"श्रीमद्भागवत के इस मंगलाचरण में 'परम्' शब्द पूर्ण पुरुषोत्तम

भगवान् कृष्ण का सूचक है और 'सत्यम्' शब्द उनके स्वरूप-लक्षण को बतलाता है।

বিশ্ব-সৃষ্ট্যাদি কৈল, বেদ ব্রহ্মাকে পড়াইল ।
অর্থাভিজ্ঞতা, স্বরূপ-শক্ত্যে মায়া দূর কৈল ॥৩৬১॥

विश्व-सृष्ट्यादि कैल, वेद ब्रह्माके पड़ाइल ।
अर्थाभिज्ञता, स्वरूप-शक्त्ये माया दूर कैल ॥ ३६१ ॥

विश्व-सृष्टि-आदि—भौतिक दृश्यजगत् की सृष्टि, पालन तथा विनाश; **कैल**—किये; **वेद**—वैदिक ज्ञान; **ब्रह्माके**—ब्रह्माजी को; **पड़ाइल**—सिखाया; **अर्थ-अभिज्ञता**—भूत, वर्तमान तथा भविष्य का सम्पूर्ण ज्ञान; **स्वरूप-शक्त्ये**—अपनी स्वरूप शक्ति द्वारा; **माया**—माया शक्ति से; **दूर कैल**—दूर किया।

अनुवाद

"इसी श्लोक में यह भी कहा गया है कि भगवान् इस विराट् जगत् के स्त्रष्टा, पालक तथा संहारक हैं और उन्होंने ब्रह्मा को वेदों का ज्ञान प्रदान करके ब्रह्माण्ड की रचना करने के लिए प्रेरित किया। यह भी कहा गया है कि भगवान् को पूर्ण प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष ज्ञान है, वे भूत, वर्तमान तथा भविष्य को जानने वाले हैं और उनकी निजी शक्ति माया से अलग है।

এই সব কার্য—তাঁর তটস্থ-লক্ষণ ।
অন্য অবতার ঐছে জানে মুনি-গণ ॥৩৬২॥

एइ सब कार्य्य—ताँर तटस्थ-लक्षण ।
अन्य अवतार ऐछे जाने मुनि-गण ॥ ३६२ ॥

एइ सब कार्य्य—ये सारे कार्यकलाप; **ताँर**—उनके; **तटस्थ-लक्षण**—तटस्थ लक्षण; **अन्य अवतार**—अन्य अवतार; **ऐछे**—इसी प्रकार; **जाने**—जानते हैं; **मुनि-गण**—व्यासदेव जैसे महान् साधु।

अनुवाद

"ये सारे कार्यकलाप ही उनके तटस्थ-लक्षण हैं। महान् मुनि लोग स्वरूप तथा तटस्थ लक्षणों के संकेतों से ही पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के

अवतारों को जान पाते हैं। कृष्ण के सारे अवतारों को इसी तरह से समझना होगा।

अवतार-काले हय जगते गोचर ।
एइ दुइ लक्षणे केह जानये ईश्वर'' ॥ ३६३॥
अवतार-काले हय जगते गोचर ।
एइ दुइ लक्षणे केह जानये ईश्वर" ॥ ३६३॥

अवतार-काले—अवतार के समय; **हय**—होते हैं; **जगते**—संसार में; **गोचर**—प्रकट; **एइ दुइ लक्षणे**—इन्हीं दो लक्षणों द्वारा; **केह**—कुछ लोग; **जानये**—जानते हैं; **ईश्वर**—परम भगवान् के अवतार को।

अनुवाद

"भगवान् के अवतार प्रकट होने के समय जगत-भर में विख्यात हो जाते हैं, क्योंकि लोग अवतार के मुख्य लक्षण, जिन्हें स्वरूप तथा तटस्थ कहा जाता है, जानने के लिए शास्त्रों को देखते हैं। इस तरह ये अवतार मुनियों द्वारा जाने जाते हैं।"

सनातन कहे,—''याते ईश्वर-लक्षण ।
पीत-वर्ण, कार्य—प्रेम-दान-सङ्कीर्तन ॥ ३६४॥
सनातन कहे,—"याते ईश्वर-लक्षण ।
पीत-वर्ण, कार्य—प्रेम-दान-सङ्कीर्तन ॥ ३६४॥

सनातन कहे—सनातन ने कहा; **याते**—जिसमें; **ईश्वर-लक्षण**—भगवान् के लक्षण प्रकट होते हैं; **पीत-वर्ण**—पीला रंग; **कार्य**—कार्यकलाप; **प्रेम-दान**—भगवत्प्रेम का दान करना; **सङ्कीर्तन**—तथा भगवान् के पवित्र नाम का संकीर्तन करते हैं।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी ने कहा, "जिस पुरुष में भगवान् के लक्षण पाये जाते हैं, उसका रंग पीला है। उसके कार्यकलापों में भगवत्प्रेम वितरण तथा भगवन्नाम का कीर्तन सम्मिलित हैं।

কলি-কালে সেই 'কৃষ্ণাবতার' নিশ্চয় ।
সুদৃঢ় করিয়া কহ, যাউক সংশয়'' ॥৩৬৫॥

कलि-काले सेइ 'कृष्णावतार' निश्चय ।
सुदृढ़ करिया कह, याउक संशय" ॥ ३६५॥

कलि-काले—कलियुग में; **सेइ**—वही; **कृष्ण-अवतार**—कृष्ण के अवतार; **निश्चय**—अवश्य; **सु-दृढ़ करिया**—भलीभाँति; **कह**—कृपया मुझे बताइये; **याउक संशय**—ताकि सभी संशय समाप्त हो जायें।

अनुवाद

"इस युग में कृष्ण के अवतार का संकेत इन्हीं लक्षणों से मिलता है। कृपया इसकी पुष्टि अवश्य करें, जिससे मेरे सारे सन्देह दूर हो सकें।"

तात्पर्य

सनातन गोस्वामी इस तथ्य की पुष्टि चाहते थे कि इस युग में श्री चैतन्य महाप्रभु ही कृष्ण के अवतार हैं। शास्त्र के अनुसार कलियुग में भगवान् सुनहरा या पीत वर्ण धारण करेंगे और वे कृष्ण-प्रेम तथा संकीर्तन-आन्दोलन का वितरण करेंगे। शास्त्र तथा सन्त जनों के अनुसार ये गुण श्री चैतन्य महाप्रभु में सुस्पष्ट थे। अतः यह स्पष्ट था कि श्री चैतन्य महाप्रभु कृष्ण के अवतार थे। इसकी पुष्टि शास्त्रों द्वारा की गई है और उनके लक्षणों को मुनियों ने स्वीकार किया है। चूँकि श्री चैतन्य महाप्रभु सनातन गोस्वामी के तर्कों से बच नहीं सके, इसलिए वे इस बात पर मौन रह गये, जिसका अर्थ यह हुआ कि उन्होंने अप्रत्यक्ष रीति से सनातन के कथन को स्वीकार कर लिया। इससे हम यह स्पष्ट जान पाते हैं कि श्री चैतन्य महाप्रभु भगवान् कृष्ण के प्रत्यक्ष अवतार थे।

প্রভু কহে,—চতুরালি ছাদ, সনাতন ।
শক্ত্যাবেশাবতারের শুন বিবরণ ॥৩৬৬॥

प्रभु कहे,—चतुरालि छाड़, सनातन ।
शक्त्यावेशावतारेर शुन विवरण ॥ ३६६॥

प्रभु कहे—श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया; **चतुरालि**—अति चतुराईपूर्ण तर्क; **छाड़**—छोड़ दो; **सनातन**—हे सनातन; **शक्ति-आवेश-अवतारेर**—विशेष रूप से शक्ति प्राप्त अवतारों के बारे में; **शुन**—सुनो; **विवरण**—वर्णन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने उत्तर दिया, "हे सनातन, तुम अपनी चतुराई छोड़ो। अब तुम शक्त्यावेश अवतार का विवरण समझने का प्रयत्न करो।

शक्त्यावेशावतार कृष्णेर असङ्ख्य गणन ।
दिग्दरशन करि मुख्य मुख्य जन ॥ ३६७॥

शक्त्यावेशावतार कृष्णेर असङ्ख्य गणन ।
दिग्दरशन करि मुख्य मुख्य जन ॥ ३६७॥

शक्ति-आवेश-अवतार—भगवान् के द्वारा शक्ति से आवेशित किये गये अवतार; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **असङ्ख्य गणन**—अनन्त तथा असंख्य; **दिक्-दरशन करि**—उनमें से कुछ का वर्णन करता हूँ; **मुख्य मुख्य जन**—उनमें से मुख्य।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण के शक्त्यावेश अवतार असंख्य हैं। मैं उनमें से मुख्य-मुख्य अवतारों का वर्णन करता हूँ।

शक्त्यावेश दुई-रूप—'मुख्य', 'गौण' देखि ।
साक्षाच्छक्त्ये 'अवतार', आभासे 'विभूति' लिखि ॥ ३६८॥

शक्त्यावेश दुइ-रूप—'मुख्य', 'गौण' देखि ।
साक्षात्शक्त्ये 'अवतार', आभासे 'विभूति' लिखि ॥ ३६८॥

शक्ति-आवेश—शक्त्यावेश अवतार; **दुइ-रूप**—दो श्रेणी के; **मुख्य**—मुख्य; **गौण**—गौण; **देखि**—मैं देखता हूँ; **साक्षात्-शक्त्ये**—जब साक्षात् शक्ति हो; **अवतार**—वे अवतार कहलाते हैं; **आभासे**—जब आभास होता है; **विभूति लिखि**—वे विभूति कहलाते हैं, या विशेष कृपाप्राप्त कहलाते हैं।

अनुवाद

"शक्त्यावेश अवतार दो प्रकार के हैं—मुख्य तथा गौण। मुख्य वे हैं, जिन्हें पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सीधे शक्ति प्रदान करते हैं और वे अवतार कहलाते हैं। गौण वे हैं, जिन्हें पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् अप्रत्यक्ष रूप से शक्ति प्रदान करते हैं और तब वे विभूति कहलाते हैं।

'सनकादि', 'नारद', 'पृथु' 'परশুরাম' ।
জীব-রূপ 'ব্রহ্মার' আবেশাবতার-নাম ॥৩৬৯॥

'सनकादि', 'नारद', 'पृथु' 'परशुराम' ।
जीव-रूप 'ब्रह्मार' आवेशावतार-नाम ॥ ३६९ ॥

सनक-आदि—चार कुमार; **नारद**—नारद; **पृथु**—पृथु महाराज; **परशुराम**—परशुराम; **जीव-रूप**—जीवात्मा के रूप में; **ब्रह्मार**—ब्रह्माजी के; **आवेश-अवतार-नाम**—ये सभी आवेशावतार कहलाते हैं।

अनुवाद

"कुछ शक्त्यावेश अवतार इस प्रकार हैं—चार कुमार, नारद, महाराज पृथु तथा परशुराम। जब किसी जीव को ब्रह्मा जैसा कार्य करने के लिए शक्ति प्रदान की जाती है, तब वह भी शक्त्यावेश अवतार माना जाता है।

বৈকুণ্ঠে 'শেষ'—ধরা ধরয়ে 'অনন্ত' ।
এই মুখ্যাবেশাবতার—বিস্তারে নাহি অন্ত ॥৩৭০॥

वैकुण्ठे 'शेष'—धरा धरये 'अनन्त' ।
एइ मुख्यावेशावतार—विस्तारे नाहि अन्त ॥ ३७० ॥

वैकुण्ठे—आध्यात्मिक जगत् में; **शेष**—भगवान् शेष; **धरा धरये**—असंख्य लोकों को धारण करते हैं; **अनन्त**—अनन्त; **एइ**—ये; **मुख्य-आवेश-अवतार**—मुख्य साक्षात् शक्त्यावेश अवतार हैं; **विस्तारे**—उनका विस्तार करने की; **नाहि**—नहीं है; **अन्त**—सीमा।

अनुवाद

"वैकुण्ठ लोक में भगवान् शेष तथा भौतिक जगत् में अपने फनों पर असंख्य लोकों को धारण करने वाले भगवान् अनन्त—ये दोनों मुख्य शक्त्यावेश अवतार हैं। अन्यों को गिनने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उनकी संख्या अनन्त है।

সনকাদ্যে 'জ্ঞান'-শক্তি, নারদে শক্তি 'ভক্তি' ।
ব্রহ্মায় 'সৃষ্টি'-শক্তি, অনন্তে 'ভূ-ধারণ'-শক্তি ॥৩৭১॥

सनकाद्ये 'ज्ञान'-शक्ति, नारदे शक्ति 'भक्ति' ।
ब्रह्माय 'सृष्टि'-शक्ति, अनन्ते 'भू-धारण'-शक्ति ॥ ३७१ ॥

सनक-आद्ये—चार कुमारों में; **ज्ञान-शक्ति**—ज्ञान की शक्ति; **नारदे**—नारद मुनि में; **शक्ति**—शक्ति; **भक्ति**—भक्ति की; **ब्रह्माय**—ब्रह्माजी में; **सृष्टि-शक्ति**—सृष्टि रचना की शक्ति; **अनन्ते**—भगवान् अनन्त में; **भू-धारण-शक्ति**—लोकों को धारण करने की शक्ति।

अनुवाद

"चारों कुमारों में ज्ञानशक्ति निहित की गई थी और नारद में भक्ति की शक्ति निहित की गई थी। सृजन करने की शक्ति ब्रह्माजी में निहित की गई थी तथा असंख्य लोकों को धारण करने की शक्ति भगवान् अनन्त में निहित की गई थी।

शेषे 'स्व-सेवन'-शक्ति, पृथुते 'पालन' ।
परशुरामे 'दुष्ट-नाशक-वीर्य-सञ्चारण' ॥ ३७२ ॥
शेषे 'स्व-सेवन'-शक्ति, पृथुते 'पालन' ।
परशुरामे 'दुष्ट-नाशक-वीर्य्य-सञ्चारण' ॥ ३७२ ॥

शेषे—भगवान् शेष में; **स्व-सेवन शक्ति**—स्वयं भगवान् की सेवा करने की शक्ति; **पृथुते**—महाराज पृथु में; **पालन**—शासन करने की शक्ति; **परशुरामे**—परशुराम में; **दुष्ट-नाशक-वीर्य्य**—दुष्टों तथा दुराचारियों का नाश करने की असाधारण शक्ति; **सञ्चारण**—संचारित करते हैं।

अनुवाद

"पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने व्यक्तिगत सेवा करने की शक्ति भगवान् शेष को प्रदान की और पृथ्वी पर शासन करने की शक्ति राजा पृथु को। भगवान् परशुराम को सारे दुष्टों तथा धूर्तों का वध करने की शक्ति प्राप्त हुई थी।

तात्पर्य

भगवद्गीता (४.८) में कृष्ण कहते हैं—*परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम।* कभी-कभी भगवान् शासन करने के लिए अपनी शक्ति पृथु जैसे राजा में निहित करते हैं और ऐसे राजा को सक्षम बनाते हैं कि वह दुष्टों तथा

धूर्तों का वध करे। वे परशुराम जैसे अवतारों में भी अपनी शक्ति निहित करते हैं।

ज्ञान-शक्त्यादि-कलया यत्राविष्टो जनार्दनः ।
त आवेशा निगद्यन्ते जीवा एव महत्तमाः ॥३७३॥

ज्ञान-शक्त्यादि-कलया यत्राविष्टो जनार्दनः ।
त आवेशा निगद्यन्ते जीवा एव महत्तमाः ॥ ३७३ ॥

ज्ञान-शक्ति-आदि-कलया—ज्ञान, प्रेमभक्ति, सृष्टि, सेवा, भौतिक जगत् का शासन, विभिन्न लोकों को धारण करना, दुष्टों का संहार आदि शक्ति की कला द्वारा; **यत्र**—जहाँ; **आविष्टः**—प्रवेश करते हैं; **जनार्दनः**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्, विष्णु; **ते**—वे; **आवेशाः**—शक्ति प्राप्त; **निगद्यन्ते**—कहलाते हैं; **जीवाः**—जीवात्माएँ; **एव**—यद्यपि; **महत्-तमाः**—अत्यन्त महान् भक्त होते हैं।

अनुवाद

"'जब-जब भगवान् अपनी विविध शक्तियों के अंश रूप में किसी में विद्यमान रहते हैं, तब वह जीव शक्त्यावेश अवतार कहलाता है।

तात्पर्य

यह श्लोक *लघु भागवतामृत* (१.१८) में पाया जाता है।

'विभूति' कहिये यैछे गीता-एकादशे ।
जगत्व्यापिल कृष्ण-शक्त्याभासावेशे ॥३७४॥

'विभूति' कहिये यैछे गीता-एकादशे ।
जगत्व्यापिल कृष्ण-शक्त्याभासावेशे ॥ ३७४ ॥

विभूति—विशेष शक्ति; **कहिये**—हम कहते हैं; **यैछे**—जिस प्रकार; **गीता**—*भगवद्गीता* के; **एकादशे**—ग्यारहवें अध्याय में; **जगत्**—सम्पूर्ण विश्व में; **व्यापिल**—वे व्याप्त हो गये; **कृष्ण-शक्ति-आभास-आवेशे**—अपनी शक्ति के आभास द्वारा।

अनुवाद

"जैसाकि भगवद्गीता के ग्यारहवें अध्याय में बताया गया है, कृष्ण ने सारे ब्रह्माण्ड में अपना विस्तार विभूति नामक अपनी विशिष्ट शक्तियों के माध्यम से अनेक पुरुषों में किया है।

तात्पर्य

विशेष माया शक्तियों के विस्तार की व्याख्या *श्रीमद्भागवत* (२.७.३९) में हुई है।

यद् यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोऽश-सम्भवम् ॥ ३७५॥

यद् यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोऽंश-सम्भवम् ॥ ३७५॥

यत् यत्—जो भी और जहाँ भी; **विभूति-मत्**—असाधारण ऐश्वर्य; **सत्त्वम्**—जीवात्मा; **श्री-मत्**—सम्पत्ति से पूर्ण; **ऊर्जितम्**—शक्ति से पूर्ण; **एव**—निश्चित ही; **वा**—अथवा; **तत् तत्**—वहाँ; **एव**—अवश्य; **अवगच्छ**—जान लो; **त्वम्**—तुम; **मम**—मेरी; **तेजः**—शक्ति के; **अंश**—अंश का; **सम्भवम्**—प्रदर्शन।

अनुवाद

'"यह जान लो कि समस्त ऐश्वर्यशाली सुन्दर, यशस्वी तथा महिमायुक्त सृष्टियाँ मेरे तेज के स्फुलिंग मात्र से प्रकट होती हैं।

तात्पर्य

यह *भगवद्गीता* (१०.४१) में श्रीकृष्ण का कथन है।

अथ वा बहूनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ ३७६॥

अथ वा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ ३७६॥

अथ वा—अथवा; **बहुना**—अधिक; **एतेन**—इससे; **किम्**—क्या लाभ है; **ज्ञातेन**—जानकर; **तव**—तुम्हारे द्वारा; **अर्जुन**—हे अर्जुन; **विष्टभ्य**—व्याप्त; **अहम्**—मैं; **इदम्**—इस; **कृत्स्नम्**—सम्पूर्ण; **एक-अंशेन**—एक अंश के साथ; **स्थितः**—स्थित; **जगत्**—विश्व।

अनुवाद

'"किन्तु हे अर्जुन, इस समस्त विस्तृत ज्ञान की क्या आवश्यकता है? मैं तो अपने एक अंश-मात्र से इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त हूँ और इसको आश्रय देता हूँ।'

तात्पर्य

यह भी *भगवद्गीता* (१०.४२) में कृष्ण का कथन है।

এইত কহিলুঁ শক্ত্যাবেশ-অবতার ।
বাল্য-পৌগণ্ড-ধর্মের শুনহ বিচার ॥৩৭৭॥

एइत कहिलुँ शक्त्यावेश-अवतार ।
बाल्य-पौगण्ड-धर्मेर शुनह विचार ॥ ३७७ ॥

एइत—इस प्रकार; **कहिलुँ**—मैंने वर्णन किया है; **शक्ति-आवेश-अवतार**—शक्ति आविष्ट अवतारों का; **बाल्य**—बाल्यकाल में; **पौगण्ड**—पौगण्ड अवस्था; **धर्मेर**—लक्षणों का; **शुनह**—अब सुनो; **विचार**—विचार।

अनुवाद

"इस तरह मैं विशेष रूप से शक्त्याविष्ट अवतारों का वर्णन कर चुका हूँ। अब मुझसे कृष्ण के बाल्यकाल, पौगण्ड तथा युवावस्था (किशोर) के लक्षणों को सुनो।

কিশোর-শেখর-ধর্মী ব্রজেন্দ্র-নন্দন ।
প্রকট-লীলা করিবারে যবে করে মন ॥৩৭৮॥

किशोर-शेखर-धर्मी व्रजेन्द्र-नन्दन ।
प्रकट-लीला करिबारे य़बे करे मन ॥ ३७८ ॥

किशोर-शेखर—युवावस्था का चरम; **धर्मी**—जिनकी स्वाभाविक स्थिति; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—महाराज नन्द के पुत्र; **प्रकट-लीला**—प्रकट लीलाएँ; **करिबारे**—करने के लिए; **य़बे**—जब; **करे**—करते हैं; **मन**—इच्छा।

अनुवाद

"महाराज नन्द के पुत्र के रूप में भगवान् कृष्ण स्वभावतः आदर्श किशोर (युवक) हैं। वे इस अवस्था में अपनी लीलाएँ प्रकट करना चाहते हैं।

আদৌ প্রকট করায় মাতা-পিতা—ভক্ত-গণে ।
পাছে প্রকট হয় জন্মাদিক-লীলা-ক্রমে ॥৩৭৯॥

आदौ प्रकट कराय माता-पिता—भक्त-गणे ।
पाछे प्रकट हय जन्मादिक-लीला-क्रमे ॥ ३७९ ॥

आदौ—पहले; **प्रकट**—प्रकट; **कराय**—वे करते हैं; **माता-पिता**—अपने माता तथा पिता को; **भक्त-गणे**—भक्तों को; **पाछे**—उसके बाद; **प्रकट हय**—प्रकट होते हैं; **जन्म-आदिक-लीला-क्रमे**—क्रमपूर्वक जन्म आदि लीलाएँ करके।

अनुवाद

"स्वयं प्रकट होने के पूर्व भगवान् अपने कुछ भक्तों को अपने माता, पिता तथा घनिष्ठ संगियों के रूप में प्रकट होने देते हैं। इसके बाद वे इस तरह प्रकट होते हैं, मानो जन्म ले रहे हों और फिर बढ़कर क्रमशः शिशु तथा किशोर बनते हैं।

वयसो विविधत्वेऽपि सर्व-भक्ति-रसाश्रयः ।
धर्मी किशोर एवात्र नित्य-लीला-विलासवान् ॥ ३८० ॥

वयसो विविधत्वेऽपि सर्व-भक्ति-रसाश्रयः ।
धर्मी किशोर एवात्र नित्य-लीला-विलासवान् ॥ ३८० ॥

वयसः—आयु; **विविधत्वे**—विभिन्न; **अपि**—यद्यपि; **सर्व**—सब प्रकार के; **भक्ति-रस-आश्रयः**—भक्ति रस के आश्रय; **धर्मी**—जिनका स्वरूप स्वभाव; **किशोरः**—किशोर अवस्था; **एव**—निश्चित रूप से; **अत्र**—इसमें; **नित्य-लीला**—नित्य लीलाएँ; **विलास-वान्**—परम भोक्ता।

अनुवाद

"'पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् नित्य लीला-विलास करते हैं और वे सभी प्रकार की भक्ति के आश्रय हैं। यद्यपि उनकी अवस्थाएँ विविध हैं, किन्तु इनमें किशोर अवस्था (युवा-पूर्व) सर्वोत्तम है।'

तात्पर्य

यह श्लोक *भक्तिरसामृतसिन्धु* (२.१.६३) में आया है।

पूतना-वधादि यत लीला क्षणे क्षणे ।
सब लीला नित्य प्रकट करे अनुक्रमे ॥ ३८१ ॥

पूतना-वधादि ग्रत लीला क्षणे क्षणे ।
सब लीला नित्य प्रकट करे अनुक्रमे ॥ ३८१ ॥

पूतना-वध-आदि—पूतना जैसे असुरों का वध आदि; **ग्रत**—सभी; **लीला**—लीलाएँ; **क्षणे क्षणे**—एक के बाद दूसरे क्षण में; **सब लीला**—ये सभी लीलाएँ; **नित्य**—नित्य रूप से; **प्रकट**—प्रदर्शित; **करे**—करते हैं; **अनुक्रमे**—क्रमपूर्वक।

अनुवाद

"जब भगवान् कृष्ण प्रकट होते हैं, तो वे क्षण क्षण अपनी लीलाएँ प्रकट करते हैं—यथा पूतना-वध इत्यादि। ये सारी लीलाएँ एक के बाद एक शाश्वत रूप से प्रदर्शित की जाती हैं।

অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড, তার নাহিক গণন ।
কোন লীলা কোন ব্রহ্মাণ্ডে হয় প্রকটন ॥ ৩৮২ ॥

অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড, তার নাহিক গণন ।
কোন লীলা কোন ব্রহ্মাণ্ডে হয় প্রকটন ॥ ৩৮২ ॥

অনন্ত ব্রহ্মাণ্ড—असंख्य ब्रह्माण्ड; **তার**—जिनकी; **নাহিক গণন**—कोई गिनती नहीं; **কোন লীলা**—कुछ लीलाएँ; **কোন ব্রহ্মাণ্ডে**—किसी ब्रह्माण्ड में; **হয়**—होती हैं; **প্রকটন**—प्रकट।

अनुवाद

"कृष्ण की क्रमिक लीलाएँ क्षणानुक्षण अनन्त ब्रह्माण्डों में से किसी-न-किसी में प्रकट होती रहती हैं। इन ब्रह्माण्डों को गिन पाना सम्भव नहीं है, किन्तु तो भी इनमें से किसी-न-किसी ब्रह्माण्ड में भगवान् की कोई-न-कोई लीला प्रकट होती रहती है।

এই-মত সব লীলা—যেন গঙ্গা-ধার ।
সে-সে লীলা প্রকট করে ব্রজেন্দ্র-কুমার ॥ ৩৮৩ ॥

এই-মত সব লীলা—যেন গঙ্গা-ধার ।
সে-সে লীলা প্রকট করে ব্রজেন্দ্র-কুমার ॥ ৩৮৩ ॥

এই-মত—इस प्रकार; **সব লীলা**—सभी लीलाएँ; **যেন**—जैसे; **গঙ্গা-ধার**—गंगा के

जल का प्रवाह; **से-से**—वे; **लीला**—लीलाएँ; **प्रकट करे**—प्रदर्शित करते हैं; **व्रजेन्द्र-कुमार**—महाराज नन्द के पुत्र।

अनुवाद

"इस तरह भगवान् की लीलाएँ बहते गंगाजल के समान हैं। ये नन्द महाराज के पुत्र द्वारा इस प्रकार प्रकट की जाती हैं।

क्रमे बाल्य-पौगण्ड-कैशोरता-प्राप्ति ।
रास-आदि लीला करे, कैशोरे नित्य-स्थिति ॥ ३८४॥

क्रमे बाल्य-पौगण्ड-कैशोरता-प्राप्ति ।
रास-आदि लीला करे, कैशोरे नित्य-स्थिति ॥ ३८४॥

क्रमे—क्रमपूर्वक; **बाल्य**—बाल्यकाल; **पौगण्ड**—पौगण्ड; **कैशोरता**—किशोर अवस्था; **प्राप्ति**—विकास; **रास**—गोपियों के साथ नृत्य करना; **आदि**—आदि; **लीला**—लीलाएँ; **करे**—करते हैं; **कैशोरे**—किशोर अवस्था में; **नित्य-स्थिति**—नित्य रहकर।

अनुवाद

"भगवान् कृष्ण बाल्यकाल, पौगण्ड तथा किशोरावस्था की लीलाएँ प्रकट करते हैं। जब वे किशोर हो जाते हैं, तो वे अपना रासनृत्य तथा अन्य लीलाएँ करने के लिए शाश्वत रूप से विद्यमान रहते हैं।

तात्पर्य

यहाँ पर दी गई उपमा अत्यन्त रोचक है। कृष्ण सामान्य व्यक्ति की तरह नहीं बढ़ते, यद्यपि वे बाल्यकाल, पौगण्ड तथा किशोरावस्था की लीलाएँ प्रदर्शित करते हैं। जब वे किशोरावस्था (कैशोर) को प्राप्त हो जाते हैं, तो फिर वे और नहीं बढ़ते। वे अपनी किशोरावस्था में ही बने रहते हैं। इसलिए *ब्रह्म-संहिता* (५.३३) में उन्हें *नव-यौवन* कहा गया है :

अद्वैतमच्युतमनादिमनन्तरूपम्
आद्यं पुराणपुरुषं नवयौवनं च।
वेदेषु दुर्लभमदुर्लभमात्मभक्तौ
गोविन्दमादि पुरुषं तमहं भजामि॥

यह *नवयौवन* या कैशोर ही कृष्ण का सनातन दिव्य रूप है। कृष्ण नवयौवन से आगे कभी नहीं बढ़ते।

'नित्य-लीला' कृष्णेर सर्व-शास्त्रे कय ।
बुझिते ना पारे लीला केमने 'नित्य' हय ॥ ३८५ ॥

'नित्य-लीला' कृष्णेर सर्व-शास्त्रे कय ।
बुझिते ना पारे लीला केमने 'नित्य' हय ॥ ३८५ ॥

नित्य-लीला—नित्य लीलाएँ; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **सर्व-शास्त्रे कय**—सभी शास्त्रों में वर्णित हैं; **बुझिते ना पारे**—समझ नहीं सकते; **लीला**—लीलाएँ; **केमने**—किस प्रकार; **नित्य हय**—नित्य हैं।

अनुवाद

"समस्त प्रामाणिक शास्त्रों में कृष्ण की नित्य लीलाओं का वर्णन मिलता है। किन्तु कोई यह नहीं समझ सकता कि ये लीलाएँ किस तरह से सनातन रूप से चली आती हैं।

दृष्टान्त दिया कहि तबे लोक यदि जाने ।
कृष्ण-लीला—नित्य, ज्योतिश्चक्र-प्रमाणे ॥ ३८६ ॥

दृष्टान्त दिया कहि तबे लोक यदि जाने ।
कृष्ण-लीला—नित्य, ज्योतिश्चक्र-प्रमाणे ॥ ३८६ ॥

दृष्टान्त दिया—एक उदाहरण देकर; **कहि**—मैं कहता हूँ; **तबे**—तब; **लोक**—लोग; **यदि**—यदि; **जाने**—समझ सकते हैं; **कृष्ण-लीला**—भगवान् कृष्ण की लीलाएँ; **नित्य**—नित्य; **ज्योतिः-चक्र**—राशि चक्र के; **प्रमाणे**—प्रमाण द्वारा।

अनुवाद

"मैं एक दृष्टान्त देता हूँ, जिससे लोग भगवान् कृष्ण की सनातन लीलाओं को समझ सकें। इसका एक उदाहरण राशिचक्र में देखा जा सकता है।

ज्योतिश्चक्रे सूर्य येन फिरे रात्रि-दिने ।
सप्त-द्वीपाम्बुधि लङ्घि' फिरे क्रमे क्रमे ॥ ३८७ ॥

ज्योतिश्चक्रे सूर्य्य येन फिरे रात्रि-दिने ।
सप्त-द्वीपाम्बुधि लङ्घि' फिरे क्रमे क्रमे ॥ ३८७ ॥

ज्योतिः-चक्रे—राशिचक्र में; **सूर्य्य**—सूर्य; **येन**—जिस प्रकार; **फिरे**—घूमता है; **रात्रि-दिने**—दिन रात; **सप्त-द्वीप-अम्बुधि**—सात द्वीपों के समुद्र; **लङ्घि'**—पार करके; **फिरे**—घूमता है; **क्रमे क्रमे**—क्रमपूर्वक।

अनुवाद

"सूर्य रात-दिन राशिचक्र से होकर घूमता है और सात द्वीपों के मध्य के सागरों को बारी-बारी से पार करता है।

रात्रि-दिने हय षष्टि-दण्ड-परिमाण ।
तिन-सहस्र छय-शत 'पल' तार मान ॥३८८॥

रात्रि-दिने हय षष्टि-दण्ड-परिमाण ।
तिन-सहस्र छय-शत 'पल' तार मान ॥ ३८८॥

रात्रि-दिने—सारे दिन और रात के दौरान; **हय**—होता है; **षष्टि-दण्ड**—छः दण्ड (समय का माप); **परिमाण**—अवधि; **तिन-सहस्र**—तीन हजार; **छय-शत**—छह सौ; **पल**—पल; **तार**—उसका; **मान**—माप।

अनुवाद

"वैदिक ज्योतिष गणना के अनुसार सूर्य साठ दण्डों में चक्कर पूरा करता है, और यह तीन हजार छह सौ पलों में विभाजित है।

सूर्योदय हैते षष्टि-पल-क्रमोदय ।
सेई एक दण्ड, अष्ट दण्डे 'प्रहर' हय ॥३८९॥

सूर्य्योदय हैते षष्टि-पल-क्रमोदय ।
सेइ एक दण्ड, अष्ट दण्डे 'प्रहर' हय ॥ ३८९॥

सूर्य्य-उदय हैते—सूर्योदय होने पर; **षष्टि-पल**—साठ पल; **क्रम-उदय**—क्रमशः उठते जाते हैं; **सेइ**—वह; **एक दण्ड**—एक दण्ड; **अष्ट दण्डे**—आठ दण्ड में; **प्रहर हय**—एक प्रहर होता है।

अनुवाद

"सूर्य क्रमशः साठ पलों में उदय होता है। साठ पल एक दण्ड के बराबर होते हैं और आठ दण्ड का एक प्रहर होता है।

এক-দুই-তিন-চারি প্রহরে অস্ত হয় ।
চারি-প্রহর রাত্রি গেলে পুনঃ সূর্যোদয় ॥ ৩৯০ ॥

एक-दुइ-तिन-चारि प्रहरे अस्त हय ।
चारि-प्रहर रात्रि गेले पुनः सूर्य्योदय ॥ ३९० ॥

एक-दुइ-तिन-चारि—एक, दो, तीन, चार; **प्रहरे**—प्रहरों में; **अस्त हय**—सूर्य शाम को ढल जाता है; **चारि-प्रहर**—सामान्यतया चार प्रहरों के बाद; **रात्रि**—रात; **गेले**—जब बीत जाती है; **पुनः**—फिर; **सूर्य्योदय**—सूर्य उगता है।

अनुवाद

"रात और दिन आठ प्रहरों में विभाजित हैं। चार प्रहर दिन के हैं तो चार प्रहर रात के। आठ प्रहर के बाद सूर्य पुनः उदय होता है।

ঐছে কৃষ্ণের লীলা-মণ্ডল চৌদ্দ-মন্বন্তরে ।
ব্রহ্মাণ্ড-মণ্ডল ব্যাপি' ক্রমে ক্রমে ফিরে ॥ ৩৯১ ॥

ऐछे कृष्णेर लीला-मण्डल चौद्द-मन्वन्तरे ।
ब्रह्माण्ड-मण्डल व्यापि' क्रमे क्रमे फिरे ॥ ३९१ ॥

ऐछे—इसी प्रकार; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण की; **लीला-मण्डल**—लीलाओं के भण्डार; **चौद्द-मन्वन्तरे**—चौदह मनुओं के काल में; **ब्रह्माण्ड-मण्डल**—सारे ब्रह्माण्डों में; **व्यापि'**—व्याप्त होकर; **क्रमे क्रमे**—क्रमपूर्वक; **फिरे**—वापस आती है।

अनुवाद

"सूर्य की ही तरह कृष्ण की लीलाओं का कक्ष है। ये लीलाएँ एक के बाद एक प्रकट होती हैं। चौदह मन्वन्तरों में यह कक्ष समस्त ब्रह्माण्ड तक विस्तार करता है और क्रमशः फिर से लौट आता है। इस तरह कृष्ण अपनी लीलाओं के माध्यम से एक एक करके सारे ब्रह्माण्डों में विचरण करते हैं।

সওয়াশত বৎসর কৃষ্ণের প্রকট-প্রকাশ ।
তাহা যৈছে ব্রজ-পুরে করিলা বিলাস ॥ ৩৯২ ॥

सओयाशत वत्सर कृष्णेर प्रकट-प्रकाश ।
ताहा य्रैछे व्रज-पुरे करिला विलास ॥ ३९२ ॥

सओयाशत—१२५; **वत्सर**—साल; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **प्रकट-प्रकाश**—प्राकट्य के प्रकाश; **ताहा**—वह; **यैछे**—जैसे; **व्रज-पुरे**—वृन्दावन तथा द्वारका में; **करिला विलास**—लीलाओं का आनन्द लेते हैं।

अनुवाद

"कृष्ण किसी एक ब्रह्माण्ड में १२५ वर्षों तक रहते हैं और अपनी लीलाओं का आनन्द वृन्दावन तथा द्वारका दोनों में लेते हैं।

अलात-चक्र-प्राय सेइ लीला-चक्र फिरे ।
सब लीला सब ब्रह्माण्डे क्रमे उदय करे ॥ ३९३ ॥

अलात-चक्र-प्राय सेइ लीला-चक्र फिरे ।
सब लीला सब ब्रह्माण्डे क्रमे उदय करे ॥ ३९३ ॥

अलात-चक्र-प्राय—अग्नि के एक चक्र के समान; **सेइ**—वह; **लीला-चक्र**—कृष्ण की लीलाओं का चक्र; **फिरे**—घूमता है; **सब लीला**—ये सारी लीलाएँ; **सब ब्रह्माण्डे**—सारे ब्रह्माण्डों में; **क्रमे**—क्रमपूर्वक; **उदय करे**—प्रकट होती हैं।

अनुवाद

"उनकी लीलाओं का चक्र अग्निचक्र के समान है। इस तरह से कृष्ण एक एक करके अपनी लीलाएँ हर ब्रह्माण्ड में प्रकट करते हैं।

जन्म, बाल्य, पौगण्ड, कैशोर प्रकाश ।
पूतना-वधादि करि' मौषलान्त विलास ॥ ३९४ ॥

जन्म, बाल्य, पौगण्ड, कैशोर प्रकाश ।
पूतना-वधादि करि' मौषलान्त विलास ॥ ३९४ ॥

जन्म—जन्म; **बाल्य**—बचपन; **पौगण्ड**—पौगण्ड; **कैशोर**—किशोर अवस्था; **प्रकाश**—प्रदर्शन; **पूतना-वध-आदि**—पूतना आदि असुरों का वध; **करि'**—प्रकट करके; **मौषल-अन्त**—मौषल लीला की समाप्ति तक; **विलास**—लीलाएँ।

अनुवाद

"कृष्ण के जन्म, बाल्यकाल, पौगण्ड तथा किशोरावस्था की लीलाएँ पूतना-वध से लेकर मौषल-लीला, अर्थात् यदु-वंश के नाश तक प्रकट होती हैं। ये सारी लीलाएँ प्रत्येक ब्रह्माण्ड में चक्कर लगाती रहती हैं।

কোন ব্রহ্মাণ্ডে কোন লীলার হয় অবস্থান ।
তাতে লীলা 'নিত্য' কহে আগম-পুরাণ ॥৩৯৫॥

कोन ब्रह्माण्डे कोन लीलार हय अवस्थान ।
ताते लीला 'नित्य' कहे आगम-पुराण ॥ ३९५ ॥

कोन ब्रह्माण्डे—कुछ ब्रह्माण्डों में; **कोन लीलार**—कुछ लीलाएँ; **हय**—होती हैं; **अवस्थान**—प्रकट; **ताते**—अत:; **लीला**—लीलाएँ; **नित्य**—नित्य; **कहे**—कहते हैं; **आगम-पुराण**—वेद और पुराण।

अनुवाद

"चूँकि कृष्ण की सारी लीलाएँ लगातार घटित होती रहती हैं, अतएव प्रत्येक क्षण कोई लीला किसी-न-किसी ब्रह्माण्ड में विद्यमान रहती है। फलतः वेद तथा पुराण इन्हें नित्य लीला कहते हैं।

গোলোক, গোকুল-ধাম—'বিভু' কৃষ্ণ-সম ।
কৃষ্ণেচ্ছায় ব্রহ্মাণ্ড-গণে তাহার সঙ্ক্রম ॥৩৯৬॥

गोलोक, गोकुल-धाम—'विभु' कृष्ण-सम ।
कृष्णेच्छाय ब्रह्माण्ड-गणे ताहार सङ्क्रम ॥ ३९६ ॥

गोलोक—गोलोक नामक लोक; **गोकुल-धाम**—सुरभि गायों के चरने का स्थान, आध्यात्मिक जगत्; **विभु**—ऐश्वर्यपूर्ण तथा शक्तिमान; **कृष्ण-सम**—कृष्ण के समान ही; **कृष्ण-इच्छाय**—कृष्ण की परम इच्छा द्वारा; **ब्रह्माण्ड-गणे**—प्रत्येक ब्रह्माण्ड में; **ताहार**—गोलोक तथा गोकुल धामों का; **सङ्क्रम**—प्राकट्य।

अनुवाद

"गोलोक नामक आध्यात्मिक धाम, जो सुरभि गौवों की चारण भूमि है, कृष्ण के ही समान शक्तिशाली तथा ऐश्वर्यमय है। कृष्ण की इच्छा से मूल गोलोक तथा गोकुल धाम उनके साथ-साथ सारे ब्रह्माण्डों में प्रकट होते हैं।

অতএব গোলোক-স্থানে নিত্য বিহার ।
ব্রহ্মাণ্ড-গণে ক্রমে প্রাকট্য তাহার ॥৩৯৭॥

अतएव गोलोक-स्थाने नित्य विहार ।
ब्रह्माण्ड-गणे क्रमे प्राकट्य ताहार ॥ ३९७ ॥

अतएव—इसलिए; **गोलोक-स्थाने**—मूल गोलोक-वृन्दावन ग्रह में; **नित्य विहार**—नित्य लीलाएँ; **ब्रह्माण्ड-गणे**—भौतिक ब्रह्माण्डों में; **क्रमे**—क्रमपूर्वक; **प्राकट्य**—प्रदर्शन; **ताहार**—उनका।

अनुवाद

"कृष्ण की नित्य लीलाएँ मूल गोलोक-वृन्दावन ग्रह में निरन्तर चलती रहती हैं। यही लीलाएँ भौतिक जगत् में प्रत्येक ब्रह्माण्ड में क्रमशः प्रकट होती हैं।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर कृष्ण-लीलाओं की इस जटिल व्याख्या को स्पष्ट करते हैं। कृष्ण की लीलाएँ भौतिक जगत् में अनेक ब्रह्माण्डों में से किसी एक ब्रह्माण्ड में सदैव चलती रहती हैं। ये लीलाएँ क्रम से विविध ब्रह्माण्डों में एक के बाद दूसरी प्रकट होती हैं, जिस तरह सूर्य आकाश से होकर गति करता हुआ समय की माप करता है। इस ब्रह्माण्ड में कृष्ण का जन्म किसी क्षण हो सकता है, किन्तु उनके जन्म के तुरन्त बाद यही लीला दूसरे ब्रह्माण्ड में प्रकट हो सकती है। इस ब्रह्माण्ड में पूतना-वध की लीला प्रदर्शित किए जाने के बाद वही लीला किसी दूसरे ब्रह्माण्ड में प्रदर्शित होती है। इस तरह कृष्ण की सारी लीलाएँ आदि गोलोक-वृन्दावन ग्रह पर तथा समस्त भौतिक ब्रह्माण्डों में शाश्वत रूप से दिखती हैं। हमारी सौर गणना के १२५ वर्ष कृष्ण के जीवन के एक क्षण के तुल्य हैं। ये लीलाएँ एक क्षण एक ब्रह्माण्ड में प्रकट होती हैं तो दूसरे क्षण उसके आगे वाले ब्रह्माण्ड में। ब्रह्माण्ड अनन्त हैं और कृष्ण की लीलाएँ हर क्षण उनमें प्रकट होती रहती हैं। लीलाओं का यह चक्र आकाश-मार्ग में सूर्य के विचरण के माध्यम से बतलाया जाता है। कृष्ण इन असंख्य ब्रह्माण्डों में प्रकट तथा अप्रकट होते रहते हैं, जिस तरह सूर्य दिन में उदय और अस्त होता रहता है। यद्यपि सूर्य उदय और अस्त होता हुआ प्रतीत होता है, किन्तु वह पृथ्वी में कहीं-न-कहीं चमकता रहता है। इसी तरह यद्यपि कृष्ण की लीलाएँ प्रकट तथा अप्रकट होती प्रतीत होती हैं, किन्तु

वे किसी-न-किसी ब्रह्माण्ड में निरन्तर विद्यमान रहती हैं। इस तरह कृष्ण की समस्त लीलाएँ एकसाथ अनन्त ब्रह्माण्डों में चलती रहती हैं। हम अपनी सीमित इन्द्रियों से इन्हें जान नहीं पाते; इसलिए कृष्ण की सनातन लीलाओं को समझ पाना हमारे लिए अत्यन्त कठिन है। सूर्य के दृष्टान्त द्वारा उन्हें समझने का प्रयास किया जाना चाहिए। यद्यपि भगवान् निरन्तर भौतिक ब्रह्माण्डों में प्रकट होते रहते हैं, किन्तु उनकी लीलाएँ आदि गोलोक वृन्दावन में सदैव चलती रहती हैं। इसीलिए इन्हें *नित्य लीला* (शाश्वत रूप से चलने वाली) कहा जाता है। चूँकि हम यह नहीं देख पाते कि अन्य ब्रह्माण्डों में क्या हो रहा है, अतएव हमारे लिए यह समझ पाना थोड़ा कठिन है कि कृष्ण किस तरह अपनी लीलाओं को नित्य प्रकट करते हैं। ब्रह्मा के एक दिन में चौदह मनु होते हैं और यही काल गणना अन्य ब्रह्माण्डों में भी चलती है। कृष्ण की लीलाएँ चौदह मनुओं की मृत्यु के पूर्व प्रकट हो लेती हैं। यद्यपि इस प्रकार से कृष्ण की सनातन लीलाओं को समझना कुछ कठिन है, किन्तु हमें वैदिक ग्रन्थों के निर्णय को स्वीकार करना होगा।

भक्त दो प्रकार के होते हैं—*साधक* तथा *सिद्ध*। साधक वे हैं, जो पूर्णता के लिए तैयारी करते हैं और सिद्ध वे हैं, जिन्हें पहले ही पूर्णता प्राप्त हो चुकी है। जहाँ तक सिद्धों का सम्बन्ध है *भगवद्गीता* (४.९) में भगवान् कृष्ण कहते हैं कि—*त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन*—"ऐसा भक्त इस भौतिक शरीर को त्यागकर मेरे पास आता है।" इस शरीर को त्यागने के बाद सिद्ध भक्त उस लोक में गोपी के गर्भ से जन्म लेता है, जहाँ कृष्ण-लीलाएँ चलती होती हैं। यह इसी ब्रह्माण्ड में हो सकता है या फिर किसी अन्य ब्रह्माण्ड में। यह कथन *उज्ज्वल नीलमणि* में पाया जाता है, जिसकी टीका विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने की है। जब भक्त पूर्ण हो जाता है, तब उसे उस ब्रह्माण्ड में स्थानांतरित किया जाता है, जहाँ कृष्ण की लीलाएँ चलती होती हैं। जहाँ कहीं कृष्ण की लीलाएँ प्रकट होती हैं, वहीं कृष्ण के नित्य संगी जाते हैं। जैसाकि पहले कहा जा चुका है, सर्वप्रथम कृष्ण के माता-पिता प्रकट होते हैं, तब उनके अन्य संगी। इस भौतिक शरीर को त्यागने के बाद पूर्ण भक्त भी कृष्ण तथा उनके अन्य संगियों से जा मिलता है।

ব্রজে কৃষ্ণ—সর্বৈশ্বর্য-প্রকাশে 'পূর্ণতম' ।
পুরী-দ্বয়ে, পরব্যোমে—'পূর্ণতর', 'পূর্ণ' ॥৩৯৮॥

व्रजे कृष्ण—सर्वैश्वर्य-प्रकाशे 'पूर्णतम' ।
पुरी-द्वये, परव्योमे—'पूर्णतर', 'पूर्ण' ॥ ३९८ ॥

व्रजे—वृन्दावन में; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **सर्व-ऐश्वर्य-प्रकाशे**—अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्यों का प्रकाश; **पूर्ण-तम**—सम्पूर्ण रूप से; **पुरी-द्वये**—द्वारका तथा मथुरा में; **पर-व्योमे**—तथा आध्यात्मिक जगत् में; **पूर्ण-तर**—और अधिक पूर्ण; **पूर्ण**—सम्पूर्ण।

अनुवाद

"आध्यात्मिक आकाश (वैकुण्ठ) में कृष्ण पूर्ण होते हैं। मथुरा तथा द्वारका में वे और अधिक पूर्ण (पूर्णतर) होते हैं, किन्तु अपना सारा ऐश्वर्य प्रकट करने के कारण वे वृन्दावन, व्रज में सर्वाधिक पूर्ण (पूर्णतम) होते हैं।

तात्पर्य

इसकी पुष्टि *भक्तिरसामृतसिन्धु* के निम्नलिखित तीन श्लोकों (२.१.२२१-२२३) द्वारा होती है।

হরিঃ পূর্ণতমঃ পূর্ণ-তরঃ পূর্ণ ইতি ত্রিধা ।
শ্রেষ্ঠ-মধ্যাদিভিঃ শব্দৈর্নাট্যে যঃ পরিপঠ্যতে ॥৩৯৯॥

हरिः पूर्णतमः पूर्ण-तरः पूर्ण इति त्रिधा ।
श्रेष्ठ-मध्यादिभिः शब्दैर्नाट्ये यः परिपठ्यते ॥ ३९९ ॥

हरिः—भगवान् कृष्ण; **पूर्ण-तमः**—सर्वाधिक सम्पूर्ण; **पूर्ण-तरः**—अधिक पूर्ण; **पूर्णः**—पूर्ण; **इति**—इस तरह; **त्रिधा**—तीन अवस्थाओं से; **श्रेष्ठ**—श्रेष्ठ; **मध्य-आदिभिः**—मध्य आदि; **शब्दैः**—शब्दों द्वारा; **नाट्ये**—नाटक की पुस्तकों में; **यः**—जो; **परिपठ्यते**—सूचित होता है।

अनुवाद

"'नाट्य ग्रन्थों में इसे पूर्ण, पूर्णतर तथा पूर्णतम कहा गया है। इस तरह भगवान् कृष्ण अपने आपको पूर्ण, पूर्णतर तथा पूर्णतम—इन तीन प्रकारों से प्रकट करते हैं।

প্রকাশিতাখিল-গুণঃ স্মৃতঃ পূর্ণতমো বুধৈঃ ।
অসর্ব-ব্যঞ্জকঃ পূর্ণ-তরঃ পূর্ণোঽল্প-দর্শকঃ ॥৪০০॥

प्रकाशिताखिल-गुणः स्मृतः पूर्णतमो बुधैः ।
असर्व-व्यञ्जकः पूर्ण-तरः पूर्णोऽल्प-दर्शकः ॥ ४०० ॥

प्रकाशित-अखिल-गुणः—सभी दिव्य गुणों का प्रदर्शन करके; **स्मृतः**—जाने जाते हैं; **पूर्ण-तमः**—सर्वाधिक सम्पूर्ण; **बुधैः**—विद्वानों द्वारा; **असर्व-व्यञ्जकः**—सभी गुणों का प्राकट्य न करके; **पूर्ण-तरः**—अधिक पूर्ण; **पूर्णः**—पूर्ण; **अल्प-दर्शकः**—और भी कम प्रकट करके।

अनुवाद

"'जब पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् अपने समस्त गुणों को प्रदर्शित नहीं करते होते, तब वे पूर्ण कहलाते हैं। जब वे सारे गुणों को अपूर्ण रूप से प्रकट करते हैं, तब वे पूर्णतर कहलाते हैं। जब वे सारे गुणों को पूरी तरह से प्रकट करते हैं, तब वे पूर्णतम कहलाते हैं। भक्तियोग के समस्त विद्वानों का यह कथन है।

कृष्णस्य पूर्णतमता व्यक्ताभूदेगाकुलान्तरे ।
पूर्णता पूर्णतरता द्वारका-मथुरादिषु ॥ ४०१ ॥

कृष्णस्य पूर्णतमता व्यक्ताभूद्गोकुलान्तरे ।
पूर्णता पूर्णतरता द्वारका-मथुरादिषु ॥ ४०१ ॥

कृष्णस्य—भगवान् कृष्ण की; **पूर्ण-तमता**—सर्वाधिक सम्पूर्णता; **व्यक्ता**—प्रकट होती है; **अभूत्**—हो गये; **गोकुल-अन्तरे**—गोकुल में; **पूर्णता**—पूर्णता; **पूर्ण-तरता**—अधिक पूर्णता; **द्वारका**—द्वारका में; **मथुरा-आदिषु**—तथा मथुरा आदि में।

अनुवाद

"'कृष्ण के पूर्णतम गुण वृन्दावन में और उनके पूर्ण तथा पूर्णतर गुण द्वारका तथा मथुरा में प्रकट होते हैं।'

एই কৃষ্ণ—ব্রজে 'পূর্ণতম' ভগবান্ ।
আর সব স্বরূপ—'পূর্ণতর' 'পূর্ণ' নাম ॥ ৪০২ ॥

এই কৃষ্ণ—ব্রজে 'পূর্ণতম' ভগবান্ ।
আর সব স্বরূপ—'পূর্ণতর' 'পূর্ণ' নাম ॥ ৪০২ ॥

এই কৃষ্ণ—वही कृष्ण; **ব্রজে**—वृन्दावन में; **পূর্ণ-তম ভগবান্**—सर्वाधिक सम्पूर्ण पूर्ण

पुरुषोत्तम भगवान् का प्राकट्य; **आर**—अन्य; **सब**—सभी; **स्वरूप**—स्वरूप; **पूर्ण-तर**—अधिक पूर्ण; **पूर्ण**—पूर्ण; **नाम**—नामक।

अनुवाद

"वृन्दावन में भगवान् कृष्ण, पूर्णतम भगवान् हैं। अन्यत्र उनके विस्तार या तो पूर्ण हैं या पूर्णतर हैं।

सङ्क्षेपे कहिलुँ कृष्णेर स्वरूप-विचार ।
'अनन्त' कहिते नारे इहार विस्तार ॥ ४०३ ॥
सङ्क्षेपे कहिलुँ कृष्णेर स्वरूप-विचार ।
'अनन्त' कहिते नारे इहार विस्तार ॥ ४०३ ॥

सङ्क्षेपे—संक्षेप में; **कहिलुँ**—मैंने वर्णन किया है; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **स्वरूप-विचार**—स्वरूप तथा आकृतियों के विचार; **अनन्त**—भगवान् अनन्त; **कहिते नारे**—वर्णन नहीं कर सकते; **इहार**—इसका; **विस्तार**—विस्तार।

अनुवाद

"इस तरह मैंने कृष्ण के दिव्य स्वरूपों के प्राकट्य का संक्षिप्त वर्णन किया है। यह विषय इतना विस्तृत है कि भगवान् अनन्त भी पूर्णरूप से इसका वर्णन नहीं कर सकते।

अनन्त स्वरूप कृष्णेर नाहिक गणन ।
शाखा-चन्द्र-न्यायें करि दिग्दरशन ॥ ४०४ ॥
अनन्त स्वरूप कृष्णेर नाहिक गणन ।
शाखा-चन्द्र-न्याये करि दिग्दरशन ॥ ४०४ ॥

अनन्त—असंख्य; **स्वरूप**—स्वरूप; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **नाहिक गणन**—कोई गिनती नहीं है; **शाखा-चन्द्र-न्याये**—एक वृक्ष की शाखाओं के बीच में से चन्द्रमा दिखाने के न्याय द्वारा; **करि**—मैं कराता हूँ; **दिक्-दरशन**—केवल आँशिक दर्शन।

अनुवाद

"इस प्रकार कृष्ण के दिव्य रूपों का अनन्त विस्तार हुआ है। कोई भी उनकी गणना नहीं कर सकता। मैंने जो कुछ बतलाया है, वह मात्र एक झलक है। यह उसी तरह है, जैसाकि किसी वृक्ष की शाखाओं में से होकर चाँद को दिखलाना।"

इहा येइ शुने, पड़े, सेइ भाग्यवान् ।
कृष्णेर स्वरूप-तत्त्वेर हय किछु ज्ञान ॥ ४०५ ॥

इहा येइ शुने, पड़े, सेइ भाग्यवान् ।
कृष्णेर स्वरूप-तत्त्वेर हय किछु ज्ञान ॥ ४०५ ॥

इहा—यह वर्णन; **येइ शुने**—जो कोई सुनता है; **पड़े**—या पढ़ता है; **सेइ**—ऐसा व्यक्ति; **भाग्यवान्**—सर्वाधिक सौभाग्यशाली है; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **स्वरूप-तत्त्वेर**—शारीरिक स्वरूपों का; **हय**—हो जाता है; **किछु**—कुछ; **ज्ञान**—ज्ञान।

अनुवाद

"जो भी कृष्ण के शरीर के विस्तारों के इन विवरणों को सुनता है या सुनाता है, वह निश्चित रूप से अत्यन्त भाग्यवान है। यद्यपि इसे समझ पाना बहुत कठिन है, किन्तु इससे कृष्ण के शरीर के विभिन्न स्वरूपों का कुछ न कुछ ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ ४०६ ॥

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ ४०६ ॥

श्री-रूप—श्रील रूप गोस्वामी के; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी के; **पदे**—चरणकमलों में; **यार**—जिनकी; **आश**—आशा है; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* नामक ग्रन्थ; **कहे**—वर्णन करता है; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए, सदैव उनकी कृपा का इच्छुक, मैं कृष्णदास उनके चरणचिह्नों का अनुगमन करते हुए श्री चैतन्य-चरितामृत कह रहा हूँ।

इस प्रकार श्रीचैतन्य-चरितामृत मध्यलीला के बीसवें अध्याय का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ, जिसमें बनारस में सनातन गोस्वामी द्वारा महाप्रभु से भेंट करने और परम सत्य विषयक ज्ञान प्राप्त करने का वर्णन हुआ है।